अभिनव गद्य गरिमा

बी.ए.-II हिन्दी (अनिवार्य)

B.A.-II Hindi (Compulsory)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक–124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय-सूची

अध्याय 1	पुरूष और परमेश्वर	5
अध्याय 2	बयालीस के ज्वार की लहरों में	12
अध्याय 3	रूपहला धुआँ	19
अध्याय 4	माधव प्रसाद मिश्र के पत्र	28
अध्याय 5	प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी	41
अध्याय 6	श्री माखन लाल चतुर्वेदी	54
अध्याय 7	नीड़ का निर्माण फिर	66
अध्याय 8	कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण मेला	79
अध्याय 9	मलयज की डायरी	89

बी.ए.-II हिन्दी (अनिवार्य)

अभिनव गद्य गरिमा

पूर्णांकः 100

समयः 3 घंटे

गद्य की निर्धारित ''अभिनव गद्य गरिमा'' संज्ञक पुस्तक कु०वि. के विभागाध्यक्ष द्वारा तैयार कराई जाएगी। इस पुस्तक की यथासमय संपादित/प्रकाशित कर उपलब्ध कराने का दायित्व संबंद्ध विभागाध्यक्ष का होगा।

निर्देशः

1. काव्य पुस्तक से व्याख्या के लिए चार पद्यावतरण पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो की व्याख्या करनी होगी। प्रत्येक व्याख्या आठ अंकों की होगा। पूरा प्रश्न 16 अंकों का होगा।
2. काव्य पुस्तक से संबंधित किन्हीं तीन कवियों का साहित्यिक परिचय पूछा जाएगा जिनमें से परिक्षार्थियों को किसी एक का उत्तर देना होगा। यह प्रश्न 10 अंकों का होगा।
3. अंधेर नगरी से चार लघुत्तरी प्रश्न पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 6 अंकों का होगा।
4. ''जहाज का पंछी'' उपन्यास से चार आलोचनात्मक प्रश्न पूछे जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 10 अंकों का होगा।
5. ''अभिनव गद्य गरिमा'' से चार गद्यांश पूछ जाएंगे जिनमें से परिक्षार्थियों को दो की सप्रसंग व्याख्या करनी होगी। प्रत्येक व्याख्या 8 अंकों की होगी। इनमें 4 लघुत्तरी प्रश्न पूछे जाएंगे। जिनमें से परिक्षार्थियों को किन्हीं दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 5+5 अंकों का होगा।
6. आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहस से दस प्रश्न अति लघुत्तरी पूछे जाएंगे। जिनमें से परिक्षार्थियों को 8 प्रश्नों का उत्तर देना होगा। प्रत्येक का उत्तर लगभग 150 शब्दों में देना होगा। प्रत्येक प्रश्न 2 अंकों का होगा। पूरा प्रश्न 16 अंकों का होगा।

अध्याय–1
पुरूष और परमेश्वर

रामवृक्ष बेनीपुरी

खण्ड क–पाठ सार

रामवृक्ष बेनीपुरी ने अपने निबंध 'पुरुष और परमेश्वर' में पुरुष के पुरुषार्थ तथा परमात्मा के परम तत्त्व का अंकन करते हुए बताया है कि प्राचीन काल से ही मनुष्य के मन में परमेश्वर के प्रति असीम श्रद्धा रही है अपनी इस श्रद्धा को व्यक्त करने के लिए उसने एक के स्थान पर अनेक भगवानों की खोज कर रही हैं। जब भी उसे कहीं किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव होता है, वह अपने किसी न किसी भगवान् को स्मरण कर लेता है, जैसे वर्षा न होने पर भगवान् से वर्षा करने के लिए प्रार्थना करना अथवा युद्धभूमि में भय से अपने प्राणों की रक्षा के लिए उसका अपने भगवान् से रक्षा करने की प्रार्थना करना। बेनीपुरी की मान्यता है कि मनुष्य सर्वाधिक चितंनशील प्राणी है और वह जैसा सोचता है, संसार को उसी के अनुरूप बना लेता है। इस प्रकार वह विचारों के अनुकूल संसार की सृष्टि करता है। इस दृष्टि से मनुष्य समाज के विचार, समाज की आत्मा और समाज का दृष्टिकोण ही परमेश्वर के निर्माण के रूप में अपनी अपार प्राकृतिक शक्ति का भी परिचय देता है, किन्तु मानव की श्रेष्ठता तभी है जब वह मानव निर्माता के रूप में अपना परिचय दे। उसे मनुष्य जाति के विकास के लिए अपने मस्तिष्क का पूर्ण विकास करने की आवश्यकता है। मनुष्य को चाहिए कि वह शोधक, अन्वेषक, कवि, दार्शनिक और सुधारक के रूप में मानव को मानवबल प्रदान करे। यह कार्य उसके लिए कठिन नहीं है, क्योंकि उसकी शक्तियों के सामने छप्पन कोटि देव और देवादि देव भगवान् भी नतमस्तक हैं।

मनुष्य के सामने विस्तृत संसार में अनेक सुनहले स्वप्न हैं जिनमें से एक सपना यह है कि वह सुन्दर कार्य करे। मनुष्य के इस सुनहले सपने का नाम ही जीवन हैं इस जीवन के लिए मनुष्य को सरल स्वभाव अपनाना पड़ेगा। जिससे उसके विचार सरल और अनुभूति सहज हो सके। लेखक आज के समाज में इसी प्रकार के मनुष्यों की कामना करता है जो समाज को असामयिक मृत्यु से बचा सके। उसे आशा है कि ऐसा केवल पुरुष के महान् पुरुषार्थ से ही संभव हो सकता है।

खण्ड ख : व्याख्या

'आदमी पर अविश्वास, भगवान् में विश्वास। किन्तु, जब आदमी पर विश्वास
नहीं, तो भगवान् पर कैसे विश्वास हो? क्योंकि भगवान् और आदमी आखिर
एक ही सिक्के दो रूप हैं न!
मानव कल्पना का ही रहस्यवादी प्रतीक है भगवान् की कल्पना।
विशुद्ध भगवान् का अर्थ है, विशुद्ध मानव।
स्वप्न भगवान् का अर्थ है, स्वप्न मानव।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा रचित रेखाचित्र 'पुरुष और परमेश्वर' से लिया गया है जिसमें लेखक ने पुरुष के पुरुषार्थ और परमात्मा के परम तत्त्व का अंकन किया है और मानव को परमात्मा का अंश माना है।

व्याख्या–प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने कहा है कि किस प्रकार प्राचीनकाल से मनुष्य परमेश्वर पर विश्वास तथा असीम श्रद्धा रखता आया है। इसी श्रद्धा के कारण उसने आदमी पर विश्वास करना छोड़ दिया है क्योंकि उसका विश्वास भगवान् में अधिक हो गया है। इस पर लेखक यह प्रश्न उठाता है कि जो आदमी पर विश्वास नहीं कर सकता, वह भगवान् पर कैसे विश्वास करेगा। भगवान् और आदमी अलग–अलग नहीं हैं। वे दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यों भी कहा जा सकता है कि पुरुष ईश्वर का दूसरा रूप है एवं एक के बिना दूसरे की सत्ता नहीं है। मनुष्य ने भगवान् की रहस्यमयी कल्पना की है। यह कल्पना

उसकी प्रतीक बन गई। इस तरह विशुद्ध भगवान् का विशुद्ध रूप पुरुष है और स्वप्न भगवान् का स्वप्न मानव है। अतः आदमी जैसा सोचता है संसार के अनुरूप बन जाता है क्योंकि मनुष्य अपनी सोच के अनुसार ही अपने जीवन को बनाता अथवा बिगाड़ता है। इसी प्रकार वह अपने परमेश्वर की भी कल्पना स्वयं अपने विचारों के अनुरूप ही करता है।

विशेषः–

1. बिना इन्सान पर विश्वास किए हमें परमेश्वर के अस्तित्व पर भी विश्वास नहीं हो सकता।
2. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली भावपूर्ण काव्यमय है।
3. सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

मानव–विचार में असीम बल है। आदमी जैसा सोचता है, संसार को उसी के अनुरूप ढलना होता है। वह संसार को अपने निकट बुलाता है, उस पर अपना मंत्र पढ़ता हैं, संसार उसके सामने करबद्ध प्रार्थी होता है। अपने विचार–बल से मानव संसार की सृष्टि करता है।

शब्दार्थ– असीम = बहुत अधिक, जिसकी कोई सीमा न हो। करबद्ध = हाथ जोड़ कर।

प्रसंग– प्रस्तुत गंद्याश रामवृक्ष बेनी पुरी द्वारा रचित रेखाचित्र 'पुरुष और परमेश्वर' से ली गयी है जिसमें लेखक ने पुरुष के पुरुषार्थ और परमात्मा के परम तत्त्व का अंकन किया है और मानव को परमात्मा का अंश माना है।

व्याख्या– इन पंक्तियों में लेखक कहता है कि इस संसार में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। वह सोचता है, विचारता है और उसे व्यावहारिक रूप दे देता है। इस दृष्टि से उसके विचारों में असीम बल है। वह असीमित कल्पना करता है। लेखक के विचार में आदमी जैसा सोचता है संसार भी उसी के अनुसार ढलता जाता है। मनुष्य में वह शक्ति है कि संसार उसकी ओर खिंचा चला जाता है। वह लोगों को मोहित कर लेता है, वह उन पर अपना ऐसा प्रभाव जमाता है कि सारा संसार उसके सामने, उसकी बुद्धि के सामने हाथ जोड़ कर खड़ा रहता है। मनुष्य अपने विचार बल से इस संसार की सृष्टि करता है और परमेश्वर के समान जैसा चाहता है वैसे ही इस संसार को नचाता रहता है।

विशेष–

1. लेखक ने पुरुष की शक्ति, सामर्थ्य और पुरुषार्थ की चर्चा की है, जिनके बल पर वह सृष्टि का निर्माण और संचालन कर सकता है।
2. भाषा तत्सम प्रधान शैली विचारात्मक है।
3. चिंतन प्रधान निबंध है।

जब तक मानव स्वयं मानव के संहार में लीन है, वह ऐसे भगवान् की सृष्टि करेगा ही, जो संहारकर्त्ता है। कर्त्ता और भर्त्ता के रूप में भी वह भगवान् बनाता है, कर्त्ता, वह जो नब्बे अभागे और दस भाग्यवान की सृष्टि करे, भर्त्ता, जो गरीबों का पालन करे, जिसमें वे धनिकों के पैर दबावें।

शब्दार्थ– संहार= विनाश। भर्त्ता = पालन करने वाला।

प्रसंग– प्रस्तुत गंद्याश रामवृक्ष बेनी पुरी द्वारा रचित रेखाचित्र 'पुरुष और परमेश्वर' से लिया गया है जिसमें लेखक ने पुरुष के पुरुषार्थ और परमात्मा के परम तत्त्व का अंकन किया है और मानव को परमात्मा का अंश माना है।

व्याख्या– इन पंक्तियों में लेखक मनुष्य की विनाशकारी मनोवृत्ति का परिचय देते हुए कहता है कि इस संसार में मनुष्य इतना महत्त्वकांक्षी है कि वह अपने आप को ऊंचा और महान् सिद्ध करने के लिए मानव संहार करने में भी संकोच नहीं करता है। जब तक वह इस दुष्कृत्य में लीन रहेगा और मानव–मात्र का संहार करता रहेगा तब तक वह ऐसे ही भगवान् की भी सृष्टि करता रहेगा। जो संसार का संहारकर्त्ता है। इतना ही नहीं, मनुष्य कर्त्ता और भर्त्ता दोनों में भगवान् बनाता है। कर्त्ता वह है जो अभागे अधिक और भाग्यवान् कम बनाता है तथा भर्त्ता वह है जो गरीबों का पालन करता है। जो धनिक लोगों की सेवा करते हें और अपने आपको

उन्हीं की सेवा के लिए जन्म लेने वाला मानते हैं। लेखक मनुष्य की शोषक वृत्ति पर आक्षेप कर रहा है जो उसे मानव का शोषण करने के लिए विवश करती है।

विशेष–

1. लेखक मनुष्य को संहारकर्त्ता न बन कर निर्माण कर्त्ता बनने की प्रेरणा देता है जिससे समाज में किसी का शोषण न हो सके।
2. भाषा तत्सम प्रधान और शैली विचारात्मक है।
3. पैर दबाना मुहावरे का प्रयोग है।

अब मानव मानव की उपासना करे, मानव की वन्दना करे। भगवान् की स्तुतियां बहुत हुई, हमारी कविता और गीत अब मानव की अलिखित यशोगाथा को छन्दोबद्ध करें। मानव की ही खोज में मानव की साधना दौड़े–उच्छ्वासित, चंचल, क्रियाशील मानव मस्तिष्क अपने ही लिए अपने को पुष्पित और फलति करे।

शब्दार्थ– अलिखित = न लिखी हुई, मौखिक। यशोगाथा = यश की कहानी, प्रशंसा की कथा। पुष्पित= फूलना। फलित = फलना।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा रचित रेखाचित्र 'पुरुष और परमेश्वर' से लिया गया है, जिसमें लेखक ने पुरुष के पुरुषार्थ तथा परमेश्वर के परमतत्त्व की विवेचना करते हुए पुरुष को परमेश्वर का अंश बताते हुए पुरुष के बल पर समस्त कार्य कर सकने वाला सिद्ध किया है।

व्याख्या– इन पंक्तियों में लेखक कहता है कि इस संसार में मनुष्य अनादि काल से भगवान् की पूजा–अर्चना करता रहा है किन्तु अब तक समय आ गया है कि मानव की स्तुति की जाए और उसी मानव की वन्दना की जाए क्योंकि मनुष्य की उपासना करना जरूरी है। आज तक केवल भगवान् की ही उपासना होती रही हैं और उसी का यशोगान गीतों के माध्यम से होता रहा है किन्तु अब समय आ गया है कि मानव की अलिखित यशोगाथा को कविता और गीतों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाए क्योंकि आज मनुष्य ने इतनी प्रगति की है कि वह ईश्वर के समान अपने आप को मानने लगा है। इसका यह अभिप्राय नहीं कि वह ईश्वर हो गया है अपितु मानव में ईस्वरत्व की खोज का प्रयत्न ही आज का सबसे बड़ा लक्ष्य है। मनुष्य की बुद्धि ऐसे कार्यों की ओर प्रेरित हो, उसकी साधना ऐसे कार्यों की ओर अग्रसर हो जिसमें मनुष्यता का निरंतर विकास हो तथा विश्व में मानव–मात्र के प्रति सद्भावना उत्पन्न हो। इससे वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को बल मिलेगी तथा मानवतावादी संसार की स्थापना को सकेगी।

विशेष–

1. लेखक संसार के कल्याण के लिए मानव–मानव में भाईचारे की भावना जगाने पर बल देता है।
2. सूक्ष्म भाव की सुन्दर अभिव्यतीत है।
3. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली उद्बोधनात्मक है।

चाहिए ऐसा सरल स्वभाव, जिसमें सरल साहस हो, मानव, जिसमें सरल धुन हो, मानव, जिसमें मानवोचित अनुभूति हो, मानव जो सीधा देखे, मानव जो सीधा सोचे, सरल मानव, जो सीधा काम करे! चाहिए जीवित मानव– जो हमें मृत्यु से बचावे ! परमात्मा की ओर हमने बहुत देखा, अब अपने पुरुषार्थ की ओर देखें।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश रामवृक्ष बेनीपुरी द्वारा रचित रेखाचित्र 'पुरुष और परमेश्वर' से लिया गया है जिसमें लेखक ने पुरुष के पुरुषार्थ तथा परमेश्वर के परमतत्व की विवेचना करते हुए पुरुष को परमेश्वर का अंश बताते हुए पुरुष को पुरुषार्थ के बल पर समस्त कार्य कर सकने वाला सिद्ध किया है।

व्याख्या– इन पंक्तियों में लेखक कहता है कि आज के इस व्यस्थता तथा भौतिकतावादी सामाजिक जीवन में मनुष्य निरंतर कुटिल तथा क्रूर बनता जा रहा है। वह स्वयं ही अपने विनाश के साधन एकत्र कर रहा है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति की होड़ में विनाशकारी अस्त्रों का निर्माण किया जा रहा है। मनुष्य – मनुष्य के रक्त का प्यासा बन गया है। ऐसी स्थिति में मानवता को बचाने के लिए और मानवता को संभालने के लिए ऐसे सरल स्वभाव वाले मनुष्य की आवश्यकता है जो सरल साहस से परिपूर्ण हो, जिसमें

मनुष्यता को सुरक्षित रखने की शक्ति हो और जो सरल एवं सहज धुन का पक्का हो, आज ऐसे मनुष्य की आवश्यकता है जिसमें मानवोचित अनुभूति की अधिकता हो। लेखक के अनुसार आज ऐसे मानव की आवश्यकता है जो सरल सीधा देखे, सीधा सोचे और सीधे काम करे, उसमें कुटिलता की भावना न हो। आज ऐसे जीवित अर्थात् विचारशील मानव की आवश्यकता है जो मानव को असामयिक विनाशाकारी मृत्यु से बचा सके। लेखक के विचार में मनुष्य का पुरुषार्थ ही इस कार्य को सम्पन्न कर सकता है। इसलिए वह कहता है कि भगवान् के भरोसे रहकर बहुत देखा लेकिन संतुष्टि न हुई इसलिए अब मनुष्य को अपने पुरुषार्थ से ही कुछ करना चाहिए।

विशेष–

1. लेखक मनुष्य को पुरुषार्थी बनकर समाज के स्वच्छ निर्माण के लिए प्रेरित करता है। वह मनुष्य को कुटिलता त्याग कर सरलता अपनाने के लिए भी कहता है।
2. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली सूत्रात्मक एवं विचारपूर्ण है।
3. भावों की आकर्षक अभिव्यंजना है।

खण्ड ग : रामवृक्ष बेनीपुरी : साहित्यिक परिचय

हिन्दी निबंधकारों में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके निबंध प्रगतिवाद से प्रभावित हैं। इनका जन्म मुजफ्फरपुर (बिहार) के बेनीपुर गांव में सन् 1902 ई॰ में हुआ। बचपन में ही इनके सिर से माता–पिता की छाया उठ गई थी। सन् 1920 में गांधी जी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ होने पर यह अध्ययन छोड़कर राष्ट्र सेवा में लग गए। गांधी जी के दर्शन में इनकी विशेष आस्था है। 'राम चरित मानस' के पठन–पाठन से इन्हें साहित्य की ओर प्रेरित किया। स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेने के कारण इन्हें अनेक बार जेल की यातानाएं सहन करनी पड़ीं। सन् 1968 ई॰ में इनका देहावसान हो गया।

रचनाएँ :

पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ये पत्र–पत्रिकाओं के लिए लिखने लग गए थे। इन्होंने 'बालक', 'तरुण–भारती', 'किसान मित्र', 'नई धारा' आदि अनेक पत्र–पत्रिकाओं का सम्पादन किया। उपन्यास, नाटक, कहानी, यात्रा–विवरण, संस्मरण निबंध आदि सभी गद्य विधाओं में बेनीपुरी जी की अनेक कृतियां प्रकाशित हो चुकी हैं इनकी कुछ रचनाएं 'बेनीपरी ग्रंथावली' के रूप में दो भागों में प्रकाशति हो चुकी है। 'पतितों के देश में' (उपन्यास), 'चिता के फूल', (कहानी) 'माटी की मूरतें', 'नेत्रदान' तथा 'मन और विजेता' (रेखाचित्र), 'अंबपाली' (नाटक), 'गेहूं और गुलाब' (निबंध और रेखाचित्र), 'पैरों में पंख बांध कर' (यात्रा विवरण), 'जंजीरें और दीवारें', (संस्मरण) आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ :

1. **सशक्त भाषा** – बेनीपुरी जी का जीवन राष्ट्र को समर्पित था। इनका साहित्य गहन अनुभूतियों एवं आदर्श कल्पनाओं से निर्मित है। इनकी भाषा ओजपूर्ण तथा सशक्त है। इनकी भाषा में प्रान्तीय शब्दों का प्रयोग भी हुआ है, परन्तु समग्रतः इनकी भाषा खड़ी बोली के परिष्कृत रूप में अनुगामी है। इन्होंने सामान्य बोलचाल के शब्दों में तत्सम शब्दावली का सुन्दर प्रयोग किया है। वाक्य रचना स्वाभाविक है।
2. **भाषा वैविध्य**– बेनीपुरी जी राजनीतिक साहित्यकार हैं। इन्होंने राजनीति के परिवेश में भी साहित्य रचना की है। लाल चीन, लाला रूस, जय प्रकाश नारायण, लुज्जेक आदि इनकी इसी कोटि की रचनाएं हैं। बेनीपुरी जी के साहितय में तीन प्रकार के भावों से युक्त रचनाएं हैं। प्रथम श्रेणी में वे रचनाएं आती हैं जिनमें बाल सुलभ जिज्ञासा के दर्शन होते हैं। दूसरी श्रेणी की रचनाएं वे हैं जिनमें कैदी जीवन की घुटन का वर्णन हुआ है। इस घुटन ने उनकी दृष्टि को पैना बनाया हैं। तीसरी प्रकार की रचना में उल्लास का वातावरण अंकित है। बेनीपुरी जी की अधिकांश रचनाओं में ऐसा वातावरण रहता है।
3. **प्रभावी शैली**– बेनीपुरी जी की रचनाएं जीवन की गहन अनुभूतियों का दर्पण हैं। इनकी देशभक्ति एवं कर्मठता की छाया इनकी रचनाओं में दिखाई देती है। भाषा भावानुरूप एवं सशक्त है। आंचलिक शब्दों को पचा लेने का गुण भी इनकी भाषा

में है। इनकी शैली के विषय में नलिन जी का मत पठनीय है, **''बेनीपुरी के निबंधों में दो शैलियां मिलती हैं–प्रसाद और आवेग। अधिकतर प्रथम शैली के दर्शन होते हैं। आवेग शैली सहायक रूप में आती है– कुछ निबंधों में प्रधान रूप में भी।''** रामवृक्ष बेनीपुरी एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार माने जाते हैं। एक सफल पत्रकार होने के कारण उनकी भाषा में सहजता, बोधगम्यता तथा सरलता के अनायास ही दर्शन हो जाते हैं। उपयुक्त, भावानुकूल तथा विषयानुकूल भाषा के प्रयोग में वे अग्रणी हैं। इनकी अधिकांश विधाओं में काव्यमय चित्रात्मक, विचारपूर्ण तथा व्याख्यात्मक शैली के दर्शन होते हैं। कहीं–कहीं सूत्रात्मक शैली का प्रयोग भी किया है।

4. **देश प्रेम एवं विश्व बंधुत्व**– बेनीपुरी जी के साहित्य में देश प्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी हुई है। इन्होंने देश के विकास के लिए गंभीर दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। समाज का कल्याण सदा ही इन्हें प्रेरित करता रहता है। उन्हें समाज के विभिन्न पक्षों ने साहितय लेखन के लिए प्रेरित किया था। वह उस कल्याणकारी मार्ग को प्रवृत्त करना चाहते हैं जो विश्वबंधुत्व का कारक बन सके। उनका मानना है कि मानसिक प्रवृत्तियों से मानव जाति का शुभ हो सकता है, 'वसुधैवकुटुम्बकम्' का भाव विकसित हो सकता है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'पुरुष और परमेश्वर' रेखाचित्र की विशेषताएं बताइए।

उत्तर– रेखाचित्र कहानी से मिलता–जुलता साहित्यिक रूप हैं इसे शब्द चित्र भी कहते हैं। अंग्रेजी में इसका नाम 'स्केच' है। 'रेखाचित्र' में किस व्यक्ति, वस्तु, घटना या भाव का कम से कम शब्दों में मर्मस्पर्शी भावपूर्ण एवं सजीव अंकन किया जाता है। रेखाचित्र' में सांकेतिकता अधिक रहती है। लेखक कम से कम शब्दों में किसी व्यक्ति या वस्तु की मुख्यतः विशेषता को उभार देता है। संस्मरण में चित्र–शैली का प्रयोग किया जाता है। रेखाचित्रों में कल्पना की प्रधानता एवं घटनाओं की समग्रता रहती है। रेखाचित्रकार शब्दों और वाक्यों के संकेतों से कुछ कह डालता है। रेखाचित्रकार किसी एक वस्तु या व्यक्ति को अपना एकान्त लक्ष्य बना, पूर्ण संवेदनशीलता के साथ उसी की चारित्रिक रेखाओं को अंकित करने में दत्तचित्त बना रहता है। वह घटनाओं और परिस्थितियों का उतनी मात्रा में अंकन करता है, जिससे वह उसकी चारित्रिक रेखाओं को उभारने में सहायता प्रदान कर सके। केवल सुनी–सुनाई बातों के आधार पर किसी का रेखाचित्र नहीं बनाया जा सकता। सम्बन्धित व्यक्ति या वस्तु के साथ हमारा घनिष्ट रागात्मक संबंध होना नितांत अनिवार्य हैं अतः रेखाचित्रकार के लिए मर्मभेदी दृष्टि का होना अपेक्षित है। रेखाचित्र में किसी व्यक्ति अथवा वस्तु की विशिष्टताओं का प्रभावशाली ढंग से चित्रण किया जाता हैं इसमें सूक्ष्म चित्रण एवं विश्लेषण का होना आवश्यक है। इसके वर्ण्य विषय में यथार्थता होती है, साथ ही कल्पना का भी थोड़ा–सा पुट विद्यमान् रहता है। इसमें संवेदनशीलता, सहृदयता तथा प्रभावोत्पादकता का होना आवश्यक है। रेखाचित्र की भाषा सांकेतिक, भावावेशमयी, वर्णनात्मक, व्यावहारिक, काव्यमयी, बोधगम्य तथा सरस होती है। इसमें कथात्मक, निबंध, तरंग, वर्णनात्मक, संवाद, सूक्ति, डायरी, सम्बोधन, आत्मकथात्मक शैलियों का प्रयोग मिलता है। 'पुरुष और परमेश्वर' पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि इस रेखाचित्र में अनुभूति और कल्पना के माध्यम से एक सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने इस रेखाचित्र में पुरुष के पुरुषार्थ एवं परमेश्वर के परम तत्त्व को विभिन्न रंगों में अंकित किया है। लेखक का एक–एक शब्द बोलता है और वह अपने अर्थ–गाम्भीर्य से पाठक के मानस को आन्दोलित करता है एवं प्रकाशवान् करता है।

'पुरुष और परमेश्वर' में लेखक ने पुरुष और परमेश्वर के चरित्रों द्वारा मर्मस्पर्शी घटनाओं को उद्घाटित किया है। तथ्यों का सजीव एवं भावपूर्ण चित्रण करते हुए उनके प्रभाव को स्पष्ट किया है। जैसे–'भगवान् एक सपना है। भगवान् एक आकांक्षा है, जिससे मानव जीवन ओत–प्रोत बना है। जीवन एक सपना है, जिसमें हम तुम ओत–प्रोत हैं। अपने सपने का ही नाम हमने आत्मा दे रखा है।'

इसी प्रकार से रेखाचित्र में विषय के विस्तृत विवरणों आदि की आवश्यकता नहीं होती है, कुछ ही शब्दों से विषय में अपनी बात कह जाता है। जैसे–'भगवान् को आदमी ने बनाया, यह कहना उचित नहीं गलत हैं, जितना यह सुनना कि भगवान् ने आदमी को बनाया।' इस रेखाचित्र के बीच–बीच में संवादों के प्रयोग से रोचकता में वृद्धि हुई है तथा सूक्तियों से विचारात्मक आयी है जैसे–''सपना देखना कोई लज्जा की बात नहीं।'' ''मानव विचार में असीम बल है।''

अतः कह सकते हैं कि भाषा की काव्यमयता, विचारों की प्रभावोत्पादकता, सरसता आदि की दृष्टि से 'पुरुष और परमेश्वर' एक सफल रेखाचित्र है।

प्रश्न 2 'पुरुष और परमेश्वर'' के आधार पर पुरुष और परमेश्वर का रेखांकन कीजिए।

उत्तर – 'पुरुष और परमेश्वर' नामक रेखाचित्र में लेखक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने पुरुष के पुरुषार्थ और परमेश्वर के परम तत्त्व का अंकन इस रूप में किया है–

(क) परमेश्वर – लेखक के अनुसार आदिकाल से ही मनुष्य के मन में परमेश्वर के प्रति असीम श्रद्धा रही है तथा उसे एक परमेश्वर से संतोष न हुआ तो उसने अनेक परमेश्वरों की खोज की। उसे पृथ्वी की नन्हीं दूब से लेकर आकाश के इन्द्र धनुष तक में परमेश्वर ही दिखाई देता है। पुरुष के लिए भगवान् एक सपना है। भगवान् एक आकांक्षा है, जिससे मानव जीवन ओत–प्रोत है। अपने सुख–दुःख में वह अपनी सहायता के लिए भगवान् को ही पुकारता है। लेखक भगवान् और आदमी को एक ही सिक्के के दो रूप मानता है। उसने मानव–कल्पना का रहस्यवादी प्रतीक भगवान् को कहा है। वह भगवान् को सर्वज्ञ मानता है तथा मनुष्य को उसी परमेश्वर का अंश स्वीकार करता है।

(ख) पुरुष – लेखक के अनुसार पुरुष अथवा मानव का निर्माता परमेश्वर है। मानव के विचारों में असीम बल है, जिसके कारण वह अपने विचारों के अनुकूल संसार को ढाल लेता है। मानव की शक्तियों में छप्पन कोटि देव–देवादि देवों को भी नतमस्तक करने की सामर्थ्य है। इसलिए लेखक कहता है कि आज मानव को मानव–निर्माता के रूप में अपना कौशल दिखलाने की आवश्यकता है। साथ ही स्व–जाति के विकास के लिए अपने मस्तिष्क का पूर्ण विकास करने की आवश्यकता है। मनुष्य शोधक, अन्वेषक, कवि और दार्शनिक के रूप में मनुष्य को नई दिशा दे, तभी उसका जीवन सार्थक हो सकता है। मनुष्य नये सौन्दर्य और साहस का परिचय दे सके।

प्रश्न 3 ''बेनीपुरी जी शब्दों के जादूगर है'–कथन के आलोक में बेनीपुरी की भाषा एवं शैली की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – रामवृक्ष बेनीपुरी की गद्य रचनाएं गहन अनुभूति और उच्च कल्पना से युक्त होती हैं, जिनमें सांस्कृतिक चेतना, विषय–वैविध्य और शैलीगत चमत्कार भी देखा जा सकता है। इस सबके लिए वे शब्दों के चयन में इतनी अधिक निपुणता दिखाते हैं कि उन्हें शब्दों का जादूगर कहा जाता हैं इनकी रचना 'पुरुष और परमेश्वर' में भी इनके शब्दों की जादूगरी स्पष्ट दिखाई देती है। इन्होंने छोटे–छोटे तथा चुटीले वाक्यों द्वारा अर्थ गाम्भीर्य को व्यक्त किया है जैसे –''भगवान् एक सपना है। भगवान् एक आकांक्षा है, जिससे मानव जीवन ओत–प्रोत बना है।''

भाषा–प्रवाह की दृष्टि से इनकी रचनाओं का एक–एक शब्द स्वयं बोलता प्रतीत होता है और अपनी अर्थ–प्रभा से पाठक के मानस को आलोकित करता है। रेखाचित्र के लिए जिस प्रकार की भाषा और शब्दावली की अपेक्षा होती है उसका चरम निर्वाह इस रेखाचित्र में देखा जा सकता है, जैसे–''भगवान् मेरी सहायता करो। अपने बादलों को मेरे खेत मे बरसने की आज्ञा दो। उत्तर में सूखी झंझा बहती रही। युद्ध भूमि में रूंड–मुंड बिखरे थे––वीरों की लोथ पर चील–कोवे भोज मान रहे थे।''

इस प्रकार के वर्णन से स्थिति का एक सजीव चित्र भी उपस्थित हो जाता है जो लेखक के शब्द चयन तथा शब्दों की चित्रमयता का उदाहरण है।

कहीं–कहीं इनकी शैली सूत्रात्मक भी हो गयी है, जैसे–''स्वप्न भगवान् का अर्थ है, स्वप्न मानव।'' ''मानव ने भगवान् को अपने से महान् कभी नहीं बनाया।'' ''आदमी पर 'अविश्वास भगवान् में विश्वास।''

लेखक ने उद्‌बोधनात्मक शैली का आश्रय भी अपने शब्दों का चमत्कार दिखाने के लिए लिया है, जैसे–''चाहिए ऐसा सरल स्वभाव मानव, जिसमें सरल साहस हो, मानव, जिसमें सरल धुन हो, मानव, जिसमें मानवोचित अनुभूति हो, मानव जो सीधा देखे, मानव, जो सीधा सोचे, सरल मानव, जो सीधा काम करे !''

इस प्रकार शब्दों को अपनी भावनाओं के अनुरूप स्वर प्रदान करने में सफल होने के कारण बेनीपुरी जी को शब्दों का जादूगर कहा जाता है।

प्रश्न 4 रामवृक्ष बेनीपुरी को हिन्दी रेखाचित्र में योगदान की विवेचना कीजिए।

उत्तर – रेखाचित्र में योगदान – रेखाचित्र में एक ओर जीवन का संस्पर्श है तो दूसरी ओर निबंध एवं कहानी का भी। जिस प्रकार किसी सशक्त चित्र में रेखाओं का उभार प्रत्यक्ष रहता है, उसी प्रकार इस विधा में किसी व्यक्ति, वस्तु, स्थान या विषय विशेष का सजीव शब्द–चित्रांकन किया जाता है। बाबू गुलाबराय विरचित 'मेरे नापिताचार्य' एक सशक्त रेखाचित्र है। इसी प्रकार रामवृक्ष बेनीपुरी की 'माटी की मूरतें' भी इसका सुन्दर उदाहरण है। बेनीपुरी जी शब्द–शिल्पी और चमत्कारी शैली के जादूगर लेखक हैं उनके रेखाचित्र साहित्य में अमर हो गये हैं। हिन्दी साहित्य में रेखाचित्र को प्रतिष्ठित करने का श्रेय बेनीपुरी जी को ही है। यथार्थ के साथ कल्पना और भावुकता का समन्वय, शब्दों और वाक्यांशों का संयत प्रयोग बेनीपुरी जी के लेखन की ऐसी विशेषताएं हैं जिन्होंने पाठक की स्मृति में सदा–सदा के लिए अपना स्थान बना लिया है। इनकी सम्पूर्ण रचनाओं में सांस्कृतिक चेतना की स्पष्ट झांकी मिलती है। उनके गद्य–साहित्य में गहन अनुभूति और उच्च कल्पना का संस्पर्श मिलता है। इतना ही नहीं, उनकी रचनाओं में विषय–वैविध्य और शैली का अद्‌भुत चमत्कार भी मिलता है।

बेनीपुरी जी के रेखाचित्र अपने समाज से जुड़े हुए हैं। उसमें यथार्थ जीवन की गहन अनुभूति के साथ कल्पना की ऊंची उड़ान मिलती है। उनके निबंधों में एक ओर धरती की पकड़ है, यथार्थ की अनुभूति है तो दूसरी ओर आदर्श और कल्पना का वैभव दिखाई पड़ता है। उनके विषय सांस्कृतिक और राष्ट्रीय–चेतना से ओत–प्रोत हैं। उनमें मानव को आत्मिक, भौतिक तथा मानसिक सुख प्रदान करने की क्षमता विद्यमान है।

बेनीपुरी जी भाषा के जादूगर हैं। उनका एक–एक शब्द स्वयं बोलता हुआ प्रतीत होता है। वे छोटे–छोटे चुस्त वाक्यों में अर्थ की अद्‌भुत द्युति भर देते हैं। उनके वाक्य विद्युत की रेखा के समान चमक और प्रभाव रखते हैं। उनके गद्य को गद्य–काव्य की संज्ञा दी जा सकती है। अपनी बात को पाठक के मन–मस्तिष्क में उतार देने में उतार देने में पूर्णतया समर्थ हैं। बेनीपुरी जी की भाषा में अद्‌भुत प्रवाहशीलता और चित्रमयता है। उनके द्रुत गति से प्रयुक्त शब्दों में संगीत का स्वर सुनाई देता है। वे पाठक के मानस के समक्ष वर्ण्य–विषय का चित्र खींचने में सिद्धहस्त हैं इस प्रकार बेनीपुरी जी हिन्दी के एक सशक्त रेखाचित्र लेखक हैं।

अध्याय–2
बयालीस के ज्वार की लहरों में
कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

खण्ड क : पाठ सार

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' पराधीन भारत को स्वतंत्र कराने वाले उन देशभक्तों की ओजपूर्ण गाथाओं को प्रस्तुत करता है जो मातृभूमि को दासता से मुक्त कराने के लिए अपने प्राणों को भी न्यौछावर करने के लिए सदा तत्पर रहते थे। इस संस्मरण में उन दिनों का वर्णन किया गया है जब अंग्रेज शासक अपनी विशाल तथा प्रचण्ड सैनिक शक्ति के बल पर भारत पर अपना अधिकार मज़बूत करने में लगे हुए थे तथा देशभक्त भारतवासी स्वयं को अंग्रेजों की दासता से मुक्त कराने के लिए संघर्षरत थे।

लेखक बताता है कि जब 8 अगस्त, सन् 1942 में राष्ट्रीय महासभा ने 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव पास किया तो अंग्रेज़ों ने बड़े–बड़े नेताओं को बंदीगृह में डाल दिया। नेताओं की इस सामूहिक गिरफ्तारी से जनता के हृदय में विद्रोह की प्रचण्ड आग भड़क उठी। सारा देश एक साथ कराह उठा और शासकों के शक्ति–केन्द्र इन लपटों में पड़ कर स्वाहा होने लगे।

लेखक इन्हीं दिनों बिहार की राजधानी पटना में घटित एक घटना का वर्णन करते हुए बताता है कि जब बिहार सरकार के सेक्रेटरिएट पर तिरंगा झंडा फहराने के लिए विद्यार्थियों और अन्य देश–भक्तों की भीड़ आगे बढ़ी तो अंग्रेज ज़िलाधीश ने गुस्से में भरकर झंडा फहराने वालों को आगे आने के लिए कहा। उनमें ग्यारह विद्यार्थी आगे बढ़े जिनमें एक सबसे कम उम्र का था। अंग्रेज़ अफसर ने उससे पूछा कि ''तुम भी झंडा फहराओगे'' तो उसका उत्तर था–''जी हां, मैं ही झंडा फहराऊँगा।'' तब ऐसा लगता था कि मानो भारत की सारी आत्मा उसके कंठ से बोल रही हो। ज़िलाधीश के आदेश के साथ ही फायर हुआ और ग्यारह लाशों को खून से लथ–पथ करके गिरा दिया गया। फिर भी 'भारत छोड़ो' इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारे गूंजते रहे और इसी बीच लोगों ने देखा कि सेक्रेटरिएट पर तिरंगा झंडा लहरा रहा है। उसे देखकर ज़िलाधीश का मुंह काला पड़ गया।

देशभक्तों की इस स्वतंत्रता की लहर को दबाने के लिए अंग्रेज़ी सरकार ने अपना दमन–चक्र सारे देश में फैला दिया। किन्तु 15 अगस्त, 1947 को यूनियन जैक यहां से ऐसे खिसक गया, जैसे थर्ड क्लास के टिकट का मुसाफिर फ्सट क्लास में बैठा हो और टिकट चैकर को देखते ही चुपचाप खिसक जाए। अब वही तिरंगा झंडा इस शान से लहरा उठा कि आकाश–गंगा की लहरें भी उसके फहराने को देखने के लिए ठहर गई।

खण्ड ख : व्याख्या

हम उन दिनों घहरा रहे थे, वे उन दिनों घबरा रहे थे। हम उन दिनों पूरे जोश में थे, वे उन दिनों पूरे जोर में थे। उनकी महानता अस्त होने के खतरे में थी, हमारी महानता फिर से जन्म लेने की सम्भावना में। उनके साथ लगभग एक शताब्दी में संजोयी सैनिक शक्ति थी, हमारे साथ लगभग एक शताब्दी में सुलगाई विद्रोही भावनाओं की आग।''

शब्दार्थ–घहराना = गर्जना। अस्त = समाप्त।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण ''बयालीस के ज्वार की लहरों'' में से लिया गया है। इस संस्मरण में लेखक ने सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन में अपने प्राणों की बाज़ी लगाने वाले देशभक्तों की गौरव गाथा तथा अंग्रेज़ों के निर्मम अत्याचार का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन का स्मरण करते हुए कहता है कि भारतवासी स्वयं को अंग्रेज़ों के विरोध में गर्जना कर रहे तथा अंग्रेज़ इस देश के उन नौजवानों से घबरा रहे थे। देशवासियों की देश–भक्ति के समक्ष उनके होश उड़ रहे थे। देशवासी उस समय अपने जोश में आकर अंग्रेज सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए तैयार थे जबकि अंग्रेज़ अपनी पूरी ताकत से उनका दमन कर रहे थे। वह ऐसा समय था जबकि अंग्रेज सरकार की महानता का सूर्य अस्त होने को था किन्तु भारत की महानता अपने नये जन्म की तैयारी में थी। अंग्रेजों के साथ लगभग एक शताब्दी तक संगठित की गई और एक साथ संजोयी हुई सैनिक शक्ति थी, जिसके आधार पर वे सम्पूर्ण विश्व को अपने डंडे तले झुकाए हुए थे। इसके विपरीत हमारे साथ लगभग एक शताब्दी से सुलगाई हुई विद्रोह की अग्नि थी।

विशेष –

1. लेखक यह स्पष्ट करता है कि भारतवासी सन् बयालीस में देश को अंग्रेजों की दासता से पूरी तरह मुक्त कराने के लिए तैयार थे जबकि अंग्रेज हमारे स्वाधीनता आन्दोलन को अपने सैन्य बल से कुचल देना चाहते थे।
2. स्वतंत्रता आन्दोलन का चित्रण है।
3. भाषा सहज, सरल, व्यावहारिक तथा शैली प्रवाहमयी तथा ओजपूर्ण है।

हमारी देश–भक्ति का नारा था – 'निकल जाओ यहां से', उनकी सैन्य शक्ति का उद्घोष था–क्यों निकल जाएं ? संघर्ष बहुत हो चुके थे, इस बार किसी एक को मिटाना था, इसलिए न वे कोई कोर–कसर छोड़ रहे थे – न हम ! अतीत साक्षी है– वे जीत गए, हम हार गए ! वर्तमान साक्षी है – वे जीतकर हार गए, हम हार कर जीत गए। इतिहास साक्षी है वे ऐसे गये कि एक बात हो गई। संसार साक्षी है कि हम ऐसे जगे कि एक चमत्कार हो गया।

शब्दार्थ – सैन्यशक्ति = सेना की शक्ति। कोर कसर = कमी। साक्षी = गवाह।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश कन्हैयालाल मिश्र 'मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण ''बयालीस ने ज्वार की लहरों'' में से लिया गया है। इस संस्मरण में लेखक ने सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन में अपने प्राणों की बाज़ी लगाने वाले देशभक्तों की गौरव गाथा तथा अंग्रेजों के निमर्म अत्याचार का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में संकेत किया गया है कि किस प्रकार सन् बयालीस के आन्दोलन के समय भारतवासियों ने अंग्रेज़ों को भारत छोड़ने के लिए कहा जिससे हम स्वतंत्र हों और अपना शासन स्वयं चलाएं, उस स्वतंत्रता संग्राम के अवसर पर हमारा एक ही नारा था कि अंग्रेज़ों यहां से निकल जाओ। किन्तु अंग्रेज अपनी सैन्य–शक्ति पर भरोसा रखे हुए थे इसीलिए उसका उद्घोष था कि 'क्यों निकल जाएं ?' वास्तव में तत्कालीन युग में बहुत संघर्ष हो चुके थे किन्तु निर्णय नहीं हो पा रहा था। अतः इतने संघर्ष के पश्चात् यह समय आ रहा था जबकि इस बार अन्तिम संघर्ष में एक को मिटना था। इसीलिए अंग्रेज अपने दमन–कार्य में कोई भी कमी नहीं छोड़ रहे थे, और न देशवासी किसी भी रूप में पीछे हटने को तैयार थे। अतीत साक्षी है कि वह जीत गए और हम हार गये। जबकि वर्तमान साक्षी है कि वे जीतकर भी हार गये क्योंकि उन्हें भारत से जाना पड़ा। हम भारतवासी हार कर भी जीत गए क्योंकि अब हम स्वतंत्र हो गये हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि अंग्रेज़ इस देश से ऐसे गये कि यह एक प्रमाण हो गया कि किस प्रकार अंग्रेज़ों को भारत से भागना पड़ा। आज सारा संसार इस बात का साक्षी है कि भारतवासी अपने स्वाभिमान और अपनी आज़ादी के लिए ऐसे जागे कि एक चमत्कार हो गया। भारत की इस स्वतंत्रता प्राप्ति को विश्व के आश्चर्यों में से एक माना जाने लगा है।

विशेष –

1. लेखक ने भारतवासियों के आन्दोलन की सफलता का वर्णन किया है कि किस प्रकार अहिंसात्मक आन्दोलन से भारतवासियों को स्वतंत्रता प्राप्त हो गयी जिसे देखकर समस्त संसार के लोग भी आश्चर्य चकित हैं।
2. स्वाभिमान की प्रबल भावना है।
3. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली भावपूर्ण है।

इस भाषण ने देश को नया प्रकाश नहीं दिया, नया बल भी दिया। नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारी से जनता के हृदयों में जो आग सिन्धड़ी थी वह एमरी के भाषण से भड़क उठीं जोश तो था ही, राह भी अंधेरे में न रही और बिना किसी नेतृत्व के जनता उभर कर खड़ी हो गई।

शब्दार्थ – सिन्धड़ी = सुलगना। नेतृत्व = अगुवाई।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण ''बयालीस के ज्वार की लहरों'' में से ली गयी हैं। इस संस्मरण में लेखक ने सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन में अपने प्राणों की बाज़ी लगाने वाले देशभक्तों की गौरव गाथा तथा अंग्रेज़ों के निमर्म अत्याचार का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक ने स्पष्ट किया है कि अंग्रेज शासक एमरी ने इंग्लैंड के रेडियो से भारत की क्रांतिकारी जनता के विरोध में एक भाषण दिया, जिसमें उन्होंने भारतीयों पर अपने दमन–चक्र को सही ठहराया था। एमरी के इस भाषण ने देशवासियों के दिन में एक नया जोश भर दिया। उन्हें प्रकाश की एक नयी किरण दिखाई दीं अंग्रेज शासकों द्वारा भारतीय नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारी से जनता के हृदयों में सुलगती आग ओर भी भड़क उठी। एमरी के भाषण ने उसमें घी डालने का कार्य किया। इससे पूर्व भारतीय जनता के हृदय में जोश तो था लेकिन अब उनकी राह में भी अन्धकार न रहा। अब तो जनता को किसी व्यक्ति के नेतृत्व की भी आवश्यकता नहीं रही और वह स्वयं ही अंग्रेज़ शासकों के विरूद्ध खुलकर सामने आ गई। भारतीयों के मन में सदा रहने वाली अंग्रेज शासकों के विरोध की भावना प्रकट होकर अपना प्रचण्ड रूप दिखाने लगी।

विशेष –

1. लेखक यह बताता है कि अंग्रेजों का दमनचक्र बयालीस के आन्दोलनकारियों को कुचलने लगा तो वे भी खुलकर अंग्रेज़–शासन के विरूद्ध अपना विरोध व्यक्त करने लगे थे।
2. भाषा सहज एवं बोल–चाल की है।
3. शैली विवरणात्मक है।

यह हुंकार कोरी हुंकार न थी, इसके पीछे जीवन–ज्वाला की लपलपाती लपटें थीं। अंग्रेजी शासन की शक्ति के केन्द्र पुलिस थाने, डाकघर, स्टेशन–इन लपटों में पड़ स्वाहा हो चले। केन्द्रों का सम्बंध देहातों से कट गया और अंग्रेज़ी शासन के हाथ–पैर सन्नाटे में आ गए। सारा देश युद्ध–भूमि में परिणत हो गया–जो न लड़े वे गद्दार!

शब्दार्थ – हुंकार = गर्जना। परिणत = बदलना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' से लिया गया है। इस संस्मरण में लेखक ने सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन में भारतवासियों के आत्म बलिदान तथा अंग्रेज़ों की दमन नीति का यथार्थ चित्रण किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत गद्यांश में लेखक भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की शक्ति का परिचय देते हुए कहता है कि देशवासियों ने आजादी के लिए जो हुंकार भरी थी वह केवल दिखावा मात्र न थी अपितु उसके पीछे जीवन को न्यौछावर कर देने की भीषण ज्वाला की लपलपाती लपटें थीं जिसमें सामने आने वाला भस्म होकर अपने अस्तित्व को विलीन कर देता था। अंग्रेज़ी शासन की शक्ति के जो केन्द्र भारतवासियों को पीड़ित कर रहे थे, वे पुलिस–थाने, डाकघर, स्टेशन आदि आजादी की संघर्ष–ज्वाला में स्वाहा हो गये। उन केन्द्रों का संबंध देहातों से कट गया। इससे अंग्रेज़ी शासन की स्थिति डांवाडोल हो गईं। सारा देश एक युद्ध क्षेत्र बनकर रह गया। जिधर देखो उधर ही विनाश की लपटें उठ रही थीं। स्वतंत्रता प्राप्ति का संघर्ष तेज़ हो गया था। ऐसे पुनीत अवसर पर जो संघर्ष में मुंह मोड़ता वह मातृभूमि के प्रति कृतध्न अथवा गद्दार कहलाता था।

विशेष –

1. लेखक बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन के समय अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाली भारतवासियों की मनोवृत्ति का परिचय देता है।

2. भाषा सहज, सरल किन्तु प्रभावशाली है।

3. शैली ओजपूर्ण तथा नाटकीय है।

उन्हें क्या पता था कि आज से ठीक 5 वर्ष बाद 15 अगस्त, सन् 1947 को यह बेचारा यूनियन जैक यहां से इस तरह खिसक जाएगा, जैसे थर्ड क्लास के टिकट का मुसाफिर फस्ट क्लास में बैठा हो और टिकट चैकर आ जाए तो वह देखते ही चुपके से खिसक जाता है, और यहां यही तिरंगा झण्डा इस शान से लहराएगा कि आकाश गंगा की लहरें भी उसकी फहरान को देखने के लिए एक बार ठहर जाएंगी।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' से लिया गया है। इस संस्मरण में लेखक ने सन् बयालीस के स्वाधीनता आन्दोलन में भारतवासियों के आत्म बलिदान तथा अंग्रेज़ों की दमन नीति का यथार्थ चित्रण किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक अंग्रेज़ों की अहंकारी मनोवृत्ति को स्पष्ट करते हुए कहता है कि अंग्रेज़ों ने भारत पर अपना शासन बनाये रखने के लिए अनेक प्रकार के तरीके अपनाये और अपने यूनियन जैक को फहराते देखने के बहुत प्रयत्न किये किन्तु अपने अहंकार में उन्हें यह मालूम नहीं था कि 15 अगस्त, सन् 1947 को यह यूनियन जैक यहां से सदा के लिए उतर जाएगा। लेखक ने यूनियन जैक के भारत से चले जाने की तुलना उस टिकटधारी यात्री से की है जो थर्ड क्लास का टिकट लेकर फस्ट क्लास के डिब्बे में बैठा है और टिकट चैकर को देखकर चुपके से वहां से खिसक जाता है। इसी प्रकार यूनियन जैक भी भारत के तिंरगे झंडे के आगमन से चुपचाप यहां से खिसक गया। अब तिरंगा झण्डा यहां इस शान से फहराएगा कि आकाश गंगा की लहरें भी इस झण्डे को फहराते हुए देखने की इच्छा करेंगी और ठहर कर इस झण्डे को फहराते हुए देखेगी। इस प्रकार लेखक यह कहना चाहता है कि भारतवासियों की अदम्य इच्छा और संकल्प–शक्ति के सामने यूनियन जैक और उसके स्वामी अंग्रेज ठहर नहीं सके। वे चुपचाप अपने देश लौट गये।

विशेष –

1. अंग्रेजों की अहंकारी मनोवृत्ति पर व्यंग्य है। जो यह सोच बैठे थे कि उन्हें भारत से कोई भी नहीं हटा सकता और उन्हें यहां से विदा होना ही पड़ा।

2. भाषा सहज, सरल और शैली व्यंग्यात्मक है।

खण्ड ग : कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' : साहित्यिक परिचय

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' का जन्म सन् 1906 में सहारनपुर के देवबन्द नामक स्थान में सामान्य ब्रह्मण परिवार में हुआ था। इनके पिता पं॰ रमादत्त मिश्र की आजीविका पूजा–पाठ और पौरोहित्य (पुरोहिताई) थी। वे अत्यन्त सरल, सात्विक और महान् व्यक्तित्व के धनी थे। प्रारम्भ में राजनीतिक कार्यो में गहरी रूचि लेने के कारण उन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा। जब वे खुर्जा के संस्कृत विद्यालय में पढ़ रहे थे, तब इन्होंने प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता मौलाना आसिफ अली का भाषण सुना, जिसका इन पर विशेष असर पडा। इसके बाद इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र सेवा में लगा दिया।

रचनाएं –

प्रभाकर जी के अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं–

1. **रेखाचित्र संग्रह** – 'नई पीढ़ी नए विचार', 'ज़िन्दगी मुस्कराई', 'माटी हो गई सोना'।

2. **कहानी संग्रह** – 'आकाश के तारे–धरती के फूल'।

3. **संस्मरण संग्रह** – 'दीप जले–शंख बजे।'

4. **निबंध–संग्रह** – 'ज़िन्दगी मुस्करा', 'बाजे पायलिया के घुंघुरू' आदि

सम्पादक के रूप में इन्होंने 'ज्ञानोदय' और 'नया जीवन'आदि श्रेष्ठ पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया है।

गद्य–लेखन की विशेषताएं –

1. **राष्ट्रीय चेतना** – गद्य–लेखक के रूप में मिश्र जी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका साहित्य प्रेरक और जीवन मार्ग दर्शक है। राष्ट्रीय चेतना से ओत–प्रोत होने के कारण इनकी अधिकतर रचनाओं में राष्ट्र–भक्ति का स्वर गूंजता है। इन्होंने अपनी रचनाओं के लिए प्रायः साधारण जनता में से अपने पात्रों को चुना है और उन्हें उनके त्याग, निःस्वार्थ सेवा, दृढ़ प्रतिज्ञा आदि गुणों से मंडित चित्रित किया है। 'माटी हो गई सोना' की रचनाओं को प्रभाकर जी ने 'अक्षर–चित्र' कहा है।

2. **विषय वैविध्य** – पत्रकारिता के क्षेत्र में भी इनका कार्य सराहनीय रहा है। ज्ञानोदय, नया जीवन, विकास आदि पत्रिकाओं का इन्होंने सम्पादन किया था। इन्होंने निबंधों के अतिरिक्त संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्ताज आदि भी लिखे हैं। इनके निबंधों में राजनीतिक चेतना तथा सामाजिक विषमताओं का सजीव चित्रण मिलता है। इनकी रचनाओं में अन्याय के प्रति आक्रोश, विचारों की दृढ़ता, मानवीय करूणा, राष्ट्रीयता पद–पद पर झलकती है। इन्होंने जीवन की गहन अनुभूतियों का वर्णन अपने गद्य में किया है। कई स्थलों पर इनका गद्य काव्यमय हो गया है।

3. **अनुकूल शैली** – प्रभाकर जी ने अनेक गद्य–विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। रेखाचित्र, संस्मरण एवं ललित निबंध लेखक के रूप में उन्हें विशेष ख्याति प्राप्त हुई है। तभी तो इन्हें 'शैलियों का शैलीकार' कहा जाता है। संस्मरण और रेखाचित्र लेखक के रूप में प्रभाकर जी का हिन्दी जगत् में विशेष स्थान है। संस्मरण लेखक के रूप में प्रभाकर जी का साहित्यिक व्यक्तित्व एक विचित्र रूप में उभर कर दिखाई देता है। इनके संस्मरणों में व्यक्तिगत अनुभवों तथा ऐतिहासिक घटनाओं और परिस्थितियों का वर्णन जिस कलात्मकता के साथ किया जाता है वह हिन्दी साहित्य में अत्यनत विशिष्ट स्थान का अधिकारी है। अनुभूतियों की तीव्रता, कवि हृदय को भावुकता, करुणा, वचन–वक्रता, नाटकीयता, प्रवाहमयता आदि इनके संस्मरणों की कुछ प्रमुख विशेषताएं हैं।

4. **भाषा–शैली** – प्रभाकर जी ने साहित्य में अत्यंत सरल एवं स्पष्ट भाषा का प्रयोग किया है। शब्द–प्रयोग में भी इन्होंने अति उदारता से काम लिया है। सांस्कृतिक व अन्य गंभीर विषयों पर लिखते समय अधिकतर संस्कृत के शब्दों की अधिकता होती है तथा देश–भक्ति के भावों की अभिव्यक्ति से भाषा का रूप हिन्दुस्तानी हो जाता है, जिसमें उर्दू के शब्दों का भरपूर प्रयोग होता है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' नामक पाठ में मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए किए प्राणोत्सर्ग के प्रसंगों का मार्मिक अंकन है'' – इस कथन की समीक्षा कीजिए ।

उत्तर 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित संस्मरण देश को स्वतंत्र कराने के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले देशभक्तों की मार्मिक कथाओं को प्रस्तुत करता है। इस संदर्भ में लेखक बिहार की राजधानी पटना में विद्यार्थियों द्वारा किए गए आन्दोलन का वर्णन करता है कि जब विद्यार्थियों की भीड़ बिहार राज्य के सचिवालय पर तिरंगा झंडा फहराने का प्रयत्न कर रही थी तब जिलाधीश के कहने पर झंडा फहराने के लिए ग्यारह विद्यार्थी आगे बढ़े। उनमें सबसे कम उम्र का एक चौदह वर्ष का विद्यार्थी था। उसके कंधों का उभार पर्वत को भी शर्मिन्दा कर रहा था। अंग्रेज अफसर ने क्रूरता से उससे झंडा फहराने के विषय में पूछा और उसके हां कहने पर उसने फायर का आदेश देकर उन्हें गोली से भुनवा दिया। वहां ग्यारह लाशें खून से लथ–पथ होकर गिर पड़ीं। इस बीच सभी लोग 'इन्कलाब जिन्दाबाद', 'भारत छोड़ो' के नारे लगाते रहे और एक विद्यार्थी ने सचिवालय के गुम्बंद पर चढ़ कर तिरंगा फहरा दिया। इसी बीच लोगों की नज़र सेक्रेटरिएट पर पड़ी जहा ंतिरंगा झंडा लहरा रहा था। उसे देखकर जिलाधीश का मुंह काला पड़ गया, ज़िलाधीश ने उस विद्यार्थी को भी गोली से मरवा दिया।

इसी प्रकार से पटना की एक अन्य घटना का विवरण देते हुए लेखक बताता है कि रामसिंह पटना का एक प्रसिद्ध नागरिक था। एक दिन गोरे फौजी घूमते–घामते उसके घर में घुस गए और उसे लोहे की नोकदार खूंटे पर जबरदस्ती बिठा कर नीचे की ओर पूरा जोर डाल कर तब तक दबाया जब तक खूंटा उसके पेट, कलेजे, कंठ और खोपड़ी को फाड़ कर बाहर नहीं निकल गया और उसकी लाश को खूंटी पर टांग कर गोरे सिपाही दिन भर शहर में घुमाते रहे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लेखक ने इस संस्मरण में मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले देशभक्तों का मार्मिक चित्रण किया है।

प्रश्न 2 संस्मरण कला की दृष्टि से 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' संस्मरण की समीक्षा कीजिए।

उत्तर संस्मरण हिन्दी साहित्य की नवीन विधा है। संस्मरण की परिभाषा देते हुए कहा जाता है कि 'भावुक कलाकार जब अतीत की अनन्य स्मृतियोंमें से कुछ रमणीय अनुभूतियों को अपनी कोमल कल्पना से अनुरंजित कर व्यंजनामूलक संकेत शैली में अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं से विशिष्ट पर रोचक ढंग से यथार्थ रूप में व्यक्त कर देता है तब उसे संस्मरण कहते हैं। संस्मरण प्रायः महान् व्यक्तियों के ही लिखे जाते हैं। इनका संबंध देश, काल तथा पात्र तीनों से होता है। इसमें लेखक वर्ण्य विषय के साथ–साथ अपने विषय में भी कुछ न कुछ कहता चलता है। इसमें शैली निश्चित नहीं होती। तात्पर्य यह है कि किसी भी शैली में संस्मरण लिखा जा सकता है। इसमें लेखक जैसा देखता, अनुभव करता है, वैसा ही वर्णन करता है। संस्मरण किसी विषय अथवा व्यक्ति के स्मृति–चित्रों को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। संस्मरण महान् व्यक्तियों के चरित्रों को लेकर ही लिखे जाते हैं। संस्मरण का संबंध देश, काल तथा पात्र तीनों से सम्बन्धित रहता है। संस्मरण अतीत का ही होता है। इसमें तटस्थता के लिए कम अवकाश होता है। इसमें लेखक की आत्मनिष्ठा अधिक मात्रा में देखने को मिलती है। तात्पर्य है कि लेखक वर्ण्य–विषय का वर्णन करने के साथ–साथ अपना वर्णन भी करता चलता है। इसमें लेखक पात्र की सम्पूर्ण परिस्थितियों तथा चरित्र का बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव से वर्णन करता है। इसमें जीवन के यथार्थ रूप का आधिक्य होता है। इसकी शैली कोई भी हो सकती है। तात्पर्य है कि लेखन शैली में लिख सकता है। प्रभावोत्पादकता रोचकता तथा संकेतात्मकता इसके आवश्यक गुण हैं।

संस्मरण–लेखक के रूप में प्रभाकर जी का हिन्दी साहित्य में विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अपने संस्मरणों में निजी अनुभवों, ऐतिहासिक घटनाओं और परिस्थितियों का वर्णन बहुत कलात्मकता के साथ किया है। उन्होंने अपने संस्मरणों में अपनी अनुभूतियों और भावुकता के क्षणों को बहुत ईमानदारी से प्रस्तुत किया है। 'बयालीस के ज्वार की लहरों में' संस्मरण में लेखक ने तत्कालीन ब्रिटिश सरकार की क्रूरतापूर्ण नीति का वर्णन करते हुए लिखा है कि भारत मंत्री एमरी इंग्लैंड के रेडियो से संसार को अपने दमनचक्र का जस्टिफिकेशन देते हुए कहता है –''कांग्रेस ने एक भयंकर क्राान्ति का प्रोग्राम बनाया था, जिसमें स्टेशन फूंकना, लाइन तोड़ना, थानों पर कब्ज़ा करना और तोड–फोड़ एवं फूंका–फूंकी की हिंसात्मक कार्यक्रम था, इसलिए हमें सब कांग्रेसियों को एक साथ पकड़ना पड़ा।''

इस संस्मरण में लेखक ने अपने निजी अनुभव, ऐतिहासिक परिवेश तथा तत्कालीन जन मानस का भावपूर्ण शैली में वर्णन किया है, जैसे –''कुछ कर दिखाने वालों की भीड़ दोपहर को बिहार सरकार के सेक्रेटरिएट की ओर चली। भीड़ के पैरों तले साफ़–सुथरी सीधी सड़क थी, पर उसकी यात्रा आसान न थीं रास्ते में पुलिस की टोली और कोई अफसर मिलता और भीड़ को कहता, बस लौट जाओ, पर यह सरकारी नहर नहीं थी जो इशारों पर घटती, बढ़ती और रूकती, यह बरसाती नदी थी, ये तो जवानी के बाढ़ के दिन थे।''

इनके संस्मरणों में कवि–हृदय की भावुकता एवं करूणा पग–पग पर झलकती है। वाग्विदग्धता, नाटकीयता, ओजपूर्ण शब्द–चयन, प्रवाहमयता इनके संस्मरणों की कथ्य एवं शिल्पगत विशेषताएं हैं, जैसे नहीं रखनी सरकार, भाइयों, नहीं रखनी।

अंग्रेज़ी सरकार भाइयो, नहीं रखनी।''

''नारों की गूंज ऐसी थी कि पेड़–पत्ते तक बोल उठे – ''हिन्दुस्तान छोड़ जाओ ! क्विट इण्डिया ! इन्कलाब ज़िन्दाबाद !''

लेखक के इस संस्मरण में वचनवक्रता अथवा वाग्विदग्धता के भी बहुत उदाहरण प्राप्त होते हैं, जैसे – ''अपने राष्ट्र का तिरंगा झण्डा लिए किशोर गोल गुम्बद की ओर बढ़े तो गोरखा फौज ने दीवार की तरह अपने को सामने कर दिया। अंग्रेज़ ज़िलाधीश ने पूछा, ''आखिर तुम लोग क्या चाहते हो ? एक छात्र ने उभरकर कहा – ''हम सेक्रेटेरिएट पर अपना झण्डा लहराएंगे।'' ''वहां के लिए यह झण्डा नहीं यूनियन जैक फहराता है।'' हिन्दुस्तान की गुलामी पर उस ज़िलाधीश ने एक कड़वा व्यंग्य किया है।'' अब वहां यूनियन जैक नहीं फहरा सकता, यह तिरंगा ही वहां फहराएगा''–विद्यार्थी ने कहा।

अतः कह सकते हैं कि इस संस्मरण में लेखक ने निजी अनुभव, ऐतिहासिक परिदृश्य तथा तत्कालीन जन–मानस का भावपूर्ण चित्रण किया है तथा विषय–प्रतिपादन की मौलिकता, अनुभूतियों की गहराई, ओजमयी भाषा प्रवाहमयी शैली आदि इनके इस संस्मरण की प्रमुख विशेषताएं है।

अध्याय–3
रूपहला धुआँ
डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र

खण्ड क : पाठ सार

डॉ॰ विद्या निवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्तांत, 'रूपहला धुआँ' लेखक के निबंध संग्रह 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है' से लिया गया है। इसमें लेखक ने मध्य प्रदेश में रीवां से छियालीस किलोमीटर दूर नदी–तट पर स्थित चचाई–प्रपात का मनोहर चित्रण किया है। यह जल–प्रपात एक सौ तीन मीटर की ऊंचाई से गिरता हुआ बहुत ही आकर्षक लगता है। लेखक ने इस क्षेत्र की यात्रा तीन बार तथा विभिन्न ऋतुओं में की थी, उन्हीं का वर्णन वह यहां प्रस्तुत करता है।

लेखक जब पहली बार इस प्रपात को देखने आया तो फागुन की बयार लहरा कर वह रही थी और जल–प्रपात से उठने वाला धुआँ इधर–उधर बिखर कर अपार उत्साह दिखा रहा था। वैसे पहाड़ से पानी का गिरना जल–प्रपात ही कहा जाता है। यह दूसरी बात है कि प्रत्येक प्रताप से धुआँ नहीं निकलता तथा प्रत्येक धुआं रूपहला भी नहीं होता। परन्तु लेखक ने जिस प्रपात के विषय में चर्चा की है उसके रूपहले धुएं के जादू से वह अभिभूत है। प्रपात में लेखक ने धुआं उड़ता देखा। धुएं का एक रूप बादल भी है और वह भी अपना सर्वस्व कभी–कभी अनन्त आकाश में दिखा देता है।

दूसरी बार लेखक बड़े–बड़े अफसरों के साथ वर्षा ऋतु में वहां गया। उसके साथ मोटे, पतले, दुबले सभी तरह के लोग थे। घाटी से नीचे उतर कर जब सामने प्रताप को देखा तो उनका फागुन वाला अवसाद और बसन्त वाली विरह–वेदना एक दम स्वप्न की भान्ति तिरोहित हो गई। प्रपात पागल हाथी की तरह चिंघाड़ता नज़र आ रहा था। लेखक ने वर्षा के कारण प्रपात के उद्दाम यौवन के महावेग को देखा जो अपनी चौड़ी धारा की प्रबल भुजाओं से धरती के चटकीले धानी आंचल में उफनाते सावन को कस लेने के लिए व्याकुल हो रहा है।

तीसरी बार जब लेखक उस प्रपात को देखने पहुँचा तो चांदनी रात थी। संगीत के रस में अशंतः और शेष अंश में चाँदनी के रस में तैरते हुए मन का जब चचाई के साथ साक्षात्कार हुआ तो एक विचित्र संयोग मिल गया। चांद अपनी मस्ती पर, रात अपनी मस्ती पर, मन अपनी मस्ती पर और शेष सभी चीज़े एकदम विच्छिन्न रूप में लेखक को प्रतीत हुई। लेखक के साथ गये उसके साथी दो तरुणा मित्रों को छोड़कर, उस प्रपात के सौन्दर्य को निहारते–निहारते ऊब कर सो गये क्योंकि वे तो ज़िन्दगी के रस को सोखने वाले तिलचट्टे थे। ऐसे लोगों को बाजार की सौदेबाजी से, लेन–देन के शोरगुल से और नकद–उधार से इतनी प्रीति हो जाती है कि उससे एक क्षण का भी बिछोह उन्हें असह्य हो जाता है। ऐसे लोगों को प्रकृति से जबरदस्ती अनुराग कराना पड़ता है।

लेखक प्रभात होने पर प्रपात की ओर चला और उसके रूपहले धुएं को अपनी दृष्टि से अनुभव करने लगा। उसे जिस रूमानियत की अनुभूति हुई उसका रहस्य लेखक कभी नहीं खोल पाया। वह समस्त का दृश्य उसे बहुत अलौकिक तथा शब्दातीत प्रतीत हो रहा था। लेखक ने निकट से उस रूपहले धुएं को देखा तो उसे यह अनुभव हुआ कि पृथ्वी का रूप,उसका स्पर्ष, उस का अन्तर्नाद तथा गंध सब साथ मिलकर एक वाष्प यंत्र में परिणत हो गये हैं, जिसमें रूप चमक आया है, रस उमड़ आया है, स्पर्श लहक आया है, नाद थहर आया है, और गन्ध विथुर आई है।

लेखक सोचता है कि ''धूम्र, ज्योति, सलिल, मरुत का सन्निपात'' मेघ यक्ष का संदेश अलका में वहन करता है किन्तु पृथ्वी के हृदय के उच्छ्वास से उठा हुआ रूपहले धुएं का बादल चचाई प्रपात विंध्य की विनीत धरती का गद्–गद् कण्ठ से विरल संदेश अम्बर को सुनाता रहता है। संदेश का शाश्वत् निदान प्रयुत्तर की अपेक्षा किये बिना गूंजता चला जा रहा है और रूप धुआं बनकर तथा धुआं रूप बनकर संदेश के गायन की ताल पर थिरकता चला जा रहा है। धुआं कड़वा होता है और आंखों में जलन भी उत्पन्न कर देता है किन्तु चचाई प्रपात का धुआं चांदनी की रजत–किरणों से मिश्रित होकर रूपहला बना जाता है तथा आंखों को शीतलता और चित्त को शान्ति प्रदान करता है।

खण्ड ख : व्याख्या

मैंने देखा है, गुलाब को छोड़कर प्रत्येक कंटीले पेड़ में जो फूल आते हैं, जो प्रायः पीले होते हैं और प्रायः बहुत छोटे होते हैं, जैसे संसार के समस्त फूलों का उपहास करने के लिए प्रकृति द्वारा सजाये गये विदूषक हों ओर इस आकाश की अकलंक नीलिमा के प्रसार के नीचे कुण्ड के आकाश से भी नीले जल की श्यामलता के ऊपर तथा धरती की धूसरता और इन झाड़ों की हरियाली और फूलों की पीतिमा के परिपार्श्व में चांदी का धुआं उमड़–घुमड़ रहा था। धुएं का एक रूप बादल भी है ओर वह भी कभी–कभी अपना सर्वस्व दान करने के अनन्तर शरद् के आकाश में रजत खण्ड बन जाता है। पर उसमें शायद प्रत्येक रूप में से उमड़ने वाली प्राण शक्ति उतनी नहीं होती जितनी इस धुएं से मुझे निकलती हुई साफ–साफ अनुभव करने को मिली।

शब्दार्थ–उपहास = मज़ाक । विदूषक =जोकर । अकलंक = कलंक से रहित । श्यामलता = कालापन । पीतिमा = पीलापन । पार्श्व = बगल । सर्वस्व = सब कुछ ।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ विद्या निवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा वृत्त 'रूपहला धुआं' से लिया गया है, जिसमें लेखक ने मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में स्थित चचाई प्रपात के सौन्दर्य का आकर्षक विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन करता है जब वह पहली बार चचाई प्रपात को दखेने जाता है तो वहां उन्होंने देखा कि गुलाब के अतिरिक्त जितने भी कांटे वाले पेड़ होते हैं और उनमें जो फूल आते हैं वे पीले होते हैं और प्रायः बहुत छोटे होते हैं। प्रकृति की यह विशिष्ट कलाकृति है। ऐसा प्रतीत होता है प्रकृति ने संसार के सम्पूर्ण फूलों का उपहास करने के लिए ही इन्हें रचा है। जिस प्रकार विदूषक सभी का उपहास करता है उनका मनोरंजन करता है। जल–प्रपात के दृश्य को देखकर लेखक सोचता है कि जल से ऊपर उठने वाला जल को फेन रूपी धुआं आकाश की अकलंक नीलिमा के प्रसार के नीचे कुण्ड के आकाश से भी नीले जल की श्यामलता दृष्टिगोचर होती है। इसके साथ ही पृथ्वी की धूल–धूसरता के साथ प्रपात के किनारे खड़ी झाड़ियों की हरियाली और फूलों की पीतिमा के पास में चांदी का धुआं उमड़–घुमड़ रहा था। वस्तुतः जल प्रपात में ऊपर से गिरने वाला जल जब तेज़ी से गिरता है तो उससे तेज़ धारा के साथ गिरने वाले जल से कुछ फुहारें उठती हैं तो ऐसी प्रतीत होती है। मानो कुछ धुआं उठ रहा हो। सफ़ेद जल का धुआं चांदी के वर्ण का प्रतीत होता है। उसकी आभा आकाश की नीलिमा पर अपनी झलक डालती है।

लेखक का विचार है कि धुएं का एक अन्य रूप बादल भी है। हम आकाश में देखते हैं कि जल का वाष्पीकरण होने के बाद वह आकाश में बादल के रूप में फैल जाता है। वही बादल के टुकड़े जल की वर्षा करने के उपरांत आकाश में रजत खण्ड या चांदी के टुकड़ों के रूप में फैल जाते हैं। लेकिन उस आकाशीय रजत खण्ड में ऐसी प्राण शक्ति नहीं होती जितनी जल–प्रपात से उठकर उड़ने वाले धुएं में होती है। लेखक ने इस धुएं में जल–कणों की शक्ति का अनुभव किया । इस प्रकार जल प्रपात का सौन्दर्य जहां आंखों को सुखद अनुभूति कराता है वहीं उसका स्पर्श भी मानसिक सुख का आभास करता है।

विशेष –

1. लेखक चचाई प्रपात को पहली बार जब देखता है तो उसके आस–पास के प्राकृतिक सौन्दर्य का जो उस पर प्रभाव पड़ता है। उसी का वह वर्णन करता है।
2. सूक्ष्म भावों का स्पष्ट चित्रण है।
3. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली चित्रात्मक एवं काव्यमय है।

शरद् शुभ ज्योत्स्ना में जब यामिनी पुलकित हो गयी है और जब इस प्रपात के यौवन का मद खुमार पर आ गया है और उस खुमारी में इसका सौन्दर्य मुग्धा के वदन मण्डल की भाँति और अधिक मोहक बन गया है, तब भी मैंने इसे देखा है ओर तभी जाकर मैंने शरदिन्दु को इस प्रपात का शान्त तरल स्फटिक धारा पर बिछते हुए देखा।

शब्दार्थ – शुभ = उज्ज्वल, सफ़ेद । ज्योत्स्ना = चमक । यामिनी = रात्रि, रात । पुलकित = आनन्दित। मद = मस्ती। बदन = मुख। मोहक = आकर्षक । शरदिन्दु = शरद् ऋतु का चन्द्रमा। स्फटिक = कांच के समान पारदर्शी । प्रपात = झरना।

प्रसंग – प्रस्तुत डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्त 'रूपहला धुआं' से लिया गया है, जिसमें लेखक ने मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में स्थित चचाई प्रपात के सौन्दर्य का आकर्षक विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक शरद् ऋतु की चांदनी रात में चचाई प्रपात के मनोरम प्राकृतिक दृश्य का वर्णन करते हुए कहता है कि जब शरद् ऋतु की उज्ज्वल चांदनी चारों ओर छिटकी हुई थी तथा रात्रि भी ऐसे आकर्षक वातावरण में स्वयं को बहुत अधिक प्रसन्न तथा रोमांचित अनुभव कर रही थी, उस समय इस प्रपात में जल का वेग अत्यन्त तीव्र हो गया था, जो ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो इस प्रपात को जवानी की मस्ती का नशा हो गया हो। जिस प्रकार कोई मुग्धा नायिका यौवन से परिपूर्ण होने पर अत्यन्त सुन्दर प्रतीत होती है तथा उसका मुख–सौन्दर्य भी बहुत अधिक हो जाता है उसी प्रकार प्रपात भी बहुत अधिक सौन्दर्य से युक्त दिखाई दे रहा था। ऐसे में लेखक ने शरद् ऋतु के चन्द्रमा को इस प्रपात की कांच जैसी पारदर्शी जलधारा में फिसलते और लुढ़कते हुए भी देखा है। यह दृश्य भी लेखक को मनमोहक लगता है।

विशेष –

1. इन पंक्तियों में लेखक ने शरद् ऋतृ की चांदनी में चचाई प्रपात के अनुपम सौन्दर्य की तुलना मुग्धा नायिका के यौवन से परिपूर्ण सुन्दर मुख से की है।
2. गंभीर भाव–चित्रांकन है।
3. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली काव्यमयी है।
4. इसमें चित्रात्मकता का गुण भी है।

एक शिला की शीतल छाया में कगार के नीचे पैर डाले मैं बड़ी देर तक बैठे–बैठे सोचता रहा कि मृत्यु के गहन कूप की जगत् पर पैर लटकाये भले ही कोई बैठा हो, किन्तु यदि उसे किसी ऐसे सौन्दर्य के उद्रेक का दर्शन मिलता रहे तो वह मृत्यु की भयावह गहराई भूल जाएगा। मृत्यु स्वयं ऐसे उन्मादी सौन्दर्य के आगे हार मान लेती है, नहीं तो समय की कसौटी पर यौवन का गान अमिट स्वर्ण रेखा नहीं खींच सकता था। मिट्टी में खिले हुए गुलाब की पंखुड़ियां झर जाती हैं और उनको झरते देख मृत्यु हँसना चाहती है, पर वह मिट्टी में से जब गुलाब की गंध ओस पड़ने पर उसांस की भाँति निकल पड़ती है, तब मृत्यु गल कर पानी हो जाती है।

शब्दार्थ – शीतल = ठंडी। कगार = किनारा। गहन = गहरे। कूप = धुआं। उद्रेक = उत्पन्न। भयावह = भयावह, भय को उत्पन्न करने वाली। उन्मादी = उन्मादित करने वाले, मदमस्त बनाने वाले। उसॉस = आह से निकली सांस।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ विद्या निवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्त 'रूपहला धुआं' से लिया गया है, जिसमें लेखक ने मध्य प्रदेश की रीवा क्षेत्र में चचाई प्रपात के सौन्दर्य का आकर्षक विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – लेखक उस समय का वर्णन करता है जब वह पहली बार चचाई प्रपात देखने गया था। उस समय लेखक एक पत्थर की बड़ी–सी चट्टान की शीतल–छाया में एक किनारे बैठा सोच रहा है कि इस भयावह जल–प्रपात के किनारे बैठकर कोई भी मृत्यु के कूप की जगत् पर बैठ कर पैर लटका कर सोचता रहा हो तो उसे मृत्यु की भयावहता की अनुभूति होती रहेगी किंतु साथ ही यदि उसे किसी सौन्दर्य के दर्शन हो जाएं तो सुन्दरता की भावना में वह मृत्यु की गहराई को भूल जाएगा। उसके मानस से मृत्यु का डर निकल जाएगा अथवा यों कहें कि मृत्यु का डर उसके मन को आक्रांत नहीं करेगा। क्योंकि प्रत्येक प्रकार के सौन्दर्य में एक उन्माद होता है, एक पागलपन होता है जिसके वशीभूत मनुष्य अपनी सत्ता को भी भूल जाता है और उसी सौन्दर्य में लीन हो जाता है। सौन्दर्य मानव–मन की अभिभूत करने का सशक्त साधन है। यौवन भी अपनी स्थिति को तभी व्यक्त कर सकता है जब सुन्दरता का उसमें भाव हो। इसी यौवन के गीत अमर हो जाते हैं। जिस प्रकार मिट्टी में खिले गुलाब की पंखुड़ियां झर जाती हैं तो उनको झरते हुए देखकर मृत्यु का कार्य विनाश। कोई भी किसी के भी विनाश पर हंस सकता है किन्तु विनाश के बाद अभ्युदय पर उसे शर्मिन्दा होना पड़ता है। इसी प्रकार मिट्टी में से जब गुलाब की गंध ओस पड़ने पर उसांस की भांति निकलती है और अपने प्रभाव से सभी को अभिभूत करती है तब मृत्यु को भी लज्जा आने लगती है। विनाश का भाव तभी तक है जब तक उसका प्रभाव है। किन्तु जीवनगत प्रभाव के अभ्युदय पर विनाश का प्रभाव समाप्त हो जाता है। संसार का सौन्दर्य व्यक्ति के विनाशकारी भावों को प्रभावहीन कर देता है।

विशेष –

1. लेखक यह स्पष्ट करता है कि सौन्दर्य के दर्शन में मनुष्य इतना लीन हो जाता है कि वह सौन्दर्य का पान करते हुए मृत्यु का आलिंगन करने से भी भयभीत नहीं होता क्योंकि इस प्रकार की उसकी मृत्यु उसे अमरता प्रदान कर जाती है।

2. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली विचारात्मक है।

हरियाली सघन हो आयी और कहीं–कहीं उष्ण कटिबंधी फूलों की लहक भरी गंध भी पुरवैया के साथ समस्त संज्ञा झकझोरती और विजड़ित करती चली आने लगी। घाटी से ऊपर आकर अब ठीक आमने–सामने प्रपात से आंखों की मुठभेड़ हुई तो फागुन वाला अवसाद और बसंत वाली वेदना एक दम स्वप्न की भाँति तिरोहित हो गयी। प्रपात पागल हाथी की तरह चिंघाड़ रहा था। रह–रहकर जब बादल इस चिंघाड़ को बर्दाश्त न करते हुए तड़प उठते थे, तब प्रपात का उन्माद ओर द्विगुणित होकर आस्फालित हो जाता था। हां, यह जरूर था कि चाँदी का धुआं कुछ तो मिट्टी की प्रीति के उमड़ाव के कारण कुछ कजरारे मेघों की कजरारी छाया के कारण और अधिक तो विश्व के किशोर–किशोरी के श्यामल शृंगार से तन्मय होने के कारण कुछ अधिक संवाने लगा था, पर इस संवारई शोभा में भी रूपहले धुएं की आभा बीच–बीच में चमक उठती थी, मानों उसके अन्तर के रूप का ज्वार मन्मथ के भी मन्मथ विश्व–मोहन के सांवरे रूप को चुनौती दे रहा हो।

शब्दार्थ – सघन = घनी । पुरवैया = पूर्व दिशा से आने वाली हवा। विजड़ित = जड़ीभूत। अवसाद = दुःख। द्विगुणित = दुगुना। आस्फालिता = फूट पड़ना। तन्मय = लीन। मन्मथ = कामदेव। सावरे = सुन्दर।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्त 'रूपहला धुआं' से लिया गया है, जिसमें लेखक ने मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में स्थित चचाई प्रपात के मनमोहक प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन करता है जब वह दूसरी बार जल प्रपात देखने गया। तब वर्षा के कारण चारों ओर हरियाली घने रूप में छा गयी थी। कहीं–कहीं उष्ण कटिबंधीय फूल खिले थे। वहां का वातावरण उष्णता लिए हुए था। पूर्व दिशा की ओर से आने वाली हवा फूलों की लहक भरी गंध लेकर आती हुई समस्त मानसिक चेतना को झकझोरती हुई जड़ीभूत कर रही थी। लेकिन प्रपात की मनोरमता के दर्शन मानसिक थकान और जड़ता को दूर कर रहे थे। लेखक जब घाटी से ऊपर आकर अपनी आंखों से जल प्रपात के दर्शन करता है तो पहले फागुन में आने पर उसे जो अवसाद हुआ था, तथा बसंत ऋतु में प्रिय के वियोग की जो वेदना मन को दुखाती थी, वह एक अचानक टूटे स्वप्न की भांति समाप्त हो गई। लेखक पूर्व चिन्ताओं को भुला बैठा और प्रकृति के शान्त एवं रमणीय वातावरण में रम गया उसके सामने जल–प्रपात से उठती हुई ध्वनि ऐसी लग रही थी जैसे पागल हाथी चिंघाड रहा हो। जब प्रपात की इस उच्च ध्वनि के साथ बादलों की गर्जन सुनाई पड़ती थी तब हाथियों की चिंघाड़ भी फीकी पड़ती थी तो उस प्रपात का उन्माद अत्यन्त दुगुना होकर फूट पड़ता है। प्रपात से उठने वाले जल के धुएं से, जो चांदी के धुएं के समान प्रतीत होता था, वह मिट्टी के उमड़ाव के कारण और कुछ घने काले मेघों की श्यामल छाया के कारण तथा विश्व के किशोर–किशोरी अर्थात् युवक–युवतियों के श्यामल शृंगार के कारण कुछ अधिक सुन्दर प्रतीत होने लगा था। वास्तव में, प्रपात के किनारे मनोमुग्धकारी दृश्यों के देखने वाले युवक–युवतियों के कारण उस स्थान का सौन्दर्य और भी बढ़ गया था। इस संवरने वाली शोभा की आभा में रूपहले धुएं की आभा और भी अधिक मनोरम प्रतीत होती थी तथा बीच–बीच में चमक उठती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसके अन्तर एक रूप में ज्वार कामदेव से भी बड़े कामदेव इस संसार के मोहक सांवरे रूप को चुनौती दे रहा था। कामदेव का सौन्दर्य तरो सहज रूप में सभी को आकर्षित करता है किन्तु यह सौन्दर्य कामदेव से भी बड़ा और सघन है जो संसार को अपने अपूर्व–सौन्दर्य से मोहित करने वाले कामदेव को भी चुनौती देता प्रतीत होता है।

विशेष –

1. चचाई प्रपात के प्राकृतिक सौन्दर्य को इतना अधिक मनमोहक बताया है कि उसके सौन्दर्य के सम्मुख कामदेव का सौन्दर्य भी फीका पड़ जाता है।

2. भाषा तत्सम प्रधान, आंचलिक है।

3. शैली चित्रात्मक और काव्यमय है।

सूर्य निकलते–निकलते मेरे रतजगा साथियों ने मुझे धीरे से जगाया और मैं मूल प्रपात की मूल धारा की ओर चल पड़ा। चलते–चलते मेरे मन में आया कि धुएं से तो आंखें करुवा जाती हैं, करुवाते–करुवाते गीली हो जाती हैं , पर मेरी आंखे इस रूपहले धुएं से भीगते–भीगते बिना करुवाए जो लग गयीं, वह किस जादू का असर था। मैं वैसे अपने निजी जीवन की रुमानियत का राज कभी न खोल सका। शायद खोलने की कोशिश भी न की, क्योंकि खोलने के लिए कोई उत्कण्ठा नहीं जगी, कोई प्रेरणा नहीं आयी, पर 'अमिय हलाहल मद भरे, श्वेत श्याम रतनार' आंखें जिन्हें जिलाने, मारने या मदहोश करने में समर्थ नहीं हो सकीं, वे आंखें भी ऐसी जगहों में आकर हृदय का सब भेद जाने किस छल में पड़कर चुपचाप लुटा रही हैं, मैं स्वयं नहीं जान पाया।

शब्दार्थ – रतजगा = रात को जगाना। उत्कण्ठा = उत्सुकता। करुवा = कडुवा।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ विद्या निवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्त 'रूपहला धुआं' से लिया गया है, जिस में लेखक ने मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में स्थित चचाई प्रपात के मनमोहक प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक चचाई प्रपात की अपनी तीसरी यात्रा के अवसर पर चांदनी रात में प्रपात का सौन्दर्य देखने के पश्चात् अगले दिन की स्थिति का वर्णन करते हुए कहता है कि वह यात्रा से थककर अपनी मोटर की पिछली सीट पर चुपचाप लेट गया और सो गया। प्रातः होने पर उसके साथियों ने उठाया, जो रात्रि जागरण कर रहे थे । उठकर प्रपात की मूल धारा की ओर चल पड़ा। प्रपात की ओर चलते–चलते वह सोच रहा था कि धुएं से तो आंखें कड़वा जाती हैं और गीली हो जाती है परन्तु प्रपात के इस रूपहले धुएं से भीगते–भीगते बिना उसकी आंखें करुवाने लगीं यह रहस्य की बात है उसे यह कोई जादू का करिश्मा लग रहा था। वह अपने निजी जीवन में इस रूमानियत का रहस्य किसी पर प्रकट न कर सका। उसने फिर कभी रहस्य खोलने की कोशिश भी नहीं की क्योंकि वह ऐसा समझता था कि इस रहस्य को खोलने की कोई आवश्कता नहीं है। न ही लेखक को कभी ऐसी उत्कण्ठा रही कि वह अपने किसी राज को प्रकट करे। लेखक को किसी प्रकार की कोई प्रेरणा भी नहीं रही। किन्तु लेखक एक पंक्ति को स्मरण करते हुए आँखों की महत्ता को समझने लगा। 'अमिय हलाहल मद भरे, श्वेत श्याम रतनार'– इस पंक्ति ने लेखक को यह सोचने पर विवश कर दिया कि जो आँखें जिलाने– मारने और मदहोश करने में समर्थ नहीं हो सकीं, वे आंखें भी ऐसी जगह आकर हृदय के सभी रहस्यों को किस छल के कारण व्यक्त कर रही हैं। आँखों के इस रहस्य को लेखक की बुद्धि समझने में असमर्थ है क्योंकि उसके विचार में चचाई जल–प्रपात का सौन्दर्य आँखों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करता है। जो आंखें किसी अन्य वस्तु के सौन्दर्य या मोह में नहीं फंसती थीं, वे इस प्रपात के सौन्दर्य में उछल जाती हैं।

विशेष –

1. चचाई प्रपात का आकर्षण किसी को भी किसी रूपवती नव–यौवन से भी अधिक अपने मोहपाश में बांधने की सामर्थ्य रखता है। इसी कारण लेखक स्वयं को इसके मोहजाल से मुक्त नहीं रख पाता।
2. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली भावपूर्ण काव्यमय है।

मैंने सोचा कि 'धूम्र, जयोति, सलिल, मरूत का सन्निपात' मेघ जो यक्ष का संदेश अलका में वहन करता है, पर यह पृथ्वी के हृदय के उच्छवास से उठा हुआ रूपहले धुआँ का बादल चचाई प्रपात विन्ध्य की विनीत धरती का गद्‌गद् कण्ठ से विह्‌वल संदेश अम्बर को सुनाता है, अम्बर जो उस धरती के उच्छवास से एक दिन व्याकुल हो गया था और अम्बर जो आज उसके लिए सूना पड़ा है, और अम्बर जो अपनी शून्यता में भी चातक और चकोर के लिए जलद और अमृतांशु बन जाता है– पर विनय में बिछी हुई शान्त निरुद्वग्न और वीर प्रसविनी धरित्री के सीमंत को सजाने के लिए उसके पास मोतियों की माला नहीं जुरेगी और उसके अंचल में भरने को हरदी, दूब और अक्षत के साथ–साथ रत्नों का उपहार नहीं जुरेगा और शायद इसीलिए वह सूना है, पर संदेश को शाश्वत निदान प्रत्युत्तर की अपेक्षा किये बिना गूंजता चला जा रहा है और रूप धुआं बनकर तथा धुआँ रूप बनकर संदेश के गायन की ताल पर थिरकता जा रहा है।

शब्दार्थ – धूम्र = धुआँ। ज्योति = अग्नि। सलिल = जल। मरुत = हवा, वायु। सन्निपात = संयोग। उच्छ्वास = सांस । कण्ठ

= गला। विह्वल = व्याकुल, भाव विभोर करना। अम्बर = आकाश । जलद = बादल। अमृतांशु = अभृत की किरण। निरुद्विग्न = व्याकुलता से रहित। धरित्री = धरती। सीमंत = मांग। अक्षत = साबुत चावल। निदान = हल ।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ विद्या निवास मिश्र द्वारा रचित यात्रा–वृत्त 'रूपहला धुआं' में से लिया गया है, जिस में लेखक ने मध्य प्रदेश के रीवा क्षेत्र में स्थित चचाई प्रपात के मनमोहक प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक यह विचार करता है कि संस्कृत के महान कवि कालिदास ने अपने ग्रन्थ 'मेघदूत' में मेघ को धुआं, अग्नि, पानी ओर वायु का मिश्रण बताया है। वहां वह मेघ यक्ष के संदेश को अलकापुरी तक वहन करता है। यहां लेखक ने चचाई प्रपात को मेघ–तुल्य बताया है क्योंकि इसमें भी ये चारों तत्त्व विद्यमान हैं। कालिदास का मेघ यक्ष के संदेश को उसकी पत्नी के पास अलकापुरी में ले जाता है। यहां यह 'जल प्रपात' विन्ध्य की विनीत धरती को, यहाँ की विनयशीलता का संदेश आकाश को निरन्तर सुना रहा है। यह प्रपात प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा किये बिना संदेश के गायन की ताल पर सदा थिरकता रहता है।

लेखक को ऐसा अनुभव होता है मानो चचाई प्रपात का रूपहले धुएँ के रूप में उठा हुआ एक संदेश है जो निरन्तर यक्ष के संदेशवाहक मेघ की याद ताजा कराता है। यह वह अम्बर है जो धरती के उच्छ्वास से एक दिन व्याकुलता का अनुभव कर रहा था लेकिन आज उसी के लिए यह सूनापन समेटे हुए हैं। यह वही अम्बर है जो अपनी शून्यता में चातक और चकोर के लिए बादल और अमृत की बूंद का पर्याय बन जाता है। चातक जो मेघ की एक बूंद जल को ग्रहण करने के लिए निरन्तर आकाश की ओर टकटकी लगाए देखता रहता है और मेघ के खण्ड मात्र से याचना करने लगता है। कभी–कभी व्याकुल हृदय से आकाश में छाये धूम समूह को मेघ समझकर उसे याचना करने लगता है। परन्तु साक्षात् विनय के रूप में फैली हुई शांत और उद्विग्नता से रहित तथा वीरों को जन्म देने वाली इस धरती की मांग को सजाने के लिए उस मेघ खण्ड के पास मोतियों की माला नहीं मिल सकती और न उसके विस्तृत आंचल को भरने के लिए हरदी, दूव एवं अक्षत के मांगलिक रत्नों का उपहार मिल सकेगा। इस मेधाच्छादित आकाश के पास इस वीर प्रसविनी धस्त्री के लिए कोई उपहार नहीं है। इसीलिए यह सूनापन प्रतीत होता है। चचाई जल–प्रपात से रूपहले धुएं के बादल के रूप में उठने वाला शाश्वत संदेश निरन्तर गूंज रहा है, उसे किसी प्रत्युत्तर की अपेक्षा नहीं है। प्रपात से उठने वाली गूंज संदेश देती जा रही है। प्रपात से उठने वाला रूपहला धुआं एक संदेश के गायन की ताल पर थिरकता चला जा रहा है, उसे किसी की अपेक्षा नहीं हैं

विशेष –

1. लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि चचाई प्रपात की निरंतर गूंजने वाली ध्वनि मानो विन्ध्य के विनम्रता के संदेश को समस्त संसार में, अम्बर के माध्यम से, प्रसारित करना चाहती है।
2. भाषा तत्सम प्रधान तथा शैली भावात्मक एवं काव्यमयी है।

खण्ड ग : डॉ॰ विद्या निवास मिश्र

साहित्यिक परिचय

बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न डॉ॰ विद्या निवास मिश्र एक सशक्त साहितयकार हैं। बहुमुखी प्रतिभा के कारण इनकी विभिन्न भाषाओं और साहित्य में रूचि रही लेकिन लोक–जीवन और ग्रामीण समाज की ओर इनका अध्ययन विशेष रूप से आकर्षित हुआ। इनका जन्म 14 जनवरी, सन् 1926 ई॰ में गोरखपुर ज़िला के पकड़डीहा नामक ग्राम में हुआ था।

डॉ॰ विद्या निवास मिश्र को अनेक सरकारी पदों पर नियुक्त किया गया। आपने वाराणसी संस्कृत कॉलेज में कई वर्षों तक अध्यापन का कार्य किया और काशी विश्वविद्यालय से पी–एच॰ डी॰ की उपाधि प्राप्त की। आप ने काशी विश्वविद्यालय में कुलपति के रूप में कार्य किया है।

साहित्यिक कृतियाँ

'ऑगन का पंछी' और 'बनजारापन', 'साहित्य की चेतना', मेरे राम का मुकुट भीग रहा है', 'परम्परा बंधन नहीं', हिन्दी को शब्द संपदा', 'जीवन में सनातन की खोज', 'तुम चन्दन हम पानी', 'छितवन की छाँह', 'रीतिविज्ञान', 'संचारिणी' आदि इनकी रचनाएं हैं। 'पानी की पुकार' इनका प्रकाशित कविता संग्रह है।

निबंधों की विशेषताएँ

1. **मौलिकता** – इनकी विभिन्न भाषाओं को जानने में विशेष रूचि थी। इन्होंने अनेक भाषाओं का ज्ञान अर्जित कर भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्मों और प्राचीन प्रथाओं का गहन रूप में अध्ययन किया। प्रत्येक दृष्टिकोण को गहराई से मथ कर अपनी चिन्तन शैली के आधार पर विषयों को मौलिक और रोचक बनाया है। विद्यानिवास जी ने न केवल शास्त्रीय और भारतीय प्राचीन संस्कृति का अध्ययन किया बल्कि किसी जनपद के लोक जीवन, लोकसमाज की व्यक्तिगत अनुभूतियों को भी इसमें संजोया है।

2. **काव्यात्मकता** – डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र की गद्य के रूप में साहित्य को विशेष देन है। वे गद्य में भी काव्यात्मकता को उड़ेल देते हैं। उनके निबंध बहुत ही प्रभावोत्पादक और लालित्यपूर्ण हैं। इनके प्रमुख निबंध संकलन ये हैं–''मेरे राम का मुकुट भीग रहा है'', ''बसंत आ गया पर कोई उत्कण्ठ नहीं'', ''परम्परा बन्धन नहीं'', ''कदम की फूली डाली'', ''छितवन की छांह '', आदि। मिश्र जी के कुछ निबंध तो प्रभावशाली, बहु–चर्चित ओर लोकप्रिय बन गए हैं।

3. **भावात्मकता** – डॉ॰ विद्या निवास मिश्र के अधिकांश निबंध भावात्मक हैं। लेखक ने अपनी कल्पना व व्यक्तिगत अनुभवों के द्वारा ये निबंध प्रस्तुत किए हैं। इस प्रकार के निबंधों में जहां शासन–पद्धतियों और बड़े–बड़े पदों पर अथिष्ठित अधिकारियों का मज़ाक उड़ाया गया है, वहां इनके निबंध व्यंग्य –विनोद से परिपूर्ण हो गए हैं।

4. **विचारात्मक गम्भीरता** – इनके कुछ निबंध विचारात्मक कोटि में आते हैं। ऐसे निबंधों में बौद्धिकता से काम लिया है। इन्होंने प्रत्येक समस्या पर बौद्धिकता से विचार करके उसका सारगर्भित विवेचन किया है। विचारों को लोक–जीवन की शब्दावली के साथ कस कर प्रयोग किया है।

5. **शैलियों वैविध्य** – इन्होंने निबंध भी लिखे हैं। वर्णनात्मक निबंधों में मिश्र जी ने कल्पना का आश्रय लेकर विभिन्न दृश्यों, दर्शनीय स्थलों और पर्वतों का वर्णन किया है, जो अत्यन्त रोचक व भव्य बन पड़े हैं। मिश्र जी ने कतिपय संस्मरणात्क निबंध भी लिखे हैं, जिनमें निकट सम्बन्धियों, मित्रों, साहित्य–सेवियों आदि के जीवन की मनोरंजक स्मृतियों को संजोया है।

6. **भाषा–भास्वरता** – डॉ॰ विद्या निवास मिश्र के निबंधों की भाषा में संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक मात्रा में प्राप्त होता है जिसमें यथास्थान लोक प्रचलित उर्दू–फारसी, अंग्रेज़ी एवं आंचलिक भाषाओं की शब्दावली के दर्शन हो जाते हैं। प्रसंग गर्भत्व, उक्ति वैचित्र्य, सूक्तियों, लाक्षणिक पदावली, मुहावरों की छटा आदि के भी इनकी भाषा में सहज प्रयोग प्राप्त होते हैं।

7. **विषय–व्यापकता** – डॉ॰ विद्या निवास मिश्र के निबंध विषय, दृष्टिकोण, शैली एवं भाव–भंगिमा की दृष्टि से अनूठे एवं अद्वितीय हैं। इनमें मन की अद्‌भुत उड़ान, विपथगाओं पर आक्रोश, साहित्यिक गुटबंधी पर व्यंग्य , प्रभुत्व ज्वर से ग्रस्त नौकरशाही पर कटाक्ष, आंचलिक उत्सवों की विह्‌वल स्मृतियां, योजनाबाज़ी का निर्मम उपहास, नर को नारायणाभिमुख बनाने की अडिग आस्था के साथ–साथ जन–जन में परमेश्वर की शक्ति को देखने का अटल विश्वास भी देखा जा सकता है। इनके द्वारा लिखित निबंधों में विविधता है। इनके वर्णनात्मक निबंधों में दर्शनीय स्थानों, यात्राओं और विभिन्न तीर्थ स्थलों का सुन्दर चित्रण किया गया है। कहीं–कहीं इन्होंने शासन पद्धतियों और उच्चाधिकारियों पर व्यंग्य बाण छोड़े हैं तो कहीं समसामयिक समस्याओं पर गंभीर विचार व्यक्त किए हैं। इनके निबंधों में आधुनिक जीवन की विसंगतियों को प्रकट किया गया है। इनके निबंधों पर समसामयिक जीवन की अमिट छाप होने के कारण इनमें आधुनिक जीवन में व्याप्त विसंगतियों की पूर्ण अभिव्यक्ति भी दिखाई देती है। इनकी रचना शैली सर्वथा अनूठी एवं अनुपम है। इनकी भाषा लोकोन्मुखी, कवित्व की सरसता से युक्त, उक्ति वैचित्र्यपूर्ण तथा अभिव्यंजना सौष्ठव से युक्त है। यही कारण है कि विषय–विवेचन, चिन्तन–मनन, विचार–दृष्टि, भाव–भंगिमा, कल्पना –प्रवणता तथा अभिव्यंजना शैली की नूतनता, विलक्षणता एवं विदग्धता की दृष्टि से मिश्र जी व्यक्ति प्रधान ललित निबंध लेखकों में श्रेष्ठ हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट है कि इन्होंने हिन्दी निबंध विधा को एक नया मोड़ प्रदान किया है। डॉ॰ मिश्र ने कोई भी विषय अछूता नहीं छोड़ा जिस पर विचारात्मक, संस्मरणात्मक, समीक्षात्मक रूप से कटाक्ष न किया हो। लेखक का व्यक्तित्व उनकी रचनाओं से स्पष्ट झलकता है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'रूपहला धुआं' का अर्थ स्पष्ट करते हुए 'चचाई प्रपात' की मुख्य विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उत्तर 'रूपहला धुआँ' रूपहला और धुआँ दो शब्दों के मेल से बना है। 'रूपहला' का शाब्दिक अर्थ चांदी के रंग जैसा रूपवान तथा 'धुआँ' शब्द का अर्थ वायु आग और पानी के मिश्रण को कहते हैं। धुआँ कड़वा तथा आंखों में जलन उत्पन्न करने वाला होता है, किन्तु यह 'रूपहला धुआँ' आंखों को शीतलता तथा मन को शान्ति प्रदान करता है। चचाई प्रपात से एक सौ तीस मीटर की ऊचांई गिरने वाला जल प्रवाह गिरते हुए वायु और जल की बूंदों से इस प्रकार का धुआँ उत्पन्न करता है जो देखने वालों की आंखों को शीतलता प्रदान करता है। जल के वाष्पीकरण से तथा चांदनी की रजत–रूपहली किरणों के कारण यह धुआँ रूपहला धुआँ बन जाता है। 'चचाई प्रपात' मध्यप्रदेश के रीवा नगर की ओर चचाई गांव के समीप बहुत सुन्दर जल प्रपात है। यह प्रपात 130 मीटर की ऊंचाई से गिरता है। इसका जल प्रवाह मोहक एवं मनोरम लगता है। लेखक ने इस स्थान की तीन यात्राएं अलग–अलग ऋतुओं में की हैं। प्रत्येक ऋतु में प्रपात नया और पहले से भिन्न रूप में रोमांचित और भाव–विभोर करता है। 'चचाई प्रपात' अलग–अलग अवसरों पर पर्यटकों एवं दर्शकों को भिन्न–भिन्न रूपों में प्रेरित, उद्वेलित तथा आनन्दित करता है। प्रथम बार देखने पर यह प्रपात दायें–बायें पार्श्वों को फलाकर छलांग भरने वाला बीच में सिमट कर एक प्रवलय बनाता हुआ नीचे कुण्ड की ओर जाता प्रतीत होता है । सावन भादों में इस प्रपात के उद्दाम यौवन का महावेग देखा जा सकता है जो डेढ़ सौ फीट की चौड़ी धारा की प्रबल भुजाओं में धरती के चटकीले धानी आंचल में उफनाते सावन को कस लेने के लिए व्याकुल हो जाता है। इसी प्रकार शरद की चाँदनी रात में सब चीज़ों में विच्छिन्न अपनी मस्ती में प्रवाहित होने वाला यह प्रपात एक विचित्र संगीत का आभास देता है।

प्रत्येक ऋतु में चचाई प्रपात लेखक को नया तथा पहले से अलग प्रतीत होता है और वह इसके प्रत्येक रूप को देखकर मोहित हो जाता है। एक ही रमणीय स्थल, अलग–अलग अवसर पर पर्यटकों तथा दर्शकों को किस प्रकार प्रभावित, प्रेरित, उद्वेलित तथा आनन्दित करता है, यह चचाई प्रपात को देखने से ही ज्ञात होता है क्योंकि वह नित नवीन है।

प्रश्न 2 'चचाई प्रपात' की कालिदास के मेघ में तुलना क्यों की गई है ? 'चचाई प्रपात' का संदेश क्या है ? संक्षेप में विवेचन कीजिए।

उत्तर महाकवि कालीदास ने मेघदूत के पांचवें श्लोक में मेघ अर्थात् बादलों को धुआँ ,आग ,पानी और वायु का मिश्रण बताया है। प्रस्तुत पाठ 'रूपहला धुआँ' में लेखक विद्या निवास मिश्र ने प्रपात को मेध के समान बताया है क्योंकि इसमें मेघ के समान धुआँ, आग, पानी और वायु ये चारों तत्त्व विद्यमान हैं। कालिदास का मेघ यक्ष के संदेश को उसकी प्रियतमा के पास अलकापुरी ले जाता है जबकि चचाई प्रपात विन्ध्य की विनीत धरती को यहां की विनयशीलता का अमर संदेश आकाश को निरन्तर सुनाता रहता हैं

इस प्रकार चचाई प्रपात के माध्यम से लेखक यह संदेश देता है कि जिस प्रकार 'चचाई प्रपात' पृथ्वी के हृदय के उच्छ्वास से उठा हुआ रूपहले धुएं का बादल विन्ध्य की विनीत धरती का गद्‌गद् कण्ठ से विह्वल संदेश अम्बर को सुनाता रहता है। वह अम्बर जो उस धरती के उच्छ्वास से एक दिन व्याकुल हो गया था, वह अम्बर जो आज उसके लिए सूना पड़ा है। प्रपात का संदेश विनय में छिपी हुई शान्त निरुद्विग्न और वीर प्रसविनी धरित्री के सीमन्त को सजाने के लिए मोतियों की माला के उपहार को संजोये हुए है उसी प्रकार मनुष्य को भी संसार के समस्त प्राणियों के प्रति शान्ति एवं सुख का संदेश प्रसारित करना चाहिए।

प्रश्न 3 'यात्रा–वृत्त' की विधागत विशेषताओं के आलोक में 'रूपहला धुआँ' की समीक्षा कीजिए।

उत्तर जब लेखक अपने जीवन की अविस्मरीण यात्राओं का विवरण आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत करता है तो वह 'यात्रा–वृत्त' कहलाता है। आदर्श यात्रा–वृत्त वह माना जाता है जिसमें यात्रा–क्रम में आए हुए स्थान और बीती धटनाएं स्मृति–संवेदना का अंग बनकर चित्रवत् अंकित हो जाती हैं। यात्रा–वृत्त में 'आत्मकथा', 'संस्मरण' और 'रिपोर्ताज' तीनों के तत्त्व पाए जाते हैं। यात्रा–वृत्त में गायकों का सा भावावेश तथा निबंधकारों की सी मस्ती रहती है। यात्रा–वृत्त लेखक देश की आत्मा का साक्षात्कार करते हैं। वे देश में बिखरे हुए इतिहास को , संस्कृति और समाज को अपनी अनुभूति का अंग

बनाकर अभिव्यक्त करते हैं। यात्रा–साहित्य में उपन्यास का विराट् तत्त्व, कहानी का आकर्षण, गीति काव्य की सी मोहकता, संस्मरणों की सी आत्मीयता, निबन्धों की सी युक्ति एक साथ मिल जाती है।

यात्रा वृत्तान्त को यात्रा विवरण, यात्रा साहित्य आदि भी कहा जाता है। यात्रा–वृत्तान्त हिन्दी साहित्य की नवीन विधाओं में से एक है। इस विधा का लेखक अपने देश के किसी प्रदेश में विचरता हुआ अथवा विदेश के किसी आंचल का अवलोकन करता हुआ, घूमता हुआ वहां के दर्शनीय स्थानों, प्रकृति तथा जीवन सम्बंधी अपने अनुभवों को शब्दबद्ध करता है। इस विधा के विषय को प्रधानता मिलती है और लेखक की आत्मपरक प्रतिक्रिया का स्थान गौण रहता है। सौन्दर्य बोध की दृष्टि से उल्लास की भावना से प्रेरित होकर यात्रा करने वाले यायावर एक प्रकार से साहित्यिक मनोवृत्ति के माने जा सकते हैं और उनकी मुक्त अभिव्यक्ति को यात्रा साहित्य कहा जाता है। अपने को केन्द्र में रखकर भी प्रमुख न होने देना साहित्यकार यायावर का कर्त्तव्य है।

डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र ने 'रूपहला धुआँ' में अपनी चचाई प्रपात की तीन यात्राओं का विवरण प्रस्तुत किया है जिसमें लेखक ने विभिन्न ऋतुओं में इस प्रपात के प्राकृतिक सौन्दर्य का मनोरम रूप में चित्रण किया है। जैसे – ''हरियाली सघन हो आयी और कहीं–कहीं उष्ण कटिबन्धीय फुलों की लहक भरी गन्ध भी पुरवैया के साथ समस्त संज्ञा को झकझोरती और विजड़ित करती चली आने लगी।''

चचाई प्रपता का वर्णन करते हुए लेखक का यह कथन समस्त वातावरण को सजीवता प्रदान कर देता है– ''प्रपात पागल हाथी के समान चिंग्घाड़ रहा था। रह–रह कर जब बादल इस चिंग्घाड़ को बर्दाश्त न करतेहुए तड़प उठते थे, तब प्रपात का उन्माद और द्विगुणित होकर आस्फालित हो जाता था।''

अतः कह सकते हैं कि भाषा–शैली, प्रवाहमयता, विम्बात्मकता कल्पना तथा निजी अनुभूतियों के रोचक प्रस्तुतिकरण की दृष्टि से रूपहला धुआँ एक सफल वृत्त है।

प्रश्न 4 विद्यानिवास मिश्र का हिन्दी यात्रा वृत्त लेखकों में स्थान निर्धारित कीजिए।

उत्तर डॉ॰ विद्यानिवास मिश्र ने भारतीय संस्कृति, भारतीय धर्म–साधना तथा प्राचीन संस्कृत–ग्रन्थों का गइराई से अध्ययन किया है। यायावरी वृत्ति ने इनके अनुभव जगत् का विस्तार किया है। देश–विदेश में पर्यटन के कारण इन्होंने मनोरंजक, व्यक्तिगत अनुभूतियों से परिपूर्ण, सांस्कृतिक चेतना से युक्त, प्रकृति के सजीव खण्ड चित्रों से अलंकृत यात्रा वृत्त प्रस्तुत किए हैं। इनके यात्रा–वृत्त स्थानों, घटनाओं के विवरण मात्र नहीं हैं अपितु उनमें लेखक की सृजनशीलता, अपूर्व प्रकृति प्रेम तथा भाषा का अप्रतिम लालित्य उपलब्ध है।

डॉ॰ मिश्र संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड विद्वान हैं। इसलिए उनकी भाषा में संस्कृत शब्दों का प्राधान्य है। निरुद्विग्न, वीर प्रसविनी, घनालिंगन, धूम्र, आस्फालित, मनमथ जैसे शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। इसके साथ प्रवाह में चलते हुए तद्भव, देशज और स्थानीय शब्दों का भी व्यवहार हुआ है। अंग्रेजी के अफसर, स्पीच, डिज़ाइन आदि शब्द और उर्दू के जिन्दगी, बाज़ार आदि शब्द अल्प मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं। मिश्र जी की भाषा लालित्यपूर्ण है। उनके शब्द भावानुभूति की तल्लीनता को व्यक्त करने में पूर्णतया समर्थ हैं। अनुभूतिमय स्थलों में लेखक अपनी सूक्ष्म पकड़ और भावाभिव्यक्ति को दिखाने में सफल रहा है। मिश्र जी के विवरणों में सजीवता और स्वाभाविकता है। इस प्रकार यात्रा–वृत्त लेखकों में डॉ॰ विद्या निवास मिश्र का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

अध्याय–4
माधव प्रसाद मिश्र के पत्र

माधव प्रसाद मिश्र

खण्ड क : पाठ सार

(क) बाल मुकुन्द गुप्त के नाम पत्रों का सार

श्री बाल मुकुन्द गुप्त हिन्दी पत्रकारिता का स्तम्भ थे, जिन्हें श्री माधव प्रसाद मिश्र ने अपने जीवन काल में अनेक पत्र लिखे थे उन्होंने ये पत्र भिवानी, त्रिपुरा भैरवी रामलाल का मठ काशी, सत्य नारायण मन्दिर काशी और नक लाल मन्दिर अयोध्या से अलग–अलग समय पर लिखे थे। इन पत्रों में आत्मीयता, वैयक्तिकता, स्वानुभूति विश्वास, सहजता, स्पष्टता और समसामयिकता के गुण विद्यमान हैं। मिश्र जी ने श्री गुप्त से मिलने की अपनी इच्छा को अनेक बार प्रकट किया है। उन्होंने महात्मा पं॰ श्रीधर जी महाराज डासने वालों के स्वर्गवास के विषय में गुप्त जी से बड़ी भावपूर्ण शैली में जानना चाहा था। ग्रीष्म ऋतु की तपन और दस्तों की बीमारी से परेशान लेखक को काशी महाशमशान–सी प्रतीत हुई थी। लेखक ने गुप्त जी से उस पारिवारक झगड़े के विषय में जानने की इच्छा प्रकट की थी जिसके बारे उसने बाबू राधा कृष्ण से सुना था। उसे यह जानकर प्रसन्नता हुई थी कि पूज्यपाद श्रीधर जी महाराज के स्वर्गवास की अफवाह झूठी थी। उन्होंने गुप्त जी को बतया कि वे काशी से वापिस अयोध्या लौट जाएंगे, क्योंकि उन्हें वहां का पानी अनुकूल प्रतीत नहीं होता। अयोध्या लौट कर लेखक लगभग दो महीने तक बीमार रहा। महात्मा श्री पं॰ दीनदयाल उनकी खबर लेते–देते रहे थे। बीमारी की अवस्था में भी वे लेखन कार्य करते रहे थे।

(ख) पं॰ दीन दयालु शर्मा के नाम पत्रों का सार

श्री माधव प्रसाद मिश्र ने पं॰ दीन दयालु शर्मा के नाम भिवानी, बनारस, शिमला और फैजावाद से पत्र लिखे। अपने 11. 7 1897 के पत्र में लेखक ने सूचना दी कि भिवानी में धर्म सभा सक्रिय हो गई है पर हैज़े के फैलजाने के कारण उत्साह भंग हो गया। लेखक के घर में भी अनेक लोग हैजे के शिकार हुए, लेकिन सभी स्वस्थ प्राप्त कर गए। जीवन की क्षति नहीं हुई। पं॰ दीनदयालु शर्मा ने अपने किसी पत्र में लिखा होगा कि वह बड़े आदमी बन गए हैं तथा राधाकृष्णन भी बड़े हो गए हैं, क्योंकि उन्होंने इनके पत्रों का उत्तर नहीं दिया। लेखक ने व्यंग्य स्वर को प्रधान करते हुए लिखा कि जिस पर उनकी कृपा हो वह बड़ा नहीं बन सकता, सदादीन ही बना रहेगा। लेखक ने उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों को जानना चाहा। उसने यह भी बताया कि वह पंजाब की धर्म सभाओं में फिर से जाना चाहता है। उसने शिमला, लाहौर, अमृतसर, जालन्धर, मुलतान आदि नगरों की सैर की भी इच्छा प्रकट की। लेखक ने बनारस से पत्र लिखते हुए बताया कि वह समय पर भगवान् विश्वनाथ जी के दरबार में पहुंच गया था। वह पं॰ राममिश्र से नहीं मिल सका, क्योंकि वे बरेली वैश्य कांफ्रैंस में भाग लेने के लिए गए हुए थे। लेखक ने अखबार निकालने के लिए 200 रुपये की सहायता की मांग की। बाबू देवकी नन्दन जी के प्रेस से अखबार प्रकाशित होगा। यदि चार सौ ग्राहक बने तो खर्चा वसूल हो जाएगा। इससे अधिक ग्राहक बनने पर लाभ होगा। शिमला से लेखक ने सूचना दी कि अभी उनका दो चार महीने घूमने का मन है। सभा उन्हें वहां दशहरे तक रखना चाहती है। मिश्र जी ने दिल्ली वाले पत्र को फैजाबाद में प्राप्त करने के पश्चात् उन्हें बताया कि वह पहले ही उन्हें लाहौर और झज्जर के पते पर पत्र लिख चुका है पर वे उन्हें इसलिए नहीं मिले कि ये दिल्ली आ गये थे। इन्होंने इन्हें लिखा कि बाबू देवकी नन्दन जी के पत्र से पता लगा है कि उन्हें 110 रुपये का मनीआर्डर मिल गया है। लेखक ने कानपुर का कैलास, वृन्दावन का महामण्डल और हाथरस का जध्यवंश महोत्सव का चित्र माँगा था जिसमें हरियशराम हों। वह चाहता है 'महामण्डल' का इतिहास वर्ष में एक बार अवश्य चित्र सहित छापा जाए।

श्री मिश्र के संकलित पत्रों में आपसी भाई–चारे और परिवार से जुड़ी छोटी–मोटी बातों के अतिरिक्त पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन सम्बंधी बातें ही दिखाई देती हैं। इनसे उनके व्यक्तिगत जीवन की हल्की–सी झलक दिखाई देती है।

खण्ड ख : व्याख्या

हा! काल आज तूने यह क्या अनर्थ किया जो हमारी मातृभूमि के एक मात्र रत्न का अपहरण कर लिया। शोक सिन्धु में निमग्न हूं। यदि आप अति शीघ्रता के साथ ही सच्ची–सच्ची खबर यह भेद दें कि उनका स्वर्गवास कब कहां और किस रोग से हुआ तो अत्यन्त दया हो, हो सके तो उनका शोक–काश और जीवन चरित 'प्रताप' मे देना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश 'माधव प्रसाद मिश्र के पत्र' से लिया गया है। जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो) में संकलित किया गया है। मिश्र जी ने यह पत्र श्री बालमुकुन्द गुप्त के नाम लिखा था। उन्हें किसी से अफवाह रूप में सूचना प्राप्त हुई थी कि उनके गुरु श्रीधर श्री महाराज डासने वालों का स्वर्गवास हो गया है। लेखक के लिए यह सूचना आघात थी। इसलिए वह उसके सच को जानना चाहते थे। उन्होंने श्री बालमुकुन्द गुप्त से पत्र के माध्यम से यह जानकारी प्राप्त करनी चाही थी।

व्याख्या – मिश्र जी के दुःख भरी वाणी में गुप्त जी से पूछा कि क्या महात्मा पं॰ श्रीधर जी महाराज डासने वालों के स्वर्गवास का समाचार सच था । अत्यन्त दुःख भरी भावात्मक शैली में काल को सम्बोधित करते हुए माना कि उसने उनकी मातृभूमि के प्रति अन्याय किया है। पण्डित जी उनकी मातृभूमि के एकमात्र अमूल्य रत्न थे। मृत्यु ने उसे भी अपने पास बुला लिया। लेखक स्वयं को भावावेश में असहाय–सा मानता है। उसे लगता है कि वह इस विषय में और कुछ भी नहीं लिख सकेगा। उसका दुःखी मन अधिक सोच नहीं सकता। वह पूर्ण रूप से शोकसागर में डूबा हुआ है। वह चाहता है कि इस दुर्भाग्यपूर्ण समाचार की सच्चाई का पता लग जाए कि उनका देहान्त कब, कहां और किस रोग से हुआ। मिश्र जी यह भी आग्रह करते हैं कि इस दुखद समाचार का प्रकाशन 'प्रताप' नामक पत्र में भी किया जाए। पण्डित जी का जीवन वृत्त भी छापा जाए।

विशेष –

1. मिश्र ने गुरुवर के प्रति अपने अगाध प्रेम–भाव और श्रद्धा को मार्मिक ढंग से प्रकट किया है।
2. भावात्मक शैली की प्रधानता है। ''हाय ! हाय !' शब्दों के प्रयोग से नाटकीयता की सृष्टि हुई है।
3. तत्सम शब्दावली का सहज–सुन्दर प्रयोग प्रभावपूर्ण है।
4. लेखक की भाषा में लाक्षाणिकता का गुण विद्यमान है।

अभी से ग्रीष्म ऋतु निज प्रभाव दिखा रही है। इ धर महामारी प्राण–प्राण ले रही है। सच पूछिये तो आज दिन काशी वस्तुतः महाश्मशन हो रही है, धन्य हैं आप जो इस समय में मातृभूमि में सानन्द हैं और राजा साहब ने रुपये दिया कि नहीं सो लिखना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश 'माधव प्रसाद मिश्र के पत्र' से लिया गया है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो) में संकलित किया गया है। श्री माधव प्रसाद मिश्र ने श्री बालमुकुन्द गुप्त के नाम पत्र लिख कर अपने स्वास्थ्य की जानकारी प्रदान की थी।

व्याख्या – श्री मिश्र ने गुप्त जी के पत्र का उत्तर देते हुए बताया था कि उनके वापिस लौटने के बाद गर्मी के मौसम ने अपना रंग दिखाया था। उन्हें दस्तों की बीमारी ने परेशान कर दिया था। गर्मी की ऋतु, केवल अपनी गर्मी से ही परेशानी नहीं लाती, बल्कि तरह–तरह की बीमारियां भी अपने साथ लाती है। उन से जनसामान्य प्रभावित होता है। हर घर में कोई न कोई इसका शिकार बनता है। महामारी ने जगह–जगह अपने पैर पसार लिए हैं, लोग मर रहे हैं। जीवन देने वाली काशी नगरी आज महाशमशान का रूप ले चुकी है। लोग अपनी जान से हाथ धो रहे हैं। गर्मी और इसके कारण फैलने वाली बीमारियों ने सभी को बुरी तरह से प्रभावित किया हुआ है। लेखक का मानना है कि गुप्त जी धन्य हैं क्योंकि वे अपनी मातृभूमि में सूखपूर्वक हैं। लेखक जानना चाहता है कि क्या राजा साहब ने साहित्यिक कार्य के लिए रुपये दिये या नहीं।

विशेष –

1. ग्रीष्म ऋतु के व्यापक प्रभाव ढंग से अंकित किया है। गद्य में भी पद्य सी सरसता विद्यमान है।
2. तत्सम शबदावली की अधिकता है।
3. भावाात्मक की प्रधानता है।
4. वाक्य संरचना पर पुरानी हिन्दी का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।
5. मुहावरों का सटीक प्रयोग भाषा की जीवन्तता का आधार बना है।

बहुत दिन हुए कि आपके कृपापत्र के दर्शन न हुए, जिसका उचित कारण कोई अब तक ज्ञान न हुआ यद्यपि एक बार बाबू राधाकृष्ण जी ने कुटुम्ब में किसी झगड़े का समाचार दिया था किन्तु फिर कुछ भी इस विषय में न जान सके। कृपा कर अब निज वृत्त से सूचित कीजियेगा। बड़े हर्ष की बात है कि पूज्यपाद श्री श्रीधर जी के मिथ्या समाचार उड़ाने वालों का मुंह काला हुआ।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश 'माधव प्रसाद मिश्र के पत्र' से लिया गया है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' (भाग–दो) में संकलित किया गया है। मिश्र जी ने त्रिपुरा भैरवी रामलाल का मठ, काशी से श्री बालमुकुन्द गुप्त को लिखा था कि बहुत लम्बे समय से उनके दर्शन इन्हें नहीं हुए।

व्याख्या – लेखक की गुप्त जी से घनिष्टता थी । वह सदा ही उन से मिलने और उनकी जानकारी प्राप्त करने को उत्सुक रहते थे। कई दिन तक पत्र प्राप्त न करने के कारण वह इस विषय में जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। उन्हें इन का सुख–दुःख अपना लगता है। कई दिन पहले बाबू राधाकृष्ण जी ने इनके परिवार में होने वाले किसी झगड़े का समाचार दिया था पर इसके बारे विस्तार से वह कुछ न जान सके। इसलिए उनके मन में इस बारे जानने की इच्छा थी। लेखन ने गुप्त जी से आग्रह किया कि वे घर और घर के सदस्यों के विषय में उन्हें लिखें। लेखक को इस जानकारी से अपार प्रसन्नता प्राप्त हुई थी कि पूज्यपाद श्री श्रीधर जी के देहावसान की झूठी अफवाह उड़ने वाले व्यक्ति के बारे में पता चल गया, उनका मुँह काला हुआ।

विशेष –

1. लेखक के हृदय में गुरुवर और अपने प्रिय गुप्त जी के विषय में जो कोमल भाव थे वे सहज रूप से प्रकट हुए हैं। कथन में मार्मिकता है।
2. तत्सम और तद्भव शब्दावली का सहज–सुन्दर प्रयोग सराहनीय है।
3. मुहावरों के सटीक प्रयोग ने कथन के प्रभाव को बढ़ाया है।
4. भावात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।
5. सूक्ष्मभावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

महामारी का प्रचण्ड प्रकोप अद्यावधि शान्त नहीं हुआ, प्रत्युतः प्रतिदिन विस्तारित होता जाता है। मुझको आराम है किन्तु अच्छा किंचितमात्र नहीं, ग्रीष्म से हृदय व्याकुल है, हिसार पाठशाला के शुभ समाचार से विशेष आह्लाद है। यहाँ महामंत्री जी के बिना इस स्थान के कार्यालय की आशा निष्फल हुई, राजा शशिशेखर भी हतोत्साह हुए। यहां दक्षिणीय नारायण शास्त्री भी इन्कार कर गये। राजा जी के एक मात्र बाह्याडम्बर से सभी विस्मित से हैं। यदि भारत भास्कर श्री पं॰ दीनदयाल जी आपके पास आवे तो आप एक बार उन्हें इधर आने की सहमति देना ––इधर आये बिना कथमपि मण्डल मामला शान्त नहीं होगा। उनसे मेरी प्रणति के पश्चात् कहना कि दास को क्यों भूल गये। उनके पास नहीं हो तो लेखनी, पत्र और मसी पात्र भी देकर उपरोक्त पता भी देना।

प्रसंग – प्रस्तुत पत्र–अंश हमारी पाठ्य–पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' से अवतरित है जिसे माधव प्रसाद मिश्र के द्वारा रचा गया है। मिश्र जी ने श्री बाल मुकुन्द गुप्त के नाम अनेक पत्र लिखे थे। उनके प्रति लेखक के हृदय में अपार स्नेह–भाव था।

व्याख्या – वाराणसी के सत्य नारायण मन्दिर से लिखे गए इस पत्र में लेखक ने ग्रीष्म ऋतु में फैले हैजे के प्रकोप का उल्लेख किया है कि महामारी का भंयकर प्रकोप समाप्त नहीं हुआ, बल्कि वह दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। लेखक ठीक तो हो गया है पर अभी गर्मी के प्रभाव के कारण व्याकुल रहता है। उसकी बेचैनी बनी रहती है। हिसार पाठशाला में हुई काय वाही के परिणाम से मिश्र जी को अपार प्रसन्नता है। यहाँ महामंत्री जी के अभाव में कार्यालय की आशा नहीं रही है। राजा शशिशेखर का उत्साह कुण्ठित हुआ है, वे निरुत्साहित हैं। यहां दक्षिणीय नारायण शास्त्री भी इन्कार कर गए हैं। राजा जी की करनी कथनी में बहुत अन्तर था। इसलिए उन के बाहरी आडम्बरों के बारे जानकर सभी हैरान हैं। लेखक ने गुप्त जी से आग्रह किया है कि यदि भारत भास्कर श्री पं॰ दीनदयाल जी उनके पास आएं तो उन्हें निवेदन कर उनके पास भेजें, क्योंकि उनके आए बिना कथमपि मण्डल मामला शान्त नहीं हो सकता। लेखक ने गुप्त जी को कहा कि उनकी ओर से उन्हें प्रणाम करने के पश्चात् पूछें कि वे इन्हें क्यों भूल गए हैं। यदि उनके पास लिखने के लिए लेखनी, पत्र और स्याही न हो तो ये सब देकर उन्हें लेखक का पता बता देना ।

विशेष –

1. लेखक ने सहजभाव से गुप्त जी के प्रति अपना विश्वास और प्रेमभाव प्रकट किया है।
2. तत्सम–तद्भव शब्दावली का सुन्दर समन्वित प्रयोग किया गया है।
3. भावात्मकता के साथ विवरणात्मता भी विद्यमान है।
4. लेखक ने संकेतात्मकता पद्धति को अपनाया है।

धर्म सभा भी सिरे से चेत गई है। पर हैजे के अचानक फैल जाने से सब उत्साह भंग हो गया। मेरे इधर आने की कोई सम्भावना नहीं थी पर वहां दो तार पहुंचे कि घर में सब आदमी हैज़े से बीमार हैं। मैंने सोचा था कि वाह खूब बेड़ा पार हुआ। पर यहाँ आकर देखा तो सब ज्यों के त्यों मिले। हमारे घर में तीन आदमियों के बचने की कुछ भी उम्मीद नहीं रही तो सब ज्यों के त्यों मिले। हमारे घर में तीन आदमियों के बचने की कुछ भी उम्मीद नहीं रही थी पर सब आरोग्य हो गये। यद्यपि भिवानी में आदमी मरे तो अधिक नहीं पर अधमरे बहुत हो गये थे। लोग समझते थे कि मुम्बई की तरह यहां भी एक (इतिश्री) होगी पर भगवान ने कृपा की। अब हैजा नहीं है पर बूंद एक नहीं। त्राहि–त्राहि मच रही है। देखें भगवान क्या करें ?

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य–पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' में संकलित पत्र से लिया गया है। जिसके रचयिता श्री माधव प्रसाद मिश्र हैं। उन्होंने यह पत्र श्री दीनदयालु शर्मा के नाम भिवानी से लिखा था। पत्र–लेखक ने अपने क्षेत्र में हैजे के प्रभाव की व्यापकता को प्रकट किया है।

व्याख्या – मिश्र जी का श्री शर्मा को इस बात की जानकारी देना है कि धर्म सभा फिर से सक्रिय हो गई है। उसकी गतिविधियां नये सिरे से जाग गई हैं पर क्षेत्र में हैजे का प्रकोप इसकी सक्रियता में बाधक बनी है, सब का उत्साह भंग हो गया है। लेखक के घर वापिस लौटने की अभी कोई योजना नहीं थी पर घर से मिले दो तारों के कारण उन्हें वापिस लौटना पड़ा। उन्हें बताया गया था कि घर में सब हैजे के कारण बीमार हैं। लेखक ने व्यंग्य का सहारा लेकर लिखा कि उसने सोचा था कि हैजे से कुछ लोग ईश्वर को प्राप्त कर गए होंगे पर वापिस आकर पाया कि सब ठीक–ठाक हैं। घर के सभी सदस्य ज्यों के त्यों हैं। घर में तीन लोग मृत्यु के द्वार तक पहुंच कर वापिस आ गए, सब के सब ठीक हो गये। भिवानी में हैज़े से अधिक लोग मरे तो नहीं पर अधमरे अनेक हो गए थे। लोगों का मानना था कि मुम्बई की तरह यहां भी अनेक लोग भगवान् को प्यारे हो जाएंगे, मौत का शिकार हो जाएंगे पर ईश्वर की कृपा से ऐसा नहीं हुआ। अब भिवानी में हैजे का कोई प्रभाव शेष नहीं रहा पर बूंद एक नहीं बची, सभी अभावग्रस्त हैं। सब तरफ़ त्राहि–त्राहि मची हुई है। लोग परेशान हैं। सब ईश्वर की इच्छा है। देखते हैं कि ईश्वर क्या करता है।

विशेष –

1. लेखक ने भिवानी में फैले हैजे के प्रकोप का वर्णन किया है। उसकी लेखनी में छिपे व्यंग्य की झलक दिखाई देती हैं।
2. तत्सम ओर तद्भव शबदावली का समन्वित प्रयोग किया गया है।
3. भावात्मक शैली विद्यमान है।
4. मुहावरों के सटीक प्रयोग से अभिव्यक्ति प्रभावी हो गई है।

वृन्दावन दिखाया, अच्छा किया। नोटिस उसने नहीं लिखा यह भी रसीला मान होगा या आपकी.....जो हो, आप क्या कर रहे हैं, क्या हो रहा है ? क्या आप इधर–उधर फिर रहे हैं। जब इस रहस्य को आप प्रकट नहीं करना चाहते तब हम भी क्यों 'मूसलचन्द' बन कर आप को व्यग्र करें।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य–पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' से उद्धृत किया गया है। श्री माधव प्रसाद मिश्र द्वारा रचित पत्रों में पं॰ दीन दयालु शर्मा के नाम लिखे गए पत्र से अवतरित इन पंक्तियों में लेखक ने अपने भावों को आत्मीय ढंग से प्रकट किया है। उनके द्वारा कथित बातों में कटाक्ष विद्यमान हैं

व्याख्या – मिश्र जी के द्वारा पं॰ दीनदयालु शर्मा को सम्बोधित करते हुए प्रशंसा की गई है कि उनके सद्प्रयास से वे वृन्दावन जा सके, उसे देख सके। पत्रकारों की तरह लाक्षणिक भाषा का प्रयोग करते हुए उनका कहना है कि नोटिस नहीं लिखा गया। शायद मान वश ऐसा किया गया होगा कि वह कार्य करने के लिए बार–बार अनुरोध किया जाए या शर्मा जी के संकेत पर उसे नहीं लिखा गया होगा। लेखक जानना चाहता है कि शर्मा जी उन दिनों किन कार्यों में व्यस्त हैं। क्या वे इधर–उधर घूमने में ही व्यस्त हैं। उलाहने भरे स्वर का प्रयोग करते हुए कहते हैं कि यदि वे अपने रहस्यों, कार्यक्रमों और व्यवस्थाओं को प्रकट ही नहीं करना चाहते तो उन्हें उनके बारे में पूछना भी नहीं चाहिए। दाल–भात में मूसल चन्द बनने का कोई लाभ नहीं है। व्यर्थ की दखलन्दाजी उचित नहीं होती। इससे उत्तर देने वाले की व्यग्रता बढ़ती है, सम्बंधों में दरार आती है।

विशेष –

1. लेखक की स्पष्टवादिता प्रकट करती है कि श्री शर्मा के साथ उनकी घनिष्टता है।
2. व्यंग्यात्मकता का भाव छिपा हुआ है।
3. मुहावरे–लोकोक्ति के प्रयोग से भाषा जीवन्त हो उठी है।
4. तत्सम शब्दावली की अधिकता है।
5. 'रसीला मान', 'मूसलचन्द' में लाक्षणिकता विद्यमान है।

भगवान् विश्वनाथ जी के दरबार में यथासमय उपस्थित हुआ। सर्वत्र आपकी भी सिफारिश की। पं॰ राममिश्र प्राणी नहीं मिले। बरेली वैश्य कान्फ्रैंस मं गये हैं। 13 वर्ष के बालक केशव की वार्ता से बहुत ही सुसन्तुष्ट हुआ। ईश्वर उसे चिरायु करें।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य–पुस्तक' अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' में संकलित 'माधव प्रसाद मिश्र के पत्र' से अवतरित है। मिश्र जी ने पं॰ दीन दयालु शर्मा को बनारस से लिखे अपने पत्र में वहां की जानकारी विस्तार से दी थी। यह अवतरण पत्र का पहला भाग है।

व्याख्या – मिश्र जी ने श्री शर्मा को लिखे पत्र में बताया कि वे ठीक समय पर भगवान विश्वनाथ के मन्दिर में पहुंच गए थे। वहां पूजा–अर्चना कर केवल अपने लिए ही भगवान् से आशीर्वाद नहीं मांगा, बल्कि शर्मा जी के कल्याण के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। बनारस में लेखक को पं॰ राममिश्र जी से मिलना था, लेकिन वे नहीं मिले। वे वैश्य कान्फ्रैंस में हिस्सा लेने के लिए बरेली गए हुए थे।

उनके तेरह वर्षीय पुत्र केशव से लेखक की भेंट हुई। उससे बातचीत कर लेखक को अति प्रसन्नता हुई। उसे अति संतोष हुआ। लेखक कामना करता है कि वह किशोर लम्बी आयु प्राप्त करे।

विशेष –

1. लेखक ने ईश्वर के प्रति अपनी असीम आस्था भाव को प्रकट किया है।
2. संस्कृत शब्दावली के साथ सहज रूप से अंग्रेजी शब्द कान्फ्रैंस का प्रयोग किया गया है।
3. वर्णनात्मकता का पुट विद्यमान है।
4. लेखक के हृदय में व्याप्त वात्सल्य का भाव उनके कथन से ही प्रकट हो गया है।

आप यह न समझिए कि 'सरस्वती' के समान 'सुदर्शन' सर्वप्रिय न होगा। आप की कृपा चाहिए, उत्तरोत्तर इस की भी वृद्धि होगी। कई प्रकार के मित्र बन रहे हैं। तीसरे मास तक इसका यथार्थ आकार हो जायेगा।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य–पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' में संकलित 'श्री माधव प्रसाद मिश्र के पत्र' पाठ से ली गई हैं। लेखक ने पं॰ देवी दयालु शर्मा के नाम काशी से पत्र लिखा था। सन् 1900 के आस–पास हमारे देश में हिन्दी में छपने वाली पत्रिका 'सरस्वती' पाठकों में बहुत प्रचलित है। सभी संपादक चाहते थे कि उनके पत्र–पत्रिकाएं भी उसके समान ही लोक प्रिय हो जाएं। लेखक भी 'सुदर्शन' नामक पत्र का सम्पादक था। उसके विषय में उन्होंने शर्मा जी को लिखा हैं

व्याख्या – आप यह न समझिए कि लेखक के द्वारा संपादित पत्र 'सुदर्शन' कम महत्त्वपूर्ण है। यह निश्चित है कि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के द्वारा संपादित पत्र 'सरस्वती' लोगों में अति लोक प्रिय है पर 'सुदर्शन' की उसके समान सर्वप्रिय पत्र बन जाएगा। आप की कृपा चाहिए। निश्चित रूप से इसकी प्रसिद्धि बढ़ती जाएगी। इनके प्रचार–प्रसार में वृद्धि होगी। 'सुदर्शन' की सहायता के लिए कई प्रकार के मित्र बने हैं। उनकी सहायता से इस रूप–आकार–गुण बढ़ेगे। मिश्र जी को आशा है कि तीसरे मास तक 'सुदर्शन' का आकार काफ़ी बढ़ जाएगा।

विशेष –

1. लेखक का स्वर आशावादिता से परिपूर्ण है। वह सच्चे प्रयत्न से अपनी पत्रिका 'सुदर्शन' का प्रचार–प्रसार के लिए प्रयत्न करना चाहता है।
2. तत्सम शब्दावली का पर्याप्त प्रयोग किया गया है।
3. विवरणात्मक शैली का प्रयोग हैं
4. अभिव्यजंना का प्रभावीरूप है

खण्ड ग : माधव प्रसाद मिश्र

साहित्यिक परिचय

आधुनिक हिन्दी–साहित्य के सजग और जोशीले साहित्यकार श्री माधव प्रसाद मिश्र का जन्म 26 सितम्बर, सन् 1871 को हरियाणा में ज़िला हिसार के कूँगड़ नामक गांव में हुआ था। इनके पिता पं॰ राम जी दास संस्कृत के प्रतिष्ठित विद्वान् थे। हिन्दी के प्रति अपार प्रेम लेखक ने इन्हीं से संस्कार रूप में प्राप्त कर लिया था। इनका देहावसान इसी गांव में प्लेग से 16 अप्रैल, सन् 1907 में हुआ था। यह सनातन धर्म के कट्टर समर्थक भारतीय संस्कृति के पोषक और देश प्रेमी विद्वान् थे।

रचनाएँ –

मिश्र जी श्रेष्ठ सम्पादक थे। इन्होंने 'वैश्योपकारक' और 'सुदर्शन' नामक पत्रों का सम्पादन कार्य किया था। इनका साहित्यिक जीवन 'सुदर्शन' से आरम्भ हुआ था। अपने सम्पादन काल में इन्होंने साहित्य, धर्म, संस्कृति, स्वदेश प्रेम, प्राचीन कवियों, धर्म–ग्रंथों,

पर्व–त्योहार, उत्सव, तीर्थ–स्थान, यात्रा, राजनीति आदि विभिन्न विषयों से सम्बन्धित उनके लेख लिखे। 'सुदर्शन' पत्रिका में इनकी अनेक कविताएं भी प्रकाशित हुई थीं। इनके द्वारा लिखित एक लम्बा पद्यात्मक पत्र अभी भी श्री नवल किशोर गुप्त के कलकत्ता (कोलकाता) स्थित संग्रहालय में सुरक्षित है। इनकी मृत्यु के पश्चात् इनके दो ग्रन्थ प्रकाशित हुए थे। 1. मिश्र निबंधावली, 2. आख्यायिका सप्तक। यह कहानीकार भी थे।

साहित्यिक विशेषताएँ –

1. **ओजस्वी–भाव** – मिश्र जी का सारा साहित्य ओजस्वी भावों से भरा हुआ है। वह किसी भी अवस्था में भारतीय ध र्म–संस्कृति और धर्म–ग्रंथों का विरोध सहन नहीं कर पाते थे। इनका खून खौल उठता था और यह डटकर उसका विरोध करते थे। इनके विरोध में आवेश, तर्क और भावुकता का प्रवाह होता था। इन्होंने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और श्रीधर पाठक की इसी आधार पर कड़ी आलोचना करते हुए 'वेवर का भ्रम' नामक लेख लिख था। उनके इसी स्वभाव के कारण चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने लिखा था, ''मिश्र जी बिना किसी अभिनिवेश के लिख नहीं सकते। यदि हमें उनसे लेख पात्र हैं तो सदा एक–न–एक टंटा उनसे छेड़ ही रखा करें।''

2. **देश–प्रेम**– मिश्र जी में देश–प्रेम के प्रति गहरा भाव छिपा हुआ था। जब देश की स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन चल रहा था तब यह उसके प्रति पूर्ण रूप से समर्पित थे। जब महामना मदनमोहन मालवीय ने छात्रों को राजनीतिक आन्दोलनों से दूर रहने का सुझाव दिया था तब इन्होंने मालवीय जी के नाम डटकर विरोध किया था, उनके विरूद्ध पत्रों में लिखा था। देश–प्रेम की भावना के कारण इन्होंने श्रीधर पाठक की इस बात को बुरा कहा था कि उन्होंने अपनी कविता भारत की ऋतु–शोभा या देश–छटा का वर्णन करते समय केवल सुख और खुशी का ही चित्रण किया था। उन्हें देश के असंख्य दीन–दुःखियों के पेट की ज्वाला और कंकाल जैसे शरीर दिखाई क्यों नहीं दिए थे।

3. **भारतीय धर्म–संस्कृति के उपासक** – मिश्र जी भारतीय धर्म–साधना और संस्कृति के पुजारी थे। वे किसी भी अवस्था में इनके विरोध में कुछ नहीं सुन सकते थे। इन्होंने संस्कृति, धर्म और दर्शन से सम्बन्धित चिन्तन को प्रकट किया था।

4. **व्यंग्यात्मकता** – मिश्र जी श्रेष्ठ पत्रकार ही नहीं थे, बल्कि बहुत अच्छे व्यंग्य प्रधान टिप्पणियां करने वाले भी थे। ये गंभीर विषय को भी रोचकतापूर्ण ढंग से कह देने की क्षमता रखते थे। पं॰ दीनदयालु शर्मा के नाम लिखे पत्र में इसी का परिचय देते हुए इन्होंने लिखा है, ''जिस प्रतिज्ञा से और जिस संकल्प से हमने 'सुदर्शन' सम्भाला है, आपके आशीर्वाद से उसमें फर्क नहीं पड़ेगा। इसके लिए न तप 'यतो धर्म स्ततो जय' की दुहाई की जरूरत है और न किसी की साक्षी को। आपके उपन्यास 'अन्तिम परिच्छेद' हम काशी में कर चुके हैं। अब उसकी आवश्यकता नहीं। जो आपकी देवी है, जो आपके आराध्य, वे हमारे परमाराध्य। हाँ यदि आप पास होते तो कलकत्ता (कोलकाता) होली की पूर्ति कर लेते।''

5. **वैयक्तिकता** – मिश्र जी ने अपने पत्रों में वैयक्तिकता को अत्यधिक महत्त्व दिया है। निरन्तर आने वाले शारीरिक कमज़ोरी और बीमारी का इन्होंने बार–बार पत्रों में उल्लेख किया है। ऐसे वर्णन के समय ऐसा प्रतीत होता है जैसे ये किसी स्वजन से बातचीत कर रहे हों। अन्य साहित्यकारों के साथ इन्होंने वही सहजता और आत्मीयता के साथ अपने सुख–दुःख बांटे हैं। आर्थिक बाधाओं का भी इन्हें जीवन में बार–बार सामना करना पड़ा था, जिसका निवारण ये मित्रों से उधार मांग कर पूरा कर लेते थे, जैसे–

(क) बाबू देवकी नन्दन जी के पत्र से विदित हुआ कि 110 रुपये का मनीआर्डर मिल गया, काम चल निकलेगा, खेद है कि आपको दूसरे प्रकार के इन्तजाम से रुपये भेजने पड़े।

(ख) 16 फरवरी को पत्र में 200 लिखे थे, मिले उसके आधे। पर ये हैं एक लक्ष के बराबर। हमें आपके आशीर्वाद का अधिक भरोसा है।

(ग) यदि आप कृपा करके धर्मार्थ या इनाम अथवा पुरस्कार ऋण स्वरूप में इस समय 200 रुपये भेज दें तो मैं अखबार यहां से शीघ्र ही निकाल सकूंगा।

6. **भाषा–शैली** – मिश्र जी पत्रकार थे इसलिए इनकी भाषा में सहजता और गतिशीलता विद्यमान थी। इनकी शैली प्रगल्भ और विचार जोशपूर्ण होते थे। इन में विचारात्मकता के साथ भावात्मकता की अधिकता थी। इनकी धारा प्रवाह हृदय–स्पर्शी अति प्रभावपूर्ण थी, जैसे ''हाय ! हाय ! आज मैं यह क्यों आप से पूछने लगा कि क्या महात्मा पं॰ श्रीधर जी महाराज डासने वालों का स्वर्गवास हो गया। हा ! काल आज तूने यह क्या अनर्थ किया जो हमारी मातृभूमि के मात्र रत्न का अपहरण कर लिया। प्यारे अधिक क्या लिखूं। शोकासिन्धु में निमग्न हूं।'' मिश्र जी की भाषा में सरसता और सरलता सर्वत्र विद्यमान है। इन्होंने बहुत लम्बी वाक्य–रचना प्रायः नहीं की है पर स्थान–स्थान पर सूक्तियों, मुहावरे लोकोक्तियों का प्रयोग अवश्य किया है। इन्होंने खड़ी बोली का प्रयोग किया था पर साथ ही हरियाणवी का प्रयोग भी किया। इनके द्वारा रचित 'लड़की की बहादुरी' को हरियाणवी भाषा में लिखित पहली कहानी का श्रेय दिया जाता है। इन्होंने तत्सम और तद्भव शबदावली का समन्वित प्रयोग किया था।

वास्तव में श्री माधव प्रसाद मिश्र हरियाणा के वे उज्ज्वल रत्न हैं जिन की आभा से अभी भी हिन्दी साहित्य दमक रहा है। हिन्दी के अनेक साहित्यकारों और पत्रकारों में उनकी विशिष्ट पहचान है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 पत्र आत्मीयता और सामाजिक सम्बंधों के प्रतीक होते हैं–मिश्र जी के पत्रों के आलोक में इस तथ्य को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर वैयक्तिकता, अनौपचारिकता, हार्दिकता आदि के कारण पत्रों को आत्मीयता और सामाजिक सम्बंधों का प्रतीक माना जाता है। पत्र–लेखन मनुष्य के लिए सहज और अनिवार्य क्रिया है पर जब किसी व्यक्ति के पत्र उसके व्यक्तित्व की गरिमा के कारण मानव समाज को प्रभावित करते हैं तब वे महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। पत्रों से व्यक्तिगत सम्बंधों की नींव सुदृढ़ होती है। इससे आनन्द की अनुभूति होती है। जिस प्रकार हरे–भरे पत्तों के बिना कोई पेड़ सूखा और नीरस लगता है उसी प्रकार स्वजनों के प्रेमपूर्ण पत्रों के बिना जीवन सूना–सूना सा प्रतीत होता है– जीम सपमि व उिंद ूपजीवनज समजजमत पे कमंजीण निकट सम्बन्धियों और मित्रों की निकटता का सुख–लाभ करने का एक–मात्र उपाय पत्र–लेखन ही है।

प्रायः पत्रों में आत्मीयता की अधिकता होती है। इनमें लेखक अपनी भावनाओं, विचार–धाराओं, मनोवृत्तियों, सफलताओं और असफलताओं का चित्रण करता है। इनमें लेखक के व्यक्तित्व के शारीरिक पक्ष की अपेक्षा मानसिक पक्ष का उद्घाटन अधिक होता है। लेखक की शिक्षा–दीक्षा, पारिवारिक स्थिति, कष्टों, अभावों आदि की झलक मिलती है। श्री माधव प्रसद मिश्र ने अपने पत्रों में अपनी बीमारी और पैसे के अभाव को बार–बार लिखा है और निस्संकोच सहायता की मांग की है जैसे

1. आपके जाने के बाद मुझ को दस्तों की बीमारी ने दुखित कर दिया था। अब तो कुछ शान्ति हैं
2. राजा साहब ने रुपया दिया कि नहीं सो लिखना।
3. कुछ बीमारी है, मुझे यहां का जल नहीं रुचता अतः पुनः अयोध्या लौट जाऊँगा।
4. आपके उग्र ज्वर संताप के कारण उसी दिन से मुझ को भी ज्वर हुआ, अब कुछ आराम है।
5. दो–एक लेख यद्यपि दिये थे सो भी रुग्णावस्था में।
6. यदि आप कृपा कर के धर्मार्थ या इनाम अथवा पुरस्कार ऋण स्वरूप में इस समय 200/– भेज दें तो मैं अखबार यहां से शीघ्र ही निकाल सकूँ।
7. पत्र में 200 लिखे थे मिले उसके आधे।

मिश्र जी ने आत्मीयता के भावों को प्रकट करते हुए अनेक बार बिना किसी संकोच व्यंग्य का सहारा भी लिया है। व्यंग्य लेखक वहीं सम्भव होता है जहां दूसरा उसका बुरा न माने। इन्होंने अपनी बात को बिना लाग–लपेट प्रकट किया है–

''क्या आप इधर–उधर फिर रहे हैं। जब इस रहस्य को आप प्रकट नहीं करना चाहते तब हम भी क्यों 'मूसलचन्द' बन कर आप को व्यग्र करें।'' मिश्र जी ने अति आत्मीयता के कारण गहरा व्यंग्य भी किया है –'पर हैजे के अचानक फैल जाने से सब उत्साह भंग हो गया। मेरे इधर आने की कोई सम्भावना नहीं थी पर वहां दो तार पहुंचे कि घर में सब आदमी हैजे से बीमार हैं। मैंने सोचा था वाह खूब बेड़ा पार हुआ पर यहां आकर देखा तो सब ज्यों के त्यों मिले। हमारे घर में तीन आदमियों के बचने की भी कुछ भी उम्मीद नहीं रही थी पर सब आरोग्य हो गये।''

पत्र सामाजिक संबंधों के सच्चे प्रतीक होते हैं। समय के अनुसार मन के भाव भिन्न रूप लेते रहते हैं। इन्हीं को प्रकट करते हुए मिश्र जी ने पूज्यवर, पूज्यचरण, मान्यवर, प्रियवर, स्वस्त्यस्तु, सुहृदयवर, प्रिय महोदय, सुहृदय, श्रीमन्, प्रिय मित्रेषु आदि सम्बोधनों को प्रयुक्त किया है। सामाजिक बंधनों के कारण ही उन्हें पं॰ श्रीधर जी महाराज डासने वालों के स्वर्गवास की अफवाह ने हिला कर रख दिया था –''हा ! काल आज तुने यह क्या अनर्थ किया जो हमारी मातृभूमि के एक मात्र रत्न का अपहरण कर लिया। प्यारे, अधिक क्या लिखूं शोक सिन्धु में निम्न हूँ।'' सामाजिकता के कारण ही लेखक दूसरों के घर में झगड़े के विषय में जानना चाहता है। लेखक के सामाजिक सम्बंध प्रायः अन्य पत्रकारों, संपादकों, दाताओं आदि से ही थे इसलिए उन्होंने उन्हें उसी के सम्बंध में पत्र लिखे। सामाजिकता के कारण उन्हें जिन लोगों की संगत प्राप्त होती थी वे उनके प्रति अपने हृदय के भावों को प्रकट कर लेते थे–''भगवान विश्वनाथ जी के दरबार में यथा समय उपस्थित हुआ। सर्वत्र आप की भी सिफारिश की। पं॰ राममिश्र प्राणी नहीं मिलें । बरेली वैश्य कान्फ्रैंस में गये हैं। 13 वर्ष के बालक केशव की वार्ता से बहुत ही सन्तुष्ट हुआ। ईश्वर उसे चिरायु करे।''

पत्र वास्तव में ही आत्मीयता और सामाजिक सम्बंधों के प्रतीक होते हैं। पत्र भी कविता की तरह–हृदय के कोमल भाव हैं जहां पत्र लेखक अपने हृदय को उँड़ेल कर रख देता है पर हर व्यक्ति में यह कला नहीं होती। श्री माधव प्रसाद मिश्र इस कला में निपुण थे। उन्होंने आत्मीयता और सामाजिकता को एक साथ लेकर चलने में सफलता प्राप्त की।

प्रश्न 2 माधव प्रसाद मिश्र के पत्र तत्कालीन साहित्यिक चेतना को उजागर करने वाले महत्त्वपूर्ण दस्तावेज हैं। इस दृष्टि से मिश्र जी के पत्रों का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर माधव प्रसाद मिश्र द्विवेदी युगीन पत्रकार थे जिन्होंने अपने पत्रों के माध्यम से तत्कालीन साहित्यिक चेतना को उजागर किया है। यद्यपि भारतेन्दु काल में पत्र–लेखन परम्परा थी तो भी हिन्दी में पत्र–साहित्य की विधिवत् परम्परा का सूत्रपात द्विवेदी–युग में ही हुआ था । मिश्र जी ने बाबू लाल मुकुन्द गुप्त और पं॰ दीन दयाल शर्मा को अनेक पत्र समय–समय पर लिखे थे जिनसे लेखक के चिन्तन, संघर्ष और साहित्यिक चेतना के दर्शन होते हैं। इनके पत्रों से स्पष्ट प्रकट होता है कि उन्होंने अभावों, कष्टों, और रोगों का सामना करते हुए अपने साहित्यिक कर्म से कभी मुंह नहीं मोड़ा था। इनके पत्रों में निहित साहित्यिक चेतना को अग्रलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

(क) साहित्यिक स्पर्द्धा का भाव – मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि जो व्यक्ति मन में स्पर्द्धा का भाव लेकर किसी भी क्षेत्र में कार्य करता है उसे सफलता की प्राप्ति अवश्य होती है। द्विवेदी युग में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के द्वारा संपादित सरस्वती सब से अधिक लोक प्रिय पत्र था। प्रत्येक संपादक अपने–अपने पत्र को उसी स्तर पर लाने की चाह अपने हृदय में रखता था, प्रयत्न करता था। श्री माधव प्रसाद मिश्र दो पत्रों के संपादक थे। उन्हें अपने द्वारा संपादित पत्र 'सुदर्शन' में छिपी शक्ति का अहसास होता था और वह इसे 'सरस्वती' के स्तर पर लाने की चेष्टा करते रहे थे। उन्होंने अपने पत्र में स्वयं लिखा था, ''आप यह न समझिए कि 'सरस्वती' के समान 'सुदर्शन' सर्वप्रिय न होगा। आपकी कृपा चाहिए, उत्तरोत्तर इसकी भी वृद्धि होगी। कई प्रकार के मित्र बन रहे हैं। तीसरे मास तक इसका यथार्थ आकार हो जाएगा।'' मिश्र जी हर प्रकार से अपने पत्र का स्तर ऊंचा उठाने का प्रयत्न करते थे। धन की कमी उनके रास्ते में बार–बार रोड़ा अटकाती थी पर फिर भी वह मांग कर, उधार लेकर, पुरस्कार रूप में धन मांग कर अपना काम चला लेते थे। वह हर उस तरीके को अपनाना चाहते थे जिसके द्वारा उनका पत्र 'सुदर्शन' किसी भी प्रकार 'सरस्वती' से आगे निकल जाए– ''मैं जानता था 'सरस्वती' को देखकर सब का मन चलायमान हो जाएगा। इससे जल्दी कर सब से पहले 'सुदर्शन' का प्रकाश किया।

चित्र और लेख भी जैसे चाहिए, संकलन कर सका।'' मिश्र जी सब प्रकार से साहित्यिक विद्वेष–भाव से दूर थे। उनका स्वभाव स्वस्थ साहित्यिक स्पर्द्धा करने वाला था।

(ख) विपरीत स्थितियों में भी कर्मठता का भाव – मिश्र जी पास धन का अभाव सदा ही रहता था। इनका समय वह था जब लोग पत्र–पत्रिकाओं को खरीदना पसन्द नहीं करते थे– कारण चाहे अशिक्षा रहा हो या आम लोगों की गरीबी। वह विज्ञापनों का युग भी नहीं था कि पत्र–पत्रिकाओं को विज्ञापनों से भरकर धन की सुविधा जुटा लो। मिश्र जी दूसरों से मांग कर या उधार लेकर पत्र का प्रकाशन–प्रबंध कर लिया करते थे। उन्होंने अपने पत्रों में गुप्त जी और शर्मा जी को धन की व्यवस्था कराने का बार–बार आग्रह किया है। मिश्र जी को बीमारी भी बार–बार घेरती थी–कभी दस्त तो कभी बुखार। बीमारी की अवस्था में भी वे अपने काम से दूर नहीं होते थे। घर हो या बाहर, वे अपने काम में जुटे रहते थे, सामग्री इकट्ठी करते थे, चित्र बटोरते थे, कविता–कहानियां–निबंध लिखते थे, लिखवाते थे। अपनी और अपनों की बीमारी को अनदेखा करके भी अपने कर्म में जुटे रहते थे।

(ग) साहित्य सम्बंधी समस्याओं का समाधान – लेखन–प्रकाशन से सम्बन्धित अनेक समस्याएं समय–समय पर सामने आती थीं। मिश्र जी पत्र–व्यवहार से या स्वयं अन्य सम्बन्धित व्यक्तियों से विचार विमर्श कर समस्याओं का समाधान कर लिया करते थे। वे सभी प्रकार की बाधाओं को पार करना चाहते थे। किसी के नाराज़ होने की स्थिति में उन्हें मनाना जानते थे। नाराज होने पर भी किसी से नाता नहीं तोड़ते थे। शर्मा जी को लिखे पत्र से इस का स्पष्ट संकेत मिलता है–''सुदर्शन को यदि 200 मुद्रा का ऋण दिला सके तो दिलावें ,ग्राहक बनावें और योग्य पुरुषों, सभा और गज़ट की नामावली पहुँचावें और यह सब न कर सकें तो यह आशीर्वाद ही देते रहें और यह बतलावें कि आप प्रसन्न कैसे हों।''

(घ) तत्कालीन पत्रों और साहित्यिक कृतियों का उल्लेख – मिश्र जी ने अपने पत्रों में तत्कालीन पत्रों का अनेक बार उल्लेख किया है जिससे उनके साहित्यिक परिवेश के प्रति रुचि का पता लगता है। एक निष्ठावान मिशनरी की तरह उन्होंने साहित्यिक चेतना को उजागर किया था, जैसे–

1. राजा शशि शेखर अपनी 'अश्रुधरा' के हिन्दी अनुवाद देखने को उत्कंठित हैं। उन्होंने 'अश्रुधारा' की प्रतियां और भेजी हैं। इच्छा हो तो मंगा लेना।
2. 'प्रताप' मेरे पास न भेजकर, मेरे नाम से अपने पास ही रखो, एक बार ही ले लेंगे।
3. यों तो 'बंगवासी' में कई चिट्ठी मेरी लिखी छपी हैं।
4. मैंने जानता था 'सरस्वती' को देखकर सबका मन चलायमान हो जाएगा।
5. 'मधुसूदन संहिता' के विषय ने दुर्बल हृदय सेठ जी को बहुत कुछ सबल किया।
6. आज सेठ जी से 'दिल्ली दर्बार' वाली पुस्तक का प्रस्ताव किया था।

वास्तव में ही श्री माधव प्रसाद मिश्र के पत्र तत्कालीन साहित्यिक–चेतना को उजागर करने वाले महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ हैं। इनका ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्त्व है।

प्रश्न 3 पत्र–लेखन के तत्त्वों के आधार पर मिश्र जी के पत्रों की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – पत्र–लेखन एक विशेष कला है। हर कला के कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जिनसे कलाकृति की रचना होती है। प्रायः पत्र–लेखन के तत्त्वों में उन तत्त्वों को स्वीकार किया जाता है जो जीवनीपरक साहित्य की अन्य विधाओं में सामान्य रूप से पाए जाते हैं। इन्हें निम्नलिखित शीर्षकों पर आधारित किया जा सकता है– वर्ण्य विषय, विभिन्न व्यक्तियों और घटनाओं के सम्बंध में लेखक की प्रतिक्रिया, वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य।

संक्षिप्तता, सरलता, स्वाभाविकता, आत्मीयता, रोचकता, प्रवाह आदि पत्र की विषय और शैली से सम्बन्धित विशेषताएं हैं।

1. **वर्ण्य विषय** – पत्रों में अनेक प्रकार के विषयों की चर्चा की जाती है। इनमें व्यक्तिगत जीवन, दैनिक कार्यों, समस्याओं, व्यावहारिक धन्धों, साहित्यिक, राजनीतिक पहलुओं आदि अनेक विषयों का चित्रण किया जाता है। पत्रों का मुख्य विषय लेखक स्वयं होता है। उसके व्यक्तित्व की छाप पूरे पत्र पर रहती है चाहे वह किसी भी विषय पर बात करे। श्री माधव प्रसाद मिश्र संपादक थे। इसलिए उनके हर पत्र में संपादक अवश्य बोला है। औपचारिक पत्रों में लेखक का व्यक्तित्व कुछ कम उद्घाटित होता है। वर्ण्य विषय को श्रेष्ठ बनाने के लिए उसमें स्वाभाविकता, सरलता, स्पष्टता आदि गुणों का होना आवश्यक है। श्री टायलर ने अपनी पुस्तक 'लैटर्स ऑफ़ ग्रेट राइटर्स'' में सरलता और स्वाभाविकता को पत्रों के क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने की कुंजी माना है। मिश्र जी के पत्र सर्वत्र सरल और स्वाभाविक हैं, जैसे–''आप का कार्ड मिला। न मैं बड़ा आदमी हुआ न राधा कृष्ण। आप निश्चय रखें। जिस पर आप की पूर्ण कृपा हो वह इस जन्म में बड़ा आदमी नहीं बन सकता। सदैव ही दीन बना रहेगा।'' लेखक के पत्रों का वर्ण्य विषय पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाश, धन–अभाव, बीमारी से सम्बन्धित सूचनाएं आदि ही हैं। उनका संपादकीय रूप बार–बार सामने आया है।

2. **विभिन्न व्यक्तियों और घटनाओं के सम्बंध में प्रतिक्रिया** – श्री मिश्र जी के पत्रों में विभिन्न व्यक्तियों और घटनाओं के प्रति व्यक्तिगत सम्बंध सर्वत्र दिखायी देते हैं। उन्होंने उनके व्यक्तित्व का ही वर्णन नहीं किया बल्कि उनके गुण–दोषों पर टीका–टिप्पणी भी की है, जैसे पं॰ दीन दयाल शर्मा को पत्र में उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा है–''हमने जो कभी–कभी उपहास में दुःख दिया उसका प्रायश्चित भगवान् विश्वनाथ की साक्षी में किया। आप जा`हमें निष्कारण दुःख दे रहे हैं, जाने युधिष्ठिर की तरह इस महापाप का आपको..... प्रायश्चित करना पड़े कि नहीं और क्या लिखूं। पहले ही बहुत पसीना पीस चुका।''

   मिश्र जी ने अपने पत्रों में विभिन्न व्यक्तियों तथा घटनाओं के सम्बंध में जो प्रतिक्रिया व्यक्त की है उससे उनके व्यक्तित्व तथा जिस व्यक्ति का वर्णन किया है उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश पड़ा है।

3. **वातावरण** – वातावरण उन परिस्थितियों का नाम है जिनमें लेखक को संघर्ष करना पड़ा। इस के बिना लेखक का व्यक्तित्व स्पष्ट नहीं होता। मिश्र जी ने अपने पत्रों में आसपास का चित्र ही पस्तुत नहीं किया बल्कि आवश्यकतानुसार सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक आदि परिस्थितियों पर टिप्पणियां भी की हैं। वास्तव में पत्र लेखक का उद्देश्य इस वातावरण को चित्रित करना नहीं होता, इनका चित्रण तो अनायास ही हो जाता है। मिश्र जी ने लिखा है, ''अभी से ग्रीष्म ऋतु निज प्रभाव दिखा रही है। इधर महामारी प्राण–प्राण ले रही है। सच पूछिए तो आज दिन काशी वस्तुतः महाश्मशान हो रही है।'' इस प्रकार के विवेचन से स्पष्ट होता है कि पत्र लेखक वातावरण को सूक्ष्मता से देखने में निपुण है।

4. **भाषा –शैली** – भाषा लेखक के मन में होने वाली एक सहज प्रक्रिया है। भाषा और शैली पत्र के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं। बातचीत में हम स्वयं बोलते हैं पर पत्र–व्यवहार में पत्रों को बोलना पड़ता है। बातचीत में कथन को प्रभावशाली बनाने के लिए संकेतों की सहायता लेते हैं। यही नहीं वहां भूल–सुधार के अवसर होते हैं पर पत्र–लेखन में ये सुविधाएं नहीं होती। जिससे हमें कुछ कहना है वह दूर बैठा है इसलिए पत्र–लेखन में तकनीक अपनानी पड़ती है ताकि दूर बैठे व्यक्ति पर उतना ही प्रभाव पड़ सके जितना सामने बातचीत करने पर पड़ता है। भाषा की प्रभावोत्पादकता बहुत आवश्यक होती है। श्री मिश्र ने ऐसी ही प्रभावपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है जिसका गहरा प्रभाव पड़ता है, जैसे–

''हाय ! हाय ! आज मैं यह क्यों आपसे पूछने लगा कि क्या महात्मा पं॰ श्रीधर जी महाराज डासने वालों का स्वर्गवास हो गया। हा ! काल आज तूने यह क्या अनर्थ किया जो हमारी मातृभूमि के एक मात्र रत्न का अपहरण कर लिया। प्यारे अधिक क्या लिखूं। शोक मग्न में निमग्न हूं। पत्र में संक्षिप्तता बहुत बड़ा गुण है। श्री मिश्र के पत्र संक्षिप्त हैं। उनमें न तो बहुत बड़ा आकार है और न ही अति संक्षेप। खड़ी बोली में रचित पत्रों में तत्सम–तद्भव शब्दावली का सहज प्रयोग किया गया है।

4. **उद्देश्य** – पत्र–साहित्य का उद्देश्य अन्य साहित्यिक विधाओं की तरह आत्माभिव्यक्ति है। इनमें पारस्परिक

सम्बंध, विचार–भावना, आवेग, प्रेरणा आदि की अभिव्यक्ति होती है। लेखक का उद्देश्य आत्म जीवन की व्याख्या करना होता है। मिश्र जी ने पत्रों के माध्यम से अपना अफ़सोस, रोष, स्नेह आदि भावों को सहज रूप से व्यक्त किया है। दूर बैठे–बैठे अपने विचारों–इच्छाओं–मांगों से परिचित कराया है। उन्होंने व्यंग्यात्मक टिप्पणियां की हैं। एक–दूसरे के साथ सुख–दुःख बाँटे हैं : सामाजिक सम्बंधों को पुष्ट किया है। हिन्दी के प्रति चिन्ता, अपना चिन्तन, अभाव, कष्ट, शारीरिक व्यक्तियों की जानकारी और युग का वातावरण चित्रित किया है।

वस्तुतः मिश्र जी ने पत्र–लेखन के सभी तत्त्वों को अपने पत्रों में बड़ी सुन्दरता से स्थान देने में सफलता प्राप्त की है।

प्रश्न 4 माधव प्रसाद मिश्र की भाषा–शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर श्री माधव प्रसाद पत्रकार थे। उन्होंने दो पत्रों का संपादन कार्य किया था। वे लेखन–कार्य में अति निपुण थे। पत्रों में प्रायः भावों की अधिकता रहती है इसलिए उनमें सीधी–सादी, सरल और स्वभाविक भाषा–शैली का प्रयोग किया जाता है। सजावट और अलंकार विधान का प्रायः अभाव रहता हैं आकर्षण अवश्य रहता है जिससे दूर बैठे लोगों के हृदय एक दूसरे को समझ जाते है। पत्र की भाषा गद्यात्मक ही मानी जाती है। मिश्र जी की भाषा शैली को भिन्न आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है।

1. **शब्द–रूप** – मिश्र जी ने अपने पत्रों में खड़ी बोली का प्रयोग करते हुए तत्सम–तद्भव शब्दों को ही प्रमुखता से अपनाया था लेकिन बीच–बीच कोई अंग्रेजी शब्द देने में भी उन्हें झिझक नहीं थी –

   (i) .....और कैलास को **कैबेनेट साइज** में **एचिंग** करवा लेंगे।

   (ii) .....बरेली वैश्य **कान्फ्रैंस** में गये हैं।

   (iii) श्री पं॰ बालमुकुन्द जी अपने पास 'सुदर्शन' के **नोटिस** रखा करें।

   मिश्र जी ने समय–समय पर उर्दू के शब्दों का भी सहज प्रयोग किया है।

2. **पुनरुक्ति शब्दों का प्रयोग** – मिश्र जी ने शब्दों की पुनरुक्ति में संख्या का प्रयोग किया है लेकिन उन्होंने कहीं भी एक–से दो शब्दों के प्रयोग में 2 का प्रयोग नहीं किया। अपने एक पत्र में सम्मान सूचक शब्द श्री को बार–बार न लिख उन्होंने इसके लिए संख्या चिह्नित कर दी है ''बड़े हर्ष की बात है कि पूज्यपाद श्री 6 श्रीधर जी के मिथ्या समाचार उड़ाने वालों का मुंह काला हुआ।''

3. **वाक्य–रचना** : भाषा–विधान में वाक्य–रचना का विशेष महत्त्व होता है। मिश्र जी ने लघु आकार और वृहत् आकार वाले वाक्यों का प्रयोग किया है । कहीं–कहीं उन्होंने लघु वाक्यों के बीच विराम चिह्नों का प्रयोग न कर उन्हें लम्बा आकर दे दिया हैं

4. **विराम चिह्नों का प्रयोग** – मिश्र जी ने अपने द्वारा लिखित पत्रों में विराम चिह्नों का प्रयोग करते हुए भावों की स्पष्टता का विशेष ध्यान रखा है। इनके कारण वाक्यों की प्रवाहात्मकता अच्छे ढंग से प्रकट हुई है, जैसे – ''वृन्दावन दिखाया, अच्दा किया। नोटिस उसने नहीं लिखा यह भी रसीला मान होगा या आपकी .....जो हो, आप क्या कर रहे हैं, क्या हो रहा है ?''

5. **मुहावरों का प्रयोग** – मिश्र जी ने अपने पत्रों में मुहावरों का सहज प्रयोग करके भाषा को प्राणवान बनाया है। लाक्षणिक प्रयोग से भाषा की अभिव्यंजना को बढ़ाया है, जैसे–

   (i) सच पूछिए तो आज दिन काशी वस्तुतः महाश्मशान हो रही है।

   (ii) .....तब हम भी क्यों 'मूसलचन्द' बनकर आप को व्यग्र करें।

   (iii) .....पर सोचा मेरा कहना शेखचिल्ली के समान होगा।

   (iv) मरता क्या न करता के समान चाहे कोई कुछ मूर्खता कर ही बैठे, पर आपके समक्ष महाप्राण

होना कठिन है।

(v) पहले ही बहुत पसीना पीस चुका।

(vi) श्री चरण के कई जमपुरी मित्रों का उन पर दबाव है।

6. **व्यास शैली का प्रयोग** – जिस शैली में भाषा सरल और सुबोध हो, वाक्यावली में मिश्र एक संश्लिष्ट प्रयोग न के बराबर हो तथा भाषा में वाच्यार्थ ही मुख्य हो, उस शैली को व्यास शैली या प्रसाद शैली कहते हैं। पत्र–लेखन में इसी शैली को श्रेष्ठ माना जाता है। मिश्र जी ने अपने पत्रों में व्यास शैली को ही अपनाया था इसलिए उनका कथन शीघ्रता से आत्मसात किया जा सकता है , जैसे –

'गोस्वामी श्री देवकीनन्दन जी से विदित हुआ कि वे आपको बुलावे का तार दे चुके और आप का उत्तर भी आ चुका। 28 तारीख को प्रस्थान करने के समाचार से बहुत प्रसन्नता हुई।'

वास्तव में मिश्र जी की भाषा युगानुरूप सहज, सरल और सरस है। उसमें कहीं भी कृत्रिमता नहीं है। उसमें किसी पत्रकार की भाषा शैली के सभी गुण विद्यमान हैं।

अध्याय–5
प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी

अमृतराय

खण्ड क : पाठसार

अमृतराय द्वारा रचित पाठ 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' में लेखक ने अपने पिता मुंशी प्रेमचन्द की वंश परम्परा का वर्णन करते हुए उनके जन्म तथा उनकी मृत्यु के क्षणों का मार्मिक विवरण प्रस्तुत किया है।

लमही गांव बनारस से आजमगढ़ जाने वाली सड़क पर शहर में लगभग चार मील की दूरी पर स्थित है। यहां कायस्थ, कुर्मी ठाकुर, मुसलमान आदि रहते हैं। आज से कोई दो–सौ वर्ष पूर्व एक लाला टीकाराम थे। वे ऐरे गांव में रहते थे। इनके दो बेटे मनियार सिंह और महाराज सिंह थे। महाराज सिंह के दो बेटे रामलाल और मैकूलाल थे। मैकूलाल के छः बेटों में चौथे गुरसहाय लाल थे। गुरसहाय लाल पटवारी हो कर ऐरे से लमही आए थे। इनके साथ इनके भतीजे हरनरायन लाल भी थे। मुंशी मुरसहाय लाल के चार बेटे कौलेश्वर लाल, महाबीर लाल, अजायब लाल और उदित नरायन लाल थे। मुंशी गुरसहाय लाल पक्के कायस्थ और निपुण पटवारी थें इन्होंने लमही में एक बड़ा–सा कच्चा मकान बनवा लिया था और साठ बीघे ज़मीन अपने बेटे महाबीर लाल के नाम लिखवा ली थी। गांव में वे राजा थे। उन्हें शराब पीने की आदत थी तथा शराब के नशे में अपनी पत्नी को पीटा करते थे। मुंशी गुरसहाय लाल की मृत्यु के बाद हरनरायण लाल ने अपनी चालबाज़ी से महाबीर लाल से अपनी साठ बीघा ज़मीन से इस्तीफा दिलवा दिया।

अब चारों भाइयों के बीच महाबीर के बेटे बलदेव लाल की छः बीघा ज़मीन रह गयी। महाबीर खेती करने लगे तथा कौलेश्वर लाल, अजायब लाल और उदित नरायण डाकमुंशी की नौकरी करके अपना पेट पालने लगे। कौलेश्वर लाल की तीस वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी। उनकी विधवा अपने बच्चे के साथ चुनार चली गयी और वहां सेठों की लड़कियों को पढ़ाकर अपना जीवन व्यतीत करने लगी। उनका लड़का मोतीलाल भी तीस वर्ष की आयु में एक बेटा, तीन लड़कियाँ तथा पत्नी छोड़कर मर गया तो इस परिवार की सहायता प्रति माह पांच रूपए देकर मुंशी अजायब लाल ने की। वे अपने चाचा ईश्वरी लाल की विधवा करियई चाची को भी आजीवन दो रुपए महीना की सहायता देते रहे।

उदित नरायन लाल डाकखाने में रुपया गबन करने के आरोप में पकड़े गए। उन्हें सात वर्ष की सज़ा हो गयी तो उनके परिवार की देखभाल भी मुंशी अजायब लाल ने की थी। मुंशी जी को गीता, शास्त्रों आदि के अध्ययन तथा साहित्य में रूचि थी। उनकी पत्नी आनन्दी भी उनके अनुरूप सुन्दर, स्वभाव की कोमल, गोरी, मंझोले कद की स्त्री थी। वे अपने पति के समान सदा दूसरों की सहायता करने के लिए तत्पर रहती थीं। घर के कामकाज में वे निपुण थीं। उनकी दो बेटियाँ होकर मर गयी थीं। इसलिए तीसरी सन्तान को उन्होंने लमही में ही जन्म दिया। यह लड़की थी और इसका नाम उन्होंने सुग्गी रखा। इसके जन्म के छः–सात वर्ष बाद लमही के उसी पारिवारिक मकान में 31 जुलाई, सन् 1880 ई॰ (सावन बदी दसवीं, विक्रम संवत् 1937) शनिवार को इनके घर एक लड़के का जन्म हुआ जिसका पिता ने घनपत और ताऊ ने नवाब नाम रखा। यह बालक ही बाद में प्रेमचन्द के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनके जन्म के सम्बन्ध में गांव वालों का यह विचार था कि तीन लड़कियों के बाद पैदा होने वाला यह बालक माँ–बाप में से किसी एक को खा जाएगा। इस प्रकार आजीवन रूढ़ियों से लड़ने वाले व्यक्ति का जन्म रूढ़ियों में ही हुआ।

16 जून, सन् 1936 ई॰ को कड़ी धूप में तीन बजे मुंशी प्रेमचन्द प्रेस के लिए कागज़ का प्रबन्ध करने शहर जाते हैं तो लौटते हुए उन्हें छः बज जाते हैं । पत्नी शिवरानी देवी इतनी धूप में जाने के लिए मना करती है पर उन्हें अपने काम की चिन्ता रहती है। रात खाना खाते हुए वे एक रोटी खा कर ही उठ जाते हैं। रात में उन्हें पेट में दर्द होता है, कै होती है ओर खून के दस्त आते हैं। 18 जून को

'आज' कार्यालय में गोर्की की मृत्यु की सभा में वे जाना चाहते हैं तो पत्नी के रोकने पर भी नहीं रुकते और सभा से आकर लड़खड़ाते हुए अपने कमरे में जाकर लेट जाते हैं।

25जून को रात के ढाई बजे मुंशी जी को खून की कै होती है तो वे शिवरानी देवी को कहते है कि वे अब नहीं बचेंगे। उस रात घर में कोई नहीं सो पाया था। उनका जिगर पत्थर की तरह सख्त हो गया था तथा पेट में पानी भरता जा रहा था। इससे उन्हें बहुत बेचैनी और दर्द होता है। इस पर भी वे बिस्तर छोड़ कर फर्श पर बैठकर 'मंगलसूत्र' उपन्यास लिखना शुरु कर देते हैं जिसका नायक देवकुमार भी उनके समान सुप्रसिद्ध, सच्चा, ईमानदार और स्वाभिमानी गरीब लेखक हैं।

25 अगस्त को रात के ढाई बजे शिवरानी देवी लिखती हैं कि वे रात के दो बजे जाग पड़ी। उस दिन वे सुबह से ही चिन्तित थीं। रात के समय मुंशी जी सोये हुए थे। वह उनका सिर दबाते हुए ईश्वर से दया करने की प्रार्थना कर रही थी। तभी उन्होंने उन्हें गर्मी लगने की बात कही थी। इन्हीं दिनों जैनेन्द्र जी मुंशी जी को देखने आए थे तथा उन्हें चलने–फिरने में असमर्थ तथा पीली देह और उनका बढ़ा पेट देखकर चिन्तित हो गए थे। उन्हें मुंशी जी इस दशा में भी शान्त दिखाई दिए थे।

लेखक को 'गोदान' के होरी और उसकी पत्नी का वह प्रसंग स्मरण आ जाता है जब उसकी पत्नी पाँच पोशाकें लेकर आती हैं और वह कहता है कि उसकी ससुराल में कौन जवान साली–सलहज बैठी है जिसे जाकर वह यह दिखायेगा ? धनिया भी सहज भाव से लजाते हुए उसे उलाहना देती है कि ऐसे ही तो सजीले जवान हो कि साली–सलहजें तुम्हें देखकर रीझ जाएंगी ? होरी स्वयं को चालीस का भी न होने की बात बताता है तो धनिया उसे अभी से दूध–घी के बिना कमज़ोर होता देख बुढ़ापे की चिनता से व्यथित हो उठती है। होरी कहता है कि साठे तक पहुंचने की नौबत ही नहीं आएगी, पहले ही चल देंगे।

लेखक की मान्यता है कि इस संसार में अमृत पीकर कोई नहीं आता हैं सब को एक न एक दिन यम के द्वारे अवश्य ही जाना होता है। अपनी इस जर्जर अवस्था में भी मुंशी प्रेमचन्द को समाज पर छायी महाजनी सभ्यता की ईर्ष्या, द्वेष, बेईमानी, झूठ, व्यभिचार आदि दुष्प्रभावों की चिन्ता बनी रहती है। एक रात वे जैनेन्द्र जी से कहते हैं कि लोग अपने अन्तिम समय में ईश्वर को याद करते है परन्तु मुझे अभी ईश्वर को कष्ट देने की आवश्यकता अनुभव नहीं होती है। उन्हें प्रेमचन्द की इस बात पर आश्चर्य नहीं होता। उन्हें लगता है कि प्रेमचन्द के पास अपना एक ईश्वर है जिसका अभिनन्दन करते हुए वह कहता है–

'मुजदः ऐ दिल कि मसीहा नफसे भी आयद,
कि जे अनफास खुशश बूए कसे भी आयद।'

''उनका हृदय प्रसन्न है कि पाणि मसीहा सशरीर उसकी ओर आ रहा है। उसे लोगों की साँसों से किसी की सुगन्ध आ रही है।''

उन्हें विश्वास है कि एक – न – एक दिन इस महाजनी–सभ्यता का अन्त होगा ओर नए समाज का निर्माण होगा। इस विश्वास के बल पर उन्हें अपनी अन्तिम यात्रा में किसी प्रकार का भय नहीं है। विश्व–युद्ध के सम्भावित खतरे को देखते हुए उन्होंने रोमें, रोलाँ, आँरी बारबुस, रवीन्द्र नाथ ठाकुर, रामानन्द, नन्दलाल बसु, प्रफुल्ल चन्द राय, जवाहर लाल नेहरू के साथ अपने हस्ताक्षरों से शान्ति महायज्ञ के लिए ब्रसेल्स और पेरिस में घोषणा–पत्र भेजा था। इसमें सोवियत कम्युनिज्म, रूशियार चिठि, रूसी स्केचबुक आदि पुस्तकों की ज़ब्ती की भी तीव्र भर्त्सना की गई थी।

मुंशी प्रेमचन्द की मृत्यु से पहली रात लेखक उनकी खटिया के पास बैठा था। सुबह के तीन बजे वे उसे हाथ दाबने के लिएकहते हैं। उनके मुख से 'जैनेन्द्र' शब्द निकलता है। लेखक उन्हें अच्छे हो जाने की सांत्वना देता है। वे उसे पंखा करने के लिए कहते हैं और फिर उसे 'जाओ, सोओ' कहते हैं। शिवरानी देवी को अपने पास बैठे रहने के लिए कहते हैं। उनके वहां रहने से उन्हें ढाढ़स रहता है।

आठ अक्तूबर सुबह साढ़े–सात बजे उनका मुँह धुलाने के लिए शिवरानी गरम पानी लेकर आती है। मुंशी जी दाँत साफ़ करने के लिए खरिया मिट्टी मुँह में लेकर मुंह चलाते हैं कि दाँत बैठ जाते हैं। कुल्ला करने के लिए मुँह नहीं खुलता। उनकी उल्टी साँस चलने लगती है। वे बेबस दृष्टि से शिवरानी की ओर देखकर भारी आवाज में 'रानी' पुकार कर इस संसार से विदा हो जाते हैं। लमही में समाचार फैलते ही बिरादरी वाले जुट जाते हैं। ग्यारह बजते–बजते बीस–पच्चीस लोग उनकी अर्थी को मणिकर्णिका घाट की ओर ले चलते हैं । रास्ते में कोई पूछता है कि कौन था ? दूसरा उत्तर देता है 'कोई मास्टर था।' रवीन्द्रनाथ ने इनकी मृत्यु को रत्न को खो देने का नाम दिया था और वे अनाम के समान देह त्याग गए थे।

खण्ड ख : व्याख्या

यों तो इक्का–दुक्का कायस्थ भी अपने हाथ से हल चला लेते हैं। लेकिन बस इक्का–दुक्का। खेती–किसानी कुर्मियों का काम है। कायस्थों की शान में इससे बट्टा लगता है। वे यहां के अकेले पढ़े–लिखे लोग हैं ओर अपनी इसी काबलियत के बल पर अभी कुछ बरस पहले एक गांव पर राज करते रहे हैं। मगर अब, कुछ तो कुर्मियों में शिक्षा के साथ अपने अधिकारों की चेतना जागने के कारण और कुछ कायस्थों की आपसी फूट के कारण उनके राज्य की चूलें हिल गयी हैं उनका दबदबा काफ़ी कम हो गया है।

शब्दार्थ – इक्का–दुक्का = कोई–कोई। काबलियत = योग्यता। दबदबा = दबाव।

प्रसंग – प्रस्तुत पक्तियाँ अमृतराय द्वारा रचित पाठ 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से ली गयी हैं। यह अमृतराय द्वारा रचित अपने पिता प्रेमचन्द की जीवनी का अंश है। जिसमें लेखक ने अपने वंश का परिचय देते हुए प्रेमचन्द के जन्म तथा उनके अन्तिम दिनों का विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – लेखक लमही गांव में रहने वाले परिवारों का विवरण देते हुए लिखता है कि लमही गाँव में रहने वाले कायस्थ परिवारों के एक–आध लोग भी खेती करते हैं तथा स्वयं हल चलाते हैं परन्तु उनकी गिनती एक–आध ही हैं खेती और किसानी करने का काम मुख्य रूप से कुर्मी जाति के लोगों का है। खेती करने से कायस्थों को यह लगता है जैसे खेती करने से उनकी इज्ज़त कम हो जाएगी। वे खेती करना अपनी मर्यादा के विरुद्ध समझते हैं। वे इस गांव में अकेले ही पढ़े–लिखे लोग हैं और अपनी इसी पढ़े–लिखे होने की योग्यता के बल पर अभी कुछ वर्ष पहले तक वे गांव पर अपना शासन चलाते रहे हैं। परन्तु अब शिक्षा के प्रसार के कारण कुर्मी भी पढ़–लिखकर शिक्षित हो गए हैं तथा उन्हें अपने अधिकारों का भी ज्ञान हो गया है तथा कुछ कायस्थों में आपस में फूट पड़ गयी है इसलिए गांव पर शासन करने की कायस्थों की शक्ति समाप्त हो गई है तथा गांव वालों पर उनका रौब भी कम हो गया है।

विशेष –

1. गांव वालों के अशिक्षित होने का लाभ उठाकर कायस्थ बिरादरी के लोग उन पर अपना मनमाना शासन चला रहे थे।
2. शिक्षा का आलोक गांव वालों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बना देता है। इससे उन पर कायस्थों का वर्चस्व समाप्त हो जाता है।
3. भाषा सहज, व्यावहारिक है।
4. मुहावरों का प्रभावी प्रयोग है।
5. शैली वर्णनात्मक है।

यह भी कुछ उनके नाम का ही प्रताप था कि महावीर अपनी मां के अनन्य भक्त थे। अजायब लाल भी अपनी मां को प्यार करते ही होंगे लेकिन वह शरीर से और फलतः मन से भी दुर्बल थे। महावीर अक्खड़ किसान थे, शरीर और मन दोनों से मजबूत। शायद इसीलिए बाप ने अपनी कुल साठ बीघे आराजी महाबीर के ही नाम लिखवायी थी, क्योंकि जोरू और ज़मीन के बारे में मशहूर है कि ये दोनों उसी आदमी के पास रहती है जिसका शरीर ताकतवर और लाठी मजबूत होती है।

शब्दार्थ – प्रताप = प्रभाव। अनन्य = पक्का, दृढ़। जोरू = पत्नी।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने प्रेमचन्द की वंश परम्परा और उनके जन्म का वर्णन करते हुए उनके जीवन के अन्तिम दिनों में उनकी रोगग्रस्त दशा तथा मृत्यु का विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – लेखक ने मुंशी गुरसहाय लाल के पुत्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उजागर किया है। लेखक का मानना है कि मुंशी गुरसहाय लाल के पुत्र महावीर अपने नाम के अनुरूप वीर थे तथा अपनी माता को एक भक्त के समान पूजते थे। मुंशी जी के अन्य पुत्र अजायब लाल भी अपनी मां से अवश्य ही स्नेह करते होंगे परन्तु उनका शरीर कमज़ोर था इसलिए उनका मन भी कमज़ोर रहा

होगा। महावीर एक निडर स्वभाव के अड़ियल किसान थे। उनका शरीर बहुत बलशाली था। उनका मन भी दृढ़ था। इसी कारण उनके पिता ने अपनी सारी साठ बीघे खेती योग्य ज़मीन महावीर के नाम लिखवा दी थी। वे जानते थे कि पत्नी और ज़मीन उसी व्यक्ति के पास सुरक्षित रहती है जिसका शरीर शक्तिशाली होता है और जो बलपूर्वक दूसरों पर अपना अधिकार जमा सकता है।

विशेष –

1. महावीर की मातृ भक्ति तथा उसके बलशाली होने का वर्णन करते हुए इस कथन को सत्य सिद्ध किया गया है कि 'जिसकी लाठी उसकी भैस'।
2. भाषा सहज, सरल, व्यावहारिक, उर्दू के शब्दों से युक्त है।
3. शैली वर्णनात्मक है।
4. मुहावरों का व्यावहारिक प्रयोग है।

उनके व्यक्तित्व में असाधारण कुछ भी न था। बस इतना था कि आदमी भले थे। छल कपट से दूर रहते थे। उनके मां–बाप के बारे में जो कुछ पता चलता है उससे मालूम होता है कि उनकी प्रकृति में अपने पिता से अधिक अपनी मां का अंश था जो कि एक शान्त, साध्वी स्त्री थीं। उन्होंने कभी अपनी पत्नी के साथ वैसा दुर्व्यवहार नहीं किया जैसा उनके पिता अपनी पत्नी के साथ आये दिन किया करते थे। मामूली पढ़े–लिखे आदमी थे। गीता और शास्त्र भी देखे थे। पर धार्मिक अनुष्ठानों में उन्हें ज्यादा विश्वास न था। कहते थे उनमें ढोंग ज्यादा है, तत्त्व कम। धर्म का मतलब वह सदाचार समझते थे, जिसे उन्होंने शक्ति भर अपने जीवन में बरता।

शब्दार्थ – प्रकृति = स्वभाव। साध्वी = सरल प्रकृति की। ढोंग = दिखावा। बरता = व्यवहार में लाए।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध कथाकार प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने प्रेमचन्द की वंश परम्परा, उनके जन्म तथा उनकी अन्तिम बीमारी से मृत्यु का मार्मिक चित्रण किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक प्रेमचन्द के पिता मुंशी अजायब लाल के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए लिखता है कि उनका व्यक्तित्व कोई विशेष नहीं था। वे अत्यन्त साधारण व्यक्तित्व के स्वामी थे। वे बहुत ही भले व्यक्ति थे और छल–कपट से सदा दूर रहते थे। उनके माता–पिता के स्वभाव के आधार पर लेखक का यह मानना है है कि उनके स्वभाव में अपने पिता की अपेक्षा अपनी माता के गुण अधिक थे। उनकी माता एक शान्त और साध्वी स्त्री थीं। इसी प्रकार से मुंशी अजायब लाल भी शान्त स्वभाव के व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ कभी भी वैसा बुरा व्यवहार अथवा मार–पीट नहीं की थी जिस प्रकार उनके पिता अपनी पत्नी के साथ सदा करते रहते थे। मुंशी जी अधिक पढ़े–लिखे नहीं थे परन्तु इन्होंने गीता और शास्त्रों को पढ़ा था। इन्हें विभिन्न धार्मिक कर्म काण्डों में अधिक विश्वास नहीं था। धार्मिक अनुष्ठानों को वे आडम्बर मानते थे। उनमें इन्हें कोई तत्त्व नहीं दिखाई देता था। इनके अनुसार धर्म का अर्थ सदाचार पूर्वक जीवन व्यतीत करना था। इसलिए उन्होंने आजीवन अपनी सामर्थ्य के अनुसार सदाचार पूर्वक अपना जीवन व्यतीत किया था।

विशेष –

1. मुंशी अजायब लाल छल–कपट से दूर एक ईमानदार तथा भले आदमी का चित्रण है।
2. लेखक ने जीवन में सदाचार के महत्त्व को रेखांकित करते हुए मुंशी अजायब लाल को आजीवन सदाचार का पालन करने वाला व्यक्ति बताया है।
3. भाषा सहज, सरल, व्यावहारिक, तत्सम शब्दों से युक्त प्रवाहमयी है।
4. शैली वर्णनात्मक है।
5. मुहावरों का व्यावहारिक प्रयोग किया गया है।

बस एक बात खटक रही थी : लड़का तेतर था यानी तीन लड़कियों की पीठ पर हुआ था, और ऐसी सन्तान के बारे में लोगों का विश्वास है कि वह मां–बाप में से किसी एक को खाये बिना नहीं रहती। नवाब ने ऐसी बुभुक्षा का तत्काल कोई परिचय न दिया, लेकिन इसमें सन्देह नहीं कि यह भी प्रकृति का एक अच्छा व्यंग्य था। जिस लड़के को आगे चलकर आजीवन समाज की मुर्दा रूढ़ियों से जूझना था। वह स्वयं एक मुर्दा रूढ़ि की छाया में पैदा हुआ।

शब्दार्थ – खटकना = अच्छा न लगना। बुभुक्षा = भूख। मुर्दा = मृत। छाया = प्रभाव।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने प्रेमचन्द की वंश परम्परा, उनके जन्म तथा जीवन के अन्तिम क्षणों की बीमारी का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक प्रेमचन्द के जन्म पर उत्पन्न रूढ़ियों का वर्णन करते हुए लिखता है कि जब प्रेमचन्द का जन्म हुआ तो लमही गांव में प्रेमचन्द की बिरादरी के लोगों को एक बात खटक रही थी कि यह जो लड़का पैदा हुआ है यह तेतर है। उनके अनुसार तेतर लड़का वह होता है जो तीन लड़कियों के जन्म के बाद पैदा हुआ हो। प्रेमचन्द भी तीन लड़कियों के जन्म के बाद पैदा हुए थे। इस प्रकार से उत्पन्न संतान के संबंध में लोगों की यह धारणा थी कि ऐसी संतान के उत्पन्न होने से माता–पिता में से किसी एक की मृत्यु हो जाती है। नवाब अथवा प्रेमचन्द के जन्म के बाद तुरन्त ऐसी कोई घटना नहीं घटी जिससे पता चलता कि तेतर लड़का मां–बाप में से किसी एक को खा जाता है। लेखक को यह भी प्रकृति का एक विचित्र खिलवाड़ प्रतीत होता है कि जो लड़का बड़ा होकर आजीवन समाज की इन विकृत तथा निर्जीव रूढ़ियों से संघर्ष करता रहा वह स्वयं समाज की एक निर्जीव रूढ़िवादिता की छत्रछाया में पैदा हुआ था।

विशेष –

1. समाज में व्याप्त इस अंधविश्वास पर प्रहार किया है कि तीन लड़कियों के बाद पैदा होने वाली संतान अपने मात–पिता में से किसी एक को खा लेती है।
2. प्रेमचन्द द्वारा आजीवन सामाजिक रूढ़ियों से संघर्ष करने का ज्ञान भी इन पंक्तियों से होता है।
3. भाषा व्यावहारिक, सहज, सरल तथा तत्सम शब्दों से युक्त भावपूर्ण एवं प्रवाहमयी है।
4. शैली व्यंग्य प्रधान तथा वर्णनात्मक है।
5. मुहावरों का व्यावहारिक प्रयोग है।

और उस बीहड़ बियाबान सन्नाटे में जिसका कहीं ओर–छोर न था और साथी सब पीछे छूट गये थे और सामने एक लम्बा, तनहा सफर था जहां तुम किसी को आवाज़ देते थे न कोई तुमको आवाज़ देता था, बस तुम थे और वह सन्नाटा था जो तुम्हारे कानों में बज रहा था और तुम्हारी आंखों के आगे रात के अंधेरे पर्दे पर एक के बाद एक तस्वीरें आ रही थीं और जा रही थीं और तुम अपने सीने में मुंह गड़ाये अपने किसी अन्तरंग सखा से बातें कर रहे थे, खुद अपनी नेक और मुफलिस ज़िन्दगी की और उस चमकती–दमकती दुनिया की जिसे तुमने झूठ और दगा पर पनपते देखा, वह खबीस सूरतें जिन्होंने इस दुनिया को जहन्नुम बना रखा है, एक दुनिया जो मर रही है और एक दुनिया जो पैदा होने के लिए मौत की ताकतों से लड़ रही है।

शब्दार्थ – **बीहड** = भयानक। **सन्नाटा** = बिल्कुल शांत। **तनहा** = अकेला। **अंतरंग** = अभिन्न, बहुत नजदीकी। **जहन्नुम** = नरक।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध कथाकार प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने उनकी वंश परम्परा, जन्म तथा मृत्यु के समय की बीमारी का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक ने बीमारी के दिनों में प्रेमचन्द की मानसिक दशा का निरूपण किया है। बीमारी के दिनों में प्रेमचन्द को नींद आनी बंद हो गयी थी। वे रात भर जागते हुए बिस्तर पर पड़े रहते थे। उन्हें लगता था जैसे वे किसी ऊबड़–खाबड़

सुनसान जंगल के एकांत में भटक गए हैं जिसका उन्हें कोई अन्त नहीं दिखाई दे रहा था। उन्हें लग रहा था जैसे उनके अन्य साथी कहीं पीछे छूट गए हैं और वे अकेले भटक रहे हैं। उनके सामने एक ऐसा लम्बा और अकेले करने वाला जसफर था जहां न तो कोई उनका साथी था और न ही कोई ऐसा व्यक्ति था जो उनका साथ देता। न वे किसी को बुला सकते थे और न ही अन्य उन्हें बुला सकता था। वहां वे अकेले थे ओर उनके कानों में बजने वाली खामोशी की आवाज़ थी। उनकी आंखों के सम्मुख रात के अंधेरे पर्दे पर अतीत की अनेक तस्वीरें एक के बाद एक आ–जा रही थीं । ऐसा लग रहा था जैसे वे अपने सीने में अपना मुंह गड़ा कर अपने किसी अभिन्न मित्र से बातें कर रहे हों। उनकी बातें उनके अपने ईमानदार और ग़रीबी से युक्त जीवन की विसंगतियों से भरी हुई तथा झूठ और छल–कपट के बल पर पनपती हुई समृद्ध दुनिया वालों पर आधारित लग रही थीं। उनकी बातें उन दुष्ट व्यक्तियों से सम्बन्धित भी हो सकती थीं जिन्होंने अपने दुष्कर्मों से इस संसार को नरक बना रखा है। एक ऐसा संसार जो नष्ट हो रहा है तथा एक ऐसा नया संसार जो जीवन प्राप्त करने के लिए संसार की विनाशकारी शक्तियों से संघर्ष कर रहा है।

विशेष –

1. एक बीमार व्यक्ति की मानसिक दशा का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है जो बीमारी के कारण सो नहीं पाता तथा अतीत की स्मृतियों में डूबा रहता है।
2. प्रेमचन्द द्वारा छल–कपट के बल पर पनप रही समृद्ध–नव–संस्कृति की निन्दा की गई है तथा आदर्शों पर आधारित एक नए संसार के लिए संषर्घ करने का आह्वान किया है।
3. भाषा व्यावहारिक, सहज, भावपूर्ण तथा उर्दू के शब्दों से युक्त है।
4. शैली भावपूर्ण, चित्रात्मक तथा विचारप्रधान है।
5. मुहावरों का आकर्षक प्रयोग है।

यहां तो ज़िदगी सूने खेतों ओर चरागाहों को जाने वाली एक लम्बी, सीधी, सँकरी पगडंडी थी जिसके चारों तरफ खुले मैदान थे और रास्ते में मीठे पानी के छोटे–मोटे कच्चे कुओं की भी कमी न थी। रोज सवेरे, निहार मुंह, एक किसान अपने हल–बैल को लेकर उसी पगडंडी से अपने उन खेतों को जाता था और दिन भर उस तपी हुई कड़ी धरती को जोतता था, घास–फूस की निराई करता था, बीज छिड़कता था–और दोपहर को, सूरज जब सिर पर होता था, उसकी धनिया, रस–गुड़ और जौ के मोटे–मोटे लिट्टे लेकर पहुंच जाती थी.....

शब्दार्थ – संकरी = पतली। बगडंडी = पैदल चलने का रास्ता। निराई = निकालना। छिड़कना = बिखेर कर बोना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध कथाकार प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में उनकी वंश परम्परा, जन्म तथा मृत्यु से पूर्व की बीमारी का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक ने उस समय का वर्णन किया है जब प्रेमचन्द बीमारी की अवस्था में असहाय से बिस्तर पर लेटे रहते हैं। उन्हें नींद नहीं आती है और वे अतीत की स्मृतियों में खोये रहते हैं। यहां लेखक को ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रेमचन्द जी 'गोदान' के होरी के संबंध में सोच रहे हैं और अपने जीवन से उसके जीवन की तुलना कर रहे हैं। उन्हें लगता है कि उनका जीवन भी सूने खेतों और चरागाहों की ओर जाने वाली एक लम्बी, सीधी, पतली पगडंडी के समान था जिसके चारों ओर खुले मैदान थे और रास्ते में मीठे पानी के अनेक छोटे–बड़े कच्चे कुएं थे। उस पगडंडी से प्रतिदिन सुबह–सुबह बिना कुछ खाए–पिए एक किसान अपने हल–बैल लेकर अपने खेतों पर जाता था। जहां वह सारा दिन तपती धूप में भी अपनी सूखी धरती को जोतता था। वहां उग आए घास–फूस की निराई करता था। वहां बीज छिड़कता था। दोपहर के समय जब सूर्य सिर पर आ जाता था तो उसकी पत्नी धनिया उसके लिए रस–गुड़ और जौ की बनी हुई मोटी–मोटी रोटियाँ लेकर आ जाती हैं।

विशेष –

1. एक सामान्य किसान की दिनचर्या का यथार्थ अंकन किया है।
2. बीमार व्यक्ति के मन में चलने वाले द्वन्द्व का सुन्दर अंकन किया है।

3. भाषा सहज, सरल, प्रवाहमयी तथा भावपूर्ण है।

4. शैली भावात्मक तथा चित्रात्मक है।

5. यथार्थ प्रस्तुति है।

सब को जाना है एक दिन। अमरित की घरिया पीकर कोई नहीं आया है। कहीं कोई अतृप्ति नहीं है, जो कुछ करना था कर चुके, कहना था कह चुके।

'नारकीय महाजनबाद' को लक्ष्य करके वह शापवाणी भी हो गयी जो भीतर ही भीतर हड्डी को जला रही थी।

और मुंशी जी बिल्कुल शान्त, निर्विकार मन से, रामकटोरा बाग की उस नन्हीं–सी कोठरी में पड़े हुए अपने मन के आकाश में उस पुरानी सभ्यता के सूरज का डूबना और एक नयी सभ्यता के सूरज का उगना देखते रहते हैं।

एक प्राकृतिक–सी अनिवार्यता है इसके पीछे। जो व्यवस्था समाज के प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाती उसका मिट जाना निश्चित है। कोई उसको बचा नहीं सकता।

शब्दार्थ – अतृप्ति = असंतुष्टि। निर्विकार = पवित्र । प्राकृतिक = प्रकृति से संबंधित।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार मुंशी प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने उनकी वंश परम्परा, जन्म और मृत्यु से पूर्व की बीमारी का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक बीमारी से जर्जर प्रेमचन्द की मानसिक दशा का निरूपण करते हुए लिखता है कि वे मानते थे कि इस संसार में जो व्यक्ति जन्म लेता है उसे एक दिन मरना भी पड़ता है क्योंकि इस संसार का यही नियम है और सबको एक न एक दिन जाना ही पड़ता है। इस संसार में सदा रहने के लिए कोई भी अमृत का घड़ा पीकर जन्म नहीं लेता है। इस मरणासन्न दशा में प्रेमचन्द के मन में कोई असन्तोष का भाव नहीं था। वे पूरी तरह से तृप्त थे। उन्होंने इस संसार में जो कुछ करना था, कर चुके थे और जो कुछ कहना चाहते थे, कह चुके थे। उनके मन में समाज में व्याप्त नरक के समान महाजनवाद के विरुद्ध जो आक्रोश था उसके सम्बन्ध में भी वे उस व्यवस्था के विनाश के लिए उसे श्राप दे चुके थे। इस प्रकार मुंशी प्रेमचन्द एकदम शान्त तथा निर्मल मन से रामकटोरा बाग की छोटी–सी कोठरी में पड़े हुए मन ही मन पुरानी रूढ़ियों से ग्रस्त परम्परावादी महाजनी सभ्यता के नष्ट होने तथा एक नवीन समतावादी सभ्यता के सूर्य के उदय होने की कल्पना कर रहे थे। उनका मानना था कि यह एक प्राकृतिक नियम है कि जो व्यवस्था परिवर्तनशील नहीं होती है वह अवश्य ही समाप्त हो जाती है। ऐसी व्यवस्था को कोई बचा नहीं सकता। अतः परम्परावादी महाजनी सभ्यता का नष्ट होना भी स्वाभाविक है।

विशेष –

1. मनुष्य की नश्वरता की अनिवार्यता को स्वीकार किया है।

2. परिवर्तन शाश्वत है। इसलिए प्राचनी रूढ़ियों का समाप्त होना तथा नवीन व्यवस्था का उदय होना भी प्राकृतिक अनिवार्यता है।

3. भाषा सहज, सरल, तत्सम तथा देशज शब्दों से युक्त प्रवाहमयी तथा भावपूर्ण है। काव्यात्मकता का गुण विद्यमान है।

4. शैली सूत्रात्मक, वर्णन प्रधान तथा सरस है।

5. मुहावरों का मन भावन प्रयोग है।

महाजनी सभ्यता के पास 'ईर्ष्या, ज़ोर–जबर्दस्ती, बेईमानी, झूठ, मिथ्या अभियोग, आरोप, वेश्यावृति, व्यभिचार, चोरी, डाके' आदि का कोई इलाज नहीं है। ये सारी बुराइयाँ 'दौलत की देन हैं, पैसे के प्रसाद हैं, महाजनी सभ्यता ने इनकी सृष्टि की है। वही इनको पालती है और वही यह भी चाहती है कि जो दलित, पीड़ित और विजित हैं, वे इसे ईश्वरीय विधान समझकर अपनी स्थिति पर संतुष्ट रहें.....

सारा खेल यहां से वहां तक उनके सामने आईने की तरह साफ है। कहीं कोई दुविधा नहीं, मोह नहीं, संशय नहीं, दुःख नहीं, ताप नहीं, खीझ नहीं, पछतावा नहीं। मन बिल्कुल पक्का है—अच्छी तपाई हुई खंजर ईंट की तरह।

शब्दार्थ — अभियोग = दोषारोपड़। इलाज = दवा। दौलत = संपत्ति। खीझ = झुझलाहट। खंजर = बहुत अधिक । पक = जलाकर बेकार हुई।

प्रसंग — प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित जीवनी 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार मुंशी प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने इसके वंश, जन्म तथा मृत्यु से पूर्व की बीमारी की सजीव तथा मार्मिक चित्रण किया है।

व्याख्या — इन पंक्तियों में लेखक ने बीमारी से जर्जर प्रेमचन्द की मानसिक दशा का वर्णन किया है। प्रेमचन्द समाज में व्याप्त महाजनी सभ्यता के विरोधी थे। उनकी मान्यता थी कि महाजनी सभ्यता के परिणामस्वरूप ही समाज में ईर्ष्या, ज़ोर—ज़बर्दस्ती, बेईमानी, झूठ, छल—कपट, व्यभिचार, चोरी—डाका आदि का बोलबाला है और इन्हें समाप्त भी नहीं किया जा सकता है। इन सब का मूल कारण महाजनी सभ्यता द्वारा दौलत ओर सम्पत्ति का प्रसार हैं। धन—दौलत के बल पर ही यह सभी बुराइयाँ पनपती हैं। महाजनी सभ्यता समाज के दलित, शोषित तथा अपने बल से जीते हुए वर्ग को अपना दास बनाकर रखना चाहती है। वह उन्हें यही समझाना चाहते हैं कि वे इसे ईश्वरीय विधान अथवा अपना भाग्य समझकर अपनी इसी दशा में संतुष्ट रहें। यह सब कुछ प्रेमचन्द की आंखों के सम्मुख स्पष्ट रूप से घूम रहा था । उसके मन में किसी प्रकार का द्वन्द्व शेष नहीं था। उन्हें किसी के प्रति कोई मोह नहीं था। वे समस्त शंकाओं, दुःखों, तापों आदि से स्वयं को मुक्त अनुभव कर रहे थे। उन्हें किसी बात पर कोई खीझ और पछतावा भी नहीं था। उनका मन उसी प्रकार से दृढ़ था जैसे अच्छी प्रकार से तपाई हुई पक्की ईंट होती है।

विशेष —

1. महाजनी सभ्यता को समाज में अनाचार फैलाने वाली माना है।
2. धन की अधिकता समस्त बुराइयों का मूलकारण है।
3. मरणासन्न प्रेमचन्द के मन की दृढ़ता का परिचय दिया गया है।
4. भाषा सहज, सरल, तत्सम प्रधान, प्रवाहमयी तथा भावपूर्ण है।
5. शैली सूत्रात्मक तथा वर्णन प्रधान है।
6. मुहावरों का आकर्षक प्रयोग है।

'हाँ महाजनी सभ्यता और उसके गुर्गे अपनी शक्तिभर उसका विरोध करेंगे, उसके बारे में भ्रमजनक बातों का प्रचार करेंगे, जन—साधारण को बहकायेंगे, उनकी आंखों में धूल झोंकेंगे पर जो सत्य है, एक न एक दिन उसकी विजय होगी और अवश्य होगी।'

जहां मन में इतने गहरे विश्वास का पाथेय हो वहाँ यात्रा से फिर भय कैसा। जन्म—भर के यात्रा भीरु प्रेमचन्द को अपनी इस अन्तिम यात्रा से तनिक भय नहीं लग रहा है।

शब्दार्थ — गुर्गे = गलत कार्य के लिए पाले गए लोग। पाथेय = रास्ते का भोजन। अंतिम यात्रा = मृत्यु।

प्रसंग — प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। उपन्यास सम्राट् प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने उनकी वंश परम्परा, जन्म तथा मृत्यु से पूर्व की बीमारी का वर्णन किया है।

व्याख्या — इन पंक्तियों में लेखक ने प्रेमचन्द के महाजनी सभ्यता से सम्बन्धित विचारों को स्पष्ट किया है जो इस प्रथा को समाप्त कर नवीन समतावादी समाज स्थापित करना चाहते थे। प्रेमचन्द का विचार था कि जब हम इस रूढ़िवादी महाजनी सभ्यता को समाप्त करके नयी समतावादी सभ्यता की स्थापना करना चाहेंगे तो उस समय महाजनी सभ्यता के समर्थक यथाशक्ति नयी सभ्यता का विरोध करेंगे तथा इसके सम्बंध में अनेक असत्य बातों का प्रचार करेंगे। वे छल्—बल द्वारा आम जनता को बहकाने—फुसलाने

का प्रयत्न भी करेंगे परन्तु इससे नयी सभ्यता के समर्थकों को भयभीत नहीं होना चाहिए क्योंकि जो सत्य है उसकी विजय तो एक न एक दिन अवश्य ही होगी। जिस व्यक्ति के मन में इतना दृढ़ विश्वास हो वह किसी प्रकार की यात्रा से भी भयभीत नहीं होता। प्रेमचन्द आजीवन यात्रा करने से डरते रहे परन्तु अपनी इस अन्तिम यात्रा पर जाते हुए उन्हें बिल्कुल भी भय नहीं लग रहा था। वे अपनी मृत्यु–यात्रा पर सहर्ष जाने के लिए तैयार थे।

विशेष –

1. प्रेमचन्द द्वारा महाजनी सभ्यता के विरुद्ध जन–जागरण का संदेश दिया है तथा नवीन समातावादी सभ्यता की स्थापना पर बल दिया है।
2. प्रेमचन्द अपनी मृत्यु से बिल्कुल भी भयभीत नहीं थे। वे उस का निडरतापूर्वक स्वागत कर रहे थे।
3. भाषा तत्सम प्रधान, सहज, सरल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है।
4. शैली भावात्मक तथा उद्‌बोधनात्मक है।
5. मुहावरों का रोचक प्रयोग है।

लमही खबर पहुंची । बिरादरी वाले जुटने लगे।

अर्थी बनी। ग्यारह बजते–बजते बीस–पच्चीस लोग किसी गुमनाम आदमी की लाश लेकर मणिकर्णिका की ओर चले।

रास्ते में एक राह चलते ने दूसरे से पूछा–के रहल ?

दूसरे ने जवाब दिया – कोई मास्टर था।

उधर, बोलपुर में, रवीन्द्रनाथ ने धीमे से कहा – एक रतन मिला था तुमको, तुमने खो दिया।

शब्दार्थ – बिरादीर = जाति वाले। अर्थी = शव ले जाने का आधार। गुमनाम = अनजान, अपरिचित।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश अमृतराय द्वारा रचित 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' से लिया गया है। सुप्रसिद्ध उपन्यास सम्राट् प्रेमचन्द की जीवनी के इस अंश में लेखक ने उनकी वंश परम्परा, जन्म तथा मृत्यु से पूर्व की बीमारी का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक ने प्रेमचन्द की मृत्यु के बाद की घटनाओं का वर्णन किया है। प्रेमचन्द की मृत्यु वाराणसी के रामकटोरा बाग के मकान में हुई थी। उनकी मृत्यु का समाचार जब लमही पहुंचा तो वहां से उनकी बिरादरी के लोग वाराणसी आने लगे। इनकी मृत्यु प्रातः सात–साढ़े सात बजे हो गयीं , अर्थी बनाई गयी। ग्यारह बजे तक बीस–पच्चीस लोग इनके घर पर एकत्र हो गए तथा इस सुप्रसिद्ध साहित्यकार की अर्थी को एक अनाम व्यक्ति की अर्थी के समान वाराणसी के मणिकर्णिका घाट की ओर ले चले। मार्ग में एक राहगीर ने किसी व्यक्ति से पूछा कि किस की अर्थी है ? तो उसने उत्तर दिया कि 'कोई मास्टर था।' दूसरी ओर जब प्रेमचन्द की मृत्यु का समाचार बोलपुर में रवीन्द्र नाथ टैगोर को मिला तो उन्होंने प्रेमचन्द की मृत्यु को एक रत्न खो जाने के समान माना। वाराणसी में एक प्रख्यात साहित्यकार की यह अनाम मृत्यु थी।

विशेष –

1. प्रेमचन्द की मृत्यु पर वाराणसी के लोगों की उदासीनता को एक महान् साहित्यकार की अनाम मृत्यु का नाम दिया है।
2. रवीन्द्रनाथ टैगोर प्रेमचन्द की मृत्यु को एक रत्न के खो जाने जैसा माना है।
3. भाषा सहज, सरल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है।
4. शैली वर्णन प्रधान, चित्रात्मक तथा संवादात्मक है।

खण्ड ग : अमृतराय : साहित्यिक परिचय

अमृतराय का जन्म 15 अगस्त, सन् 1921 ई॰ को कानपुर में हुआ था। इनके पिता सुप्रसिद्ध साहित्यकार मुंशी प्रेमचन्द थे। इनके दादा मुंशी अजायव लाल डाकमुंशी थे। उन्हें पढ़ने–लिखने में विशेष रुचि थी। उन्होंने भी कुछ पुस्तकें लिखी थीं। इस प्रकार बालक अमृतराय को साहित्यिक अभिरुचि उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई थी। इनके पूर्वजों का मुग़ल अदालत से घनिष्ठ रूप से सम्पर्क रहने के कारण इन पर भी इस्लामी और फ़ारसी संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। इन्होंने अपनी शिक्षा लखनऊ, वाराणसी तथा इलाहाबाद में प्राप्त की थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से सन् 1942 ई॰ इन्होंने अंग्रेजी विषय में एम॰ ए॰ की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। अंग्रेज़ी और हिन्दी के अतिरिक्त इन्हें उर्दू, फ़ारसी, बंगला, संस्कृत आदि भाषाओं का भी पर्याप्त ज्ञान था। इन्होंने अन्तरजातीय विवाह किया था। इनकी पत्नी का नाम सुधा था। उन्हें अपने इस साहसिक तथा प्रगतिशील कदम उठाने की प्रेरणा अपने पूज्य पिता श्री प्रेमचन्द से प्राप्त हुई थी जिन्होंने एक विधवा से विवाह कर समाज की रूढ़ियों को चुनौती दी थी। उन्होंने कई वर्षों तक 'हंस' पत्रिका का सम्पादन किया था। इन्हें इनकी रचना 'प्रेमचन्द : कलम का सिपाही' पर 'साहित्य अकादमी ' पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इनकी उपलब्धियों पर इन्हें 'सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था। 14 अगस्त, सन् 1996 ई॰ को इनका देहान्त हो गया था।

साहित्य –

अमृतराय बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं। मूलरूप से कथाकार होते हुए भी इन्होंने आलोचना, जीवनी, संस्मरण, निबंध, यात्रा–वृतान्त, अनुवाद आदि लेखन के कार्य किए हैं। इनकी प्रथम रचना 'कसाई' नामक रेखाचित्र था, जो इन्होंने प्रन्द्रह वर्ष की आयु में लिखा था। इनके उपन्यासों में वर्ग संघर्ष तथा प्रगति–चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। इनका कथा साहित्य यथार्थ की अभिव्यक्ति है। **इनकी प्रमुख रचनाएं अग्रलिखित हैं**–

उपन्यास – बीज, नागफनी का देश, हाथी के दांत।

कहानी – चित्रफलक, कस्बे का एक दिन, भोर से पहले।

जीवनी –प्रेमचन्द : कलम का सिपाही।

निबन्ध – आनन्दम्।

अनुवाद – आदि विद्रोही–हॉवर्ड फास्ट के उपन्यास का अनुवाद।

अमृतराय प्रेमचन्द परम्परा के लेखक हैं इसलिए इनकी रचनाओं में मानव जीवन के विविध पक्षों का सजीव चित्रण प्राप्त होता है जिससे तत्कालीन परिवेश यथा तथ्य रूप में पाठकों के सम्मुख उपस्थित हो जाता है। इन्होंने अपनी रचनाओं में स्वतंत्रता पूर्व तथा स्वतंत्रता के बाद के भारत की यथार्थ स्थिति का वर्णन किया है। इससे तत्कलीन समय की सामाजिक, आर्थिक स्थितियों, विभिन्न आन्दोलनों, मानवीय मूल्यों के विघटन आदि का ज्ञान होता है। अपनी रचनाओं में इन्होंने सहज, सरल तथा भावाभिव्यक्ति में सक्षम खड़ी बोली का प्रयोग किया है। जिसमें लोकप्रचलित तत्सम, तद्भव,, विदेशी तथा देशज शब्दों का सहज रूप में प्रयोग प्राप्त हेाता है। जैसे–आह्वान, उद्विग्न, पीयूष, दूध, दस, लावल्द, पुश्त, ताहम, अहलमद, कुटम्मस, छोर। इन्होंने शब्दों के माध्यम से प्रत्येक स्थिति के शब्द चित्र भी अंकित किए हैं। जैसे लमही गांव की भौगोलिक स्थिति का वर्णन लेखक ने इस प्रकार किया है–''बनारस से आजमगढ़ जाने वाली सड़क पर, शहर से करीब चार मील दूर, एक छोटा–सा गांव है, मौजा मढ़वां।'' इनकी शैली वर्णन प्रधान है, जिसमें कहीं–कहीं आत्मकथात्मक, विवरणात्मक तथा संवादात्मक शैली के भी दर्शन हो जाते हैं वाक्य–विन्यास संयमित तथा अर्थपूर्ण है। इनकी भाषा भावों की अभिव्यक्ति में सक्षम है तथा अपने विषय का प्रतिपादन वे पूरी ईमानदारी से करते हैं।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 प्रेमचन्द की जीवनी के आधार पर उनके पूर्वजों के इतिहास और उनके परिवेश का चित्रण कीजिए ?

उत्तर प्रेमचन्द का गांव लमही बनारस से आजमगढ़ जाने वाली सड़क पर शहर से करीब चार मील दूर स्थित है। यहां कायस्थ,

कुर्मी, ठाकुर, कुम्हार तथा मुसलमान रहते हैं। लमही के पास ऐरे नामक गांव में आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व लाला टीकाराम रहते थे। उनके दो बेटे लाला मनियार सिंह और लाला महाराज सिंह थे। मनियार सिंह निःसंतान मर गए थे। महाराज सिंह के दो बेटे रामलाल और मैकूलाल थे। मैकूलाल के छः बेटे थे, जिनमें से चौथे बेटे गुरसहाय लाल पटवारी बन कर ऐरे से लमही आये थे। उनके साथ उनका भतीजा हरनरायन लाल भी आया था। इन्हीं से लमही में समस्त कायस्थ घराने पैदा हुए थे।

मुंशी गुरसहाय लाल के चार बेटे कोलेश्वर लाल, महाबीर लाल, अजायब लाल और उदित नरायन लाल थें इन्होंने लमही में आते ही एक बड़ा–सा कच्चा मकान बनवा लिया था और धीरे–धीरे साठ बीघा ज़मीन अपनी बना ली थी, जिसे उन्होंने अपने बेटे महाबीर लाल के नाम लिखवा दी थी। पटवारी होने के कारण गांव में वे राजा समझे जाते थे। इन्हें पीने–खाने का शौक था और पीकर अपनी पत्नी को पीटते भी थे। इनके पुत्रों को अपनी मां के साथ पिता का दुर्व्यवहार अच्छा नहीं लगता था। महाबीर खेती करते थे। कौलेश्वर लाल, अजायब लाल और उदित नरायन डाक मुंशी बन गए थे। कौलेश्वर लाल की तीस वर्ष की आयु में मृत्यु हो गयी, उदित नरायन डाकखाने में गबन करने के कारण सात साल के लिए जेल चले गए तो इन दोनों के परिवारों का पालन–पोषण मुंशी अजायब लाल करने लगे। गुरसहाय लाल की मृत्यु के बाद महाबीर ने साठ बीघे ज़मीन से इस्तीफा दे दिया और अपने बेटे के नाम की छः बीघा ज़मीन पर खेती करके गुज़ारा करने लगे।

मुंशी अजायब लाल बहुत ही भले, सरल तथा धार्मिक मनोवृत्ति के व्यक्ति थे। उनकी पत्नी आनन्दी भी उनके समान सुन्दर तथा स्वभाव की कोमल नारी थी। वह अपने पति के समान सदा सब की सहायता के लिए तैयार रहती थी। घर के काम–काज, खाना पकाने, सिलाई आदि में वे बहुत निपुण थीं। उनकी दो लड़कियाँ पैदा होकर मर गयी थीं। इसलिए तीसरी संतान के जनम के समय वे मायके नहीं गयीं। उन्हें तीसरी संतान लड़की पैदा हुई, जिसका नाम सुग्गी रखा गया। इसके जन्म के छः–सात वर्ष बाद 31 जुलाई, 1880 ई॰ को प्रेमचन्द का जन्म हुआ था। इनका बचपन का नाम धनपत और नवाब था। तीसरी लड़की के बाद पैदा होने के कारण इन्हें तेंतर कह कर मां–बाप में से किसी एक को खा जाने वाला कहा गया। जो गांव में प्रचलित अन्ध–विश्वासों के कारण था। इनके पूर्वज खेती करना निम्न वर्ग का काम समझते थे तथा स्वयं पढ़े–लिखे होने के कारण वकील, मुख्तार, पेशकार, पटवारी, अध्यापक, डाकमुंशी आदि बनना पसन्द करते थे। पटवारी बन कर गांव वालों के साथ मनमानी करना वे अपना अधिकार समझते थे।

प्रश्न 2 ''.....पर जो सत्य है एक न एक दिन उसकी विजय होगी और अवश्य होगी।'' कथन के आधार पर प्रेमचन्द की जीवनी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर प्रेमचन्द का जन्म तीन लड़कियों के बाद हुआ था। इसलिए इनके जन्म के समय इन्हें 'तेतर' अर्थात् तीन लड़कियों की पीठ पर जन्मा, मां–बाप में से किसी एक को खा जाने वाला, कहा गया। इस प्रकार समाज की मुर्दा रूढ़ियों की छाया में पैदा हुए प्रेमचन्द को आजीवन समाज की इन सड़ी–गली रूढ़ियों से संघर्ष करना पड़ा। अपनी असहनीय बीमारी तथ मरणासन्न अवस्था में भी उन्हें समाज की चिन्ता निरन्तर सताती रही। अस्वस्थ होते हुए भी वे गोर्की की मृत्यु पर आयोजित शोक सभा में गए। अपनी बीमारी की चिन्ता न करते हुए उन्हें समाज की चिन्ता सताती रहती थी। बीमारी में उनके सभी मित्र उनका साथ छोड़ गए थे और वे अकेले सन्नाटे में अपनी ईमानदारी और गरीबी से भरी ज़िन्दगी के दिनों को स्मरण करते हुए 'गोदान' के होरी को स्मरण करते हैं क्योंकि होरी की मृत्यु लू लगने से हुई थी और वे स्वयं भी लू लगने से बीमार हो कर मरणासन्न हैं।

प्रेमचन्द सदा महाजनी सभ्यता के कारण पनप रही ईर्ष्या, व्यभिचार, बेईमारी, चोरी–डाके आदि के विरोधी रहे। दौलत के द्वारा उत्पन्न इन बुराइयों से वे आजीवन संघर्ष करते रहे। वाराणसी के रामकटोरा बाग़ की छोटी–सी कोठरी में बीमार पड़े प्रेमचन्द का मन 'आकाश में उस पुरानी महाजनी सभ्यता के सूरज का डूबना और एक नयी सभ्यता के सूरज का उगना देखता रहता है।' उनका मानना था कि यह एक प्राकृतिक नियम है कि जो वयवस्था समाज की परिवर्तित स्थितियों के अनुरूप स्वयं को बदलती नहीं है वह स्वयं ही मिट जाती है। इसलिए वे समाज के जागरूक लोगों का आह्वान करते हैं कि महाजनी सभ्यता को समाप्त कर नयी समतावादी सभ्यता को स्थापित करो। इसके लिए महाजनी सभ्यता के समर्थकों से कड़ा संघर्ष होगा। वे नवीन स्थापनाओं का विरोध करेंगें जन–सामान्य को बहकायेंगे–फुसलायेंगे परन्तु सतय मार्ग पर चलने वालों को कभी विचलित नहीं होना चाहिए क्योंकि अन्तिम विजय तो सत्य मार्ग पर चलने

वालों की होती है।

इस प्रकार लेखक ने प्रेमचन्द की जीवनी के माध्यम से उनकी प्रगतिशील विचारधारा का परिचय देते हुए समाज में व्याप्त रूढ़िवादिता,अनाचार, दौलत के नशे आदि का विरोध करते हुए एक आदर्श समतावादी सभ्यता से युक्त समाज की स्थापा करने का संदेश दिया हैं इसके साथ ही लेखक ने इस तथ्य की ओर भी संकत किया है कि वर्तमान जगत् इतना अधिक संवेदना शून्य है कि जब प्रेमचन्द की मृत्यु हुई तो उनकी अन्तिम यात्रा एक गुमनाम व्यक्ति के समान मात्र बीस–पच्चीस व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न हुई।

प्रश्न 3 जीवनी के मानक तत्त्वों के आधार पर 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' की समीक्षा कीजिए ?

उत्तर जीवनी किसी व्यक्ति की जीवन–यात्रा का सम्पूर्ण प्रामाणिक विवरण होता है। 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' प्रेमचन्द की जीवनी के उन अंशों की प्रस्तुति है जिसमें लेखक ने उनकी वंश परम्परा, जन्म तथा मृत्यु पूर्व की बीमारी का यथा तथ्य निरूपण किया है। जीवनी के तत्त्वों के आधार पर इसकी समीक्षा अग्रलिखित रूप से की जा सकती है–

1. **प्रामाणिकता** – जीवनी व्यक्ति विशेष के जीवन का तथ्य परक चित्रण होती है। 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' के लेखक अमृतराय प्रेमचन्द के पुत्र हैं। इसलिए उन्होंने इस जीवनी में प्रेमचन्द की वंश परम्परा, उनके जन्म तथा मृत्यु से पूर्व की घटनाओं का यथा तथ्य निरूपण किया है। लाला टीकाराम से लेकर प्रेमचन्द के जन्म तक का विवरण तथ्यों पर आधारित है। 16 जून, 1936 को लू लगने से लेकर आठ अक्तूबर तक की घटनाओं का वर्णन भी लेखक ने तथ्यों के आधार पर किया है। अतः इस जीवनी को प्रामाणिक कह सकते हैं।

2. **तटस्थता** – जीवनी में कल्पना के लिए कोई स्थान नहीं होता है। लेखक को तटस्थ भाव से व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित सभी तथ्यों को प्रस्तुत करना होता है। इस जीवनी में भी लेखक ने प्रेमचन्द के पूर्वजों की अच्छाई–बुराई का निष्पक्ष भाव से वर्णन किया है। मुंशी गुरसहाय लाल का शराब पीकर अपनी पत्नी को पीटना, उदित नरायन लाल का डाकखाने के रुपए का गबन करना, जेल जाना, प्रेमचन्द के जन्म के समय उन्हें तेतर का लड़का बताना आदि लेखक की तटस्थ भाव से जीवनी लिखने के प्रमाण हैं।

3. **कलात्मकता** – लेखक ने इस जीवनी को अत्यन्त प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है। प्रेमचन्द की वंश परम्परा का उल्लेख करते हुए लेखक के वर्णनात्मक शैली का आशय लेते हुए समस्त तथ्यों को कथात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। प्रेमचन्द की अन्तिम बीमारी को लेखक ने दृश्यात्मक शैली में प्रस्तुत करते हुए एक–एक दिन की घटनाओं को सजीव कर दिया है। इससे उनकी बीमारी के बढ़ने के साथ–साथ उनकी मानसिक दशा का भी ज्ञान हो जाता है।

4. **भाषा–शैली** – जीवनी की भाषा–शैली सरल, सहज, व्यावहारिक तथा आकर्षक होनी चाहिए। लेखक ने इस जीवनी को सामन्य बोलचाल की भाषा में प्रस्तुत किया है। जीवनी के पहले अंश में उर्दू–फारसी के शब्दों की अधिकता है, जिससे तत्कालीन परिवेश का यथार्थ स्वरूप उजागर हो जाता है ; जैसे – लावल्द, मुदर्रिस, मुहर्रिर, अहलमद, ताहय। जीवनी के दूसरे अंश की भाषा सहज तथा कहीं–कहीं तत्सम शब्दों से युक्त है। शैली वर्णनात्मक, भावात्मक, चित्रात्मक तथा संवादात्मक है।

प्रश्न 4 अमृतराय की भाषा–शैली पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर भावों को सुन्दरतम ढंग से व्यक्त करने का प्रमुख साधन भाषा है। जिस साहित्यकार के पास भाषा का जितना समृद्ध भण्डार होगा वह उतनी ही मार्मिकता से अपने भावोंको व्यक्त कर सकता है अमृतराय को भाषा पर पूर्ण अधिकार है, इसलिए 'प्रेमचन्द : लमही में जन्म एवं अन्तिम बीमारी' जीवनी में वे अपने भावों को व्यक्त करने में सफल रहे हैं। **इनकी भाषा–शैली की प्रमुख विशेषताएँ अग्रलिखित हैं** –

1. **सरल, सहज भाषा** – लेखक ने इस जीवनी में अत्यन्त सहज तथा व्यावहारिक भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें अवसरानुकूल मुहावरों का स्वाभाविक रूप से प्रयोग भी किया गया है ; जैसे– ''यों तो इक्का–दुक्का कायस्थ भी अपने हाथ से हल चला लेते हैं। लेकिन बस इक्का–दुक्का। खेती–किसानी कुर्मियों का काम है। कायस्थों की शान में इससे बट्टा लगता है।''

2. **काव्यमयी भाषा** – अपने कथन को प्रभावशाली बनाने के लिए लेखक ने अनेक स्थलों पर काव्यमयी भाषा का भी प्रयोग किया है। इससे कथन में सजीवता आ जाती है। जैसे तेज़ गर्मी का वर्णन करते हुए लेखक का यह कथन– ''कितनी सख्त धूप है ? खोपड़ी चिटकी जाती है। हवा में लपटों के तमाचे से लगते हैं। लगता है खाल सुलस जायेगी।''

3. **चित्रात्मक भाषा** – इस जीवनी में लेखक ने शब्दों के माध्यम से स्थितियों को सजीव कर दिया है। मानसिक द्वन्द्वों को मूर्त रूप भी प्रदान किया हैं जेसे –''करकराती तो है वह रेत जिसे तुमने जिन्दगी के रेगिस्तानी सफर में धोखे से पानी समझकर पी लिया था और जो अब, जुगाली करते वक्त, दांतों के नीचे आ जाती है।'' लमही की भौगोलिक स्थिति स्पष्ट करते हुए भी लेखक ने वहां का मानचित्र–सा खींच दिया है। जैसे–''बनारस से आजमगढ़ जाने वाली सड़क पर, शहर से करीब चार मील दूर, एक छोटा–सा गांव है, लमही, मौजा मढ़वाँ।''

4. **शब्द भण्डार** – लेखक ने अवसरानुकूल उर्दू के शान, ताहम, काबलियत, मुहर्रिर, पुश्त, लावल्द, मुदर्रिस, तुफैल, गुंजाइश, देशज– कुटम्स, बरस, फेंटा, छोर, हैकल, तत्सम–फलतः , दुर्बल, दुर्दशा, अनुष्ठान, अभूतपूर्व, मनोयोग, भ्रम शब्दों को भरपूर प्रयोग किया है।

5. **शैली** – इस जीवनी में लेखक ने मुख्य रूप से वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है। कहीं–कहीं शब्द चित्रों के माध्यम से दृश्यात्मक शैली का भी प्रयोग हुआ है। पात्रों के वार्तालापों के समय संवादात्मक शैली के दर्शन होते हैं। इससे जीवनी में रोचकता तथा गतिमयता का समावेश हो गया है। कुछ स्थलों पर कथात्मक एवं सूत्रात्मक शैली का प्रयोग भी हुआ है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भाषा–शैली की दृष्टि से अमृतराय एक सफल लेखक हैं तथा इस जीवनी में उन्होंने सरल, सहज, व्यावहारिक, भावपूर्ण एवं प्रवाहमयी भाषा तथा सरस शैली का प्रयोग किया है।

अध्याय–6
श्री माखन लाल चतुर्वेदी

पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'

खण्ड क : पाठ सार

प्रस्तुत पाठ 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी ' हिन्दी गद्य की महत्त्वपूर्ण विधा साक्षात्कार है। इसे 'भेंटवार्त्ता' तथा 'इंटरव्यू' भी कहा जाता है। साक्षात्कार के माध्यम से भेंटकर्त्ता साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के जीवन से जुड़ी अनेक छोटी से छोटी तथा गहरी सी बातों को उजागर करवाता है। इस साक्षात्कार के लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' हैं जिन्होंने सन् 1952 में प्रसिद्ध साहित्यकार श्री माखनलाल चतुर्वेदी का साक्षात्कार उनके खंडवा स्थित निवास पर लिया। इस साक्षात्कार से माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, रचना प्रक्रिया और साहित्यिक चिंतन से जुड़ी अनेक छोटी–छोटी बातें स्पष्ट हुई हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट हुआ है कि माखनलाल चतुर्वेदी एक सच्चे देश प्रेमी, साहित्य–साधक तथा सम्पूर्ण विश्व को अपना मानने वाले विराट व्यक्तित्व के धनी थे। पाठ का सार इस प्रकार है–

सन् 1952 में लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने हिन्दी साहितय के शीर्षस्थ रचनाकार श्री माखनलाल चतुर्वेदी का साक्षात्कार लिया। इस साक्षात्कार में हिन्दी साहित्य के विभिन्न बिन्दुओं पर चर्चा–परिचर्चा हुई। साक्षात्कार का आरम्भ गद्य काव्य पर चर्चा से हुआ। गद्य काव्य पर चर्चा करते हुए माखनलाल चतुर्वेदी जी कहते हैं कि गद्य काव्य भाव की भाषा पर आधारित होता है। उनका मत है कि हिन्दी गद्य काव्य के जन्मदाता का श्रेय लल्लूलाल जी को दिया जाना चाहिए। उनकी प्रसिद्ध रचना 'प्रेमसागर' हिन्दी का श्रेष्ठ गद्य काव्य है। चतुर्वेदी जी स्वयं से जुड़ी हिन्दी सीखने की रोचक घटना का उल्लेख करते है और हिन्दी की रचना–प्रक्रिया का पहला 'उत्स' अपने बचपन की उसी घटना को मानते हैं जब उन्होंने लल्लूलाल की रचना 'प्रेमसागर' को छिपकर पढ़ा था। चतुर्वेदी जी गद्य काव्य के संदर्भ में अपनी दूसरी प्रेरणा स्वामी रामतीर्थ की शैली को तथा तीसरी प्रेरणा सरदार पूर्ण सिंह की 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित रचना 'नयनों की गंगा' को मानते हैं। इसके अतिरिक्त रामकृष्ण दास तथा लाला हरदयाल का भी उन पर प्रभाव पड़ा। चतुर्वेदी जी स्वयं के विषय में बताते हैं कि खड़ी बोली में लिखने की प्ररेणा उन्हें जेल में होने वाली प्रार्थना से मिली थी।

साक्षात्कार में माखनलाल चतुर्वेदी जी अपनी रचनाओं के विषय में बताते हैं कि वे अपनी रचनाओं में प्रभु के पास नहीं अपितु प्रिय के पास पहुंचने का प्रयास करते हैं। उन्होंने देश को कभी राधा तो कभी कृष्ण मानकर उसकी आराधना की है। चतुर्वेदी जी अपने बचपन के विषय में बताते है कि उनकी आर्थिक स्थिति विशेष नहीं थी। वे अपने राजनीति में आने की प्रेरणा माधव प्रसाद सप्रे को मानते हैं। उन्होंने बताया कि गणेश शंकर विद्यार्थी जी ने उनकी राजनीति और साहित्य को परस्पर जोड़ दिया। बाद में गांधीवादी विचारधारा ने उनकी दिशा को और अधिक गतिशीलता प्रदान की। अपने गृहस्थ जीवन पर प्रकाश डालते हुए चतुर्वेदी जी ने बताया कि उनकी पत्नी की टी॰ बी॰ के कारण मृत्यु हो गयी। लोगों ने उनकी दूसरी शादी के लिए खूब ज़ोर दिया किन्तु अंततः उन्हें मना कर दिया। पत्नी की मृत्यु के बाद उनके हृदय में नारी के प्रति सम्मान की भावना आ गई थी।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता पर विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि पत्रकारिता को केवल किसी की आलोचना और प्रशंसा का साधन बनाकर सफलता का प्रयास करना तो बुद्धि के ऐरावत हाथी पर नगरपालिक का कूड़ा ढोने के बराबर है। वे अपने पत्र 'कर्मवीर' के माध्यम से पत्रकार को समर्पण भावना तथा पत्रकारिता के आदर्शों को अपनाने की बात कहते हैं। वे पत्रकारिता को अत्यन्त साहसिक कार्य मानते हैं। तत्कालीन समय साहित्य और पत्रकारिता के प्रति समर्पण की भावना का समय था किन्तु उस समय के पत्रकारों और पत्रों की दयनीय स्थिति पर भी उन्होंने चिंता जताई है। चतुर्वेदी जी युवाओं को अपनी प्रेरणा का स्रोत

मानते हैं। वे बताते है कि जब वे किसी नवयुवक को पहली और बलिदान करने वाली कविता लिखते हुए देखते हैं तो उन्हें असीम आनन्द की प्राप्ति होती है। वे युवाओं को मातृभूमि की पूजा के लिए समर्पित होने के लिए उनका आह्वान करते हैं।

लेखक जब चतुर्वेदी जी से उनके सौन्दर्य संबंधी विचार पूछता है तो वे बताते हैं कि सौन्दर्य का मूल्यांकन तो संकट में ही दीखता है । संकट का मूल्य चुकाए बिना मिली चीज़ उन्हें जीवन में चोरी के समान लगती है। उनकी दृष्टि में सौन्दर्य किसी दुर्गम स्थान पर खिला हुआ गुलाब का फूल है जिसके इर्द–गिर्द एक सर्प का जोड़ा अठखेलियाँ कर रहा हो अर्थात् वे सौन्दर्य में संकट को विशेष महत्त्व देते हैं। चतुर्वेदी जी अपने दर्शन के विषय में बताते है कि स्नेह अखंड होता है। उसके टुकड़े करके देखना समय अथवा प्रभु के टुकड़े करके देखने के समान है। इसलिए लौकिक आकर्षणों में साधना का दान रहे तो आलौकिक परम सिद्धि अपने आप आ जाया करती हैं । वे स्पष्ट करते हैं कि वे धार्मिक जड़ता के विरुद्ध विद्रोह करने वाले को ही संत मानते हैं। यही कारण है कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई किसी भी धर्म के संत उनके समान रूप से आराध्य हैं।

लेखक चतुर्वेदी जी से उनके लिखने की पद्धति के विषय में पूछता है तो वे कहते हैं कि उनके लेखन का केवल दसवाँ हिस्सा कल्पना पर आधारित होता है, बाकी के नौ हिस्से जीवन के यथार्थ से जुड़े होते हैं। वे जब भी व्यक्ति, समाज तथा देश से जुड़ी घटना को देखते हैं तो उनका मन बेचैन हो जाता है और उनके विचार वर्षा के पानी से समान अपना आकार ग्रहण करने के लिए छटपटाने लगते हैं । वातावरण के विषय में वे कहते हैं कि उन्हें रात्रि का वातावरण प्रिय है। सफेद कागज़ पर लाल इंक निब से लिखना उन्हें अच्छा लगता है। कोलाहल में लिख नहीं पाते। लिखने में उन्हें कठिनाइयों का सदैव सामना करना पड़ता रहा है। एक ही बैठक में लिखने के आदी होने के कारण उन्हें कई रचनाओं को स्थगित भी करना पड़ा है। उन्होंने बताया कि वे लिखने के बाद उसमें संशोधन अथवा फेर–बदल भी अवश्य किया करते हैं । लिखने में अपने लिए कई नामों का प्रयोग किया। 'बनाली' नाम से दो कहानियाँ लिखी। 'उदय सिंह चन्द्रवंशी', 'शमस' या 'क्षत्रज्ञ' तथा 'भारतीय आत्मा' आदि उपनामों का प्रयोग भी किया।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी से जब लेखक उनकी रुचियों के विषय में पूछता है तो बताते हैं कि अखबार की कतरने काटकर दीवार पर चिपकाना, कविता करना, चमकीले पत्थर समेटना, पेड़ पर चढ़ना और कुएँ में उतरना उनकी बचपन में प्रिय रुचियां रही हैं। वृक्षों, गायों और नन्हें बच्चों के साथ या अकेला रहना भी उन्हें प्रिय रहा है। चतुर्वेदी जी नई पीढ़ी के साहित्यकारों को प्रेरित करना अपना नैतिक कर्त्तव्य कहते हैं। इनका मत है कि नई पीढ़ी को प्रोत्साहित करने के लिए पुरानी पीढ़ी के साहित्यकारों को आगे आना चाहिए। वे चर्चा में नई पीढ़ी को बोई हुई फसल, नन्हा बच्चा तथा नए नक्षत्र कहते हैं। कविता पर अपनी राय व्यक्त करते हुए चतुर्वेदी जी कहते हैं कि कविता को वादों में बांधकर नहीं रखना चाहिए। कविता में कविता का माधुर्य, मस्ती और निर्भयता उसके आवश्यक गुण हैं। कविता को प्रगतिवाद, प्रयोगवाद के घेरे में बांधना मूर्खता है। उनका मानना है कि वाद तो कविता को खण्डों में बाँटने वाले हैं इसलिए कविता में वाद नाम की कोई चीज़ नहीं होनी चाहिए। श्री माखनलाल चतुर्वेदी अपने परिवार के विषय में कहते हैं कि वे अपने भाई तथा मित्रों के परिवारों में सदैव पारिवारिक ही रहे हैं। परिवार में समर्पन की भावना के साथ–साथ वे सम्पूर्ण विश्व को ही अपना परिवार मानते हैं।

लेखक श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी का साक्षात्कार लेकर उनके विराट् व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित होता हैं। लेखक द्वारा लिए गए इस साक्षात्कार से श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परत–दर–परत स्पष्ट हुई है। लेखक ने इस साक्षात्कार में चतुर्वेदी जी की जीवन और साहित्य से जुड़ी अत्यन्त छोटी–से–छोटी तथा गहरी से गहरी बात को सफलता से उजागर किया है। यह साक्षात्कार हिन्दी गद्य की साक्षात्कार विधा की अन्यतम उपलब्धि है।

खण्ड ख : व्याख्या

मुझे आश्चर्य तो तब हुआ उन्होंने खंडवा की प्राचीन दशा का ब्यौरा देना शुरू किया। आबादी जिनिंग, फैक्टरियों, कपास की गाड़ियों, ज्वार की खास पैदावार और भांग–गांजे के गोदामों से लेकर साहित्यिक और सांस्कृतिक जीवन की कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण वस्तु न थी, जिस पर उन्होंने चर्चा न की हो, जन–जीवन के हर पहलू पर उनकी टिप्पणियाँ सुनकर मुझे उनके विराट् और सहानुभूतिशील हृदय की झलक मिली।

शब्दार्थ – ब्यौरा = विवरण। विराट = विशाल।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश सुप्रसिद्ध साक्षात्कार लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिए गए माखनलाल चतुर्वेदी के साक्षात्कार 'श्री

माखनलाल चतुर्वेदी' का अंश है। इसमें उन्होंने माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, रचना प्रक्रिया, साहित्यिक चिन्तन से साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की समस्त छोटी–छोटी बातों को समेट दिया हैं साक्षात्कार से यह भी स्पष्ट हुआ है कि चतुर्वेदी जी एक सच्चे देश प्रेमी, साहित्य साधक एवं परिवार के प्रति समर्पण की भावना रखने वाले तथा विश्व को ही अपना परिवार मानने वाले थे। इन पंक्तियों में लेखक ने चतुर्वेदी जी की विषय व्यापकता की ओर संकेत किया है।

व्याख्या – लेखक सुप्रसिद्ध साहित्याकर माखनलाल चतुर्वेदी का जब साक्षात्कार लेता है तो उसे उनके व्यक्तित्व को समीप से देखने का अवसर मिला। लेखक ने महसूस किया कि उनका व्यक्तित्व विराट था। लेखक को उस समय बहुत आश्चर्य होता है जब माखनलाल चतुर्वेदी उसे खंडवा प्रदेश की प्राचीन दशा का विस्तृत विवरण देना शुरू करते हैं। वे खंडवा प्रदेश की जनसंख्या तथा वहां की कपास की गाड़ियों के साथ–साथ ज्वार की फसल की विशेषता बताने के अतिरिक्त भांग और गांजे जैसे नशीले पदार्थों तक की जानकारी लेखक को देते हैं। खंडवा प्रदेश के साहित्यिक और सांस्कृतिक जीवन से जुड़ी कोई ऐसी गतिविधि नहीं थी जिसके विषय में वे न जानते हों और लेखक के साथ उन्होंने चर्चा न की हो। उन्होंने खंडवा प्रदेश के जन–जीवन के प्रत्येक पहलू पर टिप्पणी की थी। माखनलाल चतुर्वेदी जी के खंडवा प्रदेश से इस प्रकार जुड़े होने और वहां की छोटी से छोटी बात की जानकारी रखने से लेखक ने उसके विराट व्यक्तित्व और सहानुभूतिपूर्ण हृदय का अनुमान लगाया।

विशेष –

1. माखनलाल चतुर्वेदी जी के व्यक्तित्व की विराट्ता और सहानुभूतिपूर्ण हृदय जैसी विशेषताओं की ओर संकेत किया गया है।
2. चतुर्वेदी जी की विस्तृत जानकारी पर प्रकाश डाला गया है।
3. भाषा सरल,तथा स्वाभाविक है जिसमें उर्दू–फारसी के शब्दों का प्रयोग है।

सच तो यह है कि जर्नलिज्म को नहीं मानता। मैंने तो जर्नलिज्म में साहित्य को स्थान दिया है। बुद्धि के ऐरावत पर म्यूनिसिपल कूड़ा ढोने का जो अभ्यास किया जा रहा है अथवा ऐसे प्रयोग में जो सफलता प्राप्त की जा रही है, उसे मैं पत्रकारिता नहीं मानता। निंदा और स्तुति के ग्राहकों को छोड़कर केवल गुणग्राहकों का समूह रह जाता है, जिन पर पत्र चलाना पड़ता है।

शब्दार्थ – निंदा = बुराई। स्तुति = प्रार्थना, प्रशंसा। ग्राहक = खरीददार, मान देने वाला।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी गद्य की साक्षात्कार विधा के अन्तर्गत पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा माखनलाल चतुर्वेदी के लिए गए साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' का अंश है। इसमें माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–छोटी बातों के साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परतें खुलकर सामने आई हैं। यहां चतुर्वेदी जी के पत्रकारिता से सम्बन्धित विचार प्रकट हुए हैं।

व्याख्या – लेखक द्वारा पत्रकारिता से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाने पर माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि सच तो यह है कि वे जर्नलिज़्म अर्थात् पत्रकारिता को साहित्य से अलग नहीं मानते हैं। वे पत्रकारिता और साहित्य को जोड़कर देखते हैं और पत्रकारिता में भी साहित्य को स्थान देते हैं। वे पत्रकारिता के नाम पर किसी की आलोचना करने के पक्ष में नहीं थे। उनका मत था कि पत्रकारिता में यदि बुद्धि का सहारा लेकर किसी के दोषों अथवा गुणों को उजागर करके अपनी पत्रकारिता और पत्र को सफल करने का प्रयास किया जाता है, तो वह ठीक वैसे ऐरावत जैसे श्रेष्ठ हाथी पर नगरपालिका का कूड़ा ढोया जा रहा हो। पत्रकारिता तो श्रेष्ठ कार्य है इसे केवल किसी के गुण–दोषों या विज्ञापन का आधार नहीं बनाना चाहिए। पत्रकारिता के लिए साहस चाहिए। पत्रकारिता में अपनी प्रशंसा और दूसरों की निंदा चाहने वाले लोगों को छोड़कर केवल गुण की प्रशंसा करने वाले लोगों की आवश्यकता होनी चाहिए तभी पत्र को सफलतापूर्वक चलाया जा सकता है और वही सच्ची पत्रकारिता है।

विशेष –

1. चतुर्वेदी जी के पत्रकार–कला के विषय में विचार व्यक्त हुए हैं।

2. पत्रकारिता केवल बुद्धि का आश्रय लेकर दूसरे गुण–दोषों का वर्णन करना ही नहीं है–यह तथ्य स्पष्ट हुआ है।

3. सूक्ष्म भावों का स्पष्ट चित्रण है।

4. भाषा सहज, सरल तथा स्वाभाविक है।

''तरुणाई मेरी प्रेरणा का स्रोत है। मैं इसके लिए जो भी कर सकूं, मेरे लिए असीम सुख का कारण होता हैं जिस नए लड़के को पहली और मस्तानी कविता लिखते देखता हूँ, उसी पर मेरा प्यार उमड़ पड़ता है। मुझे पहली उठान में बाधा होने की चिन्ता होती है। आगे बढ़ने पर चिन्ता करना उसका काम है, मेरा नहीं।''

शब्दार्थ – तरुणाई = युवा अवस्था। असीम = जिसका अंत न हो।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश सुप्रसिद्ध साक्षात्कार लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिए गए माखनलाल चतुर्वेदी के साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' का अंश है। इसमें उन्होंने माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, रचना प्रक्रिया, साहित्य चिन्तन के साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की समस्त छोटी–छोटी बातों को समेट दिया है। साक्षात्कार से यह भी स्पष्ट हुआ है कि चतुर्वेदी जी एक सच्चे देश प्रेमी, साहितय साधक एवं परिवार के प्रति समर्पण भावना रखने वाले तथा पूरे विश्व को ही अपना परिवार मानने वाले थे। इन पंक्तियों से चतुर्वेदी जी की नवयुवकों के प्रति भावना का पता चलता है।

व्याख्या – माखनलाल चतुर्वेदी जी नवयुवकों को देश का कर्णधार मानते थे। वे उनकी कठिनाइयों और समस्याओं को दूर करने का प्रयास करते थे। उनका कहना था कि नवयुवक उनकी प्रेरणा का स्रोत हैं। वे नवयुवकों के कल्याण के लिए जब भी कुछ कार्य करते हैं तो उन्हें असीम सुख प्राप्त होता हैं । नवयुवकों की भलाई में उन्हें आनन्द आता है। जब वे किसी नवयुवक को उसकी पहली और देश प्रेम की मस्ती भरी कविता लिखते देखते हैं तो उसके प्रति उनके मन में प्यार उमड़ आता है। वे नवयुवकों के मन में बलिदान की भावना देखना चाहते थे और जब कोई नवयुवक देश पर मर–मिटने अथवा अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की कविता लिखता था तो उनके मन में उसके प्रति विशेष स्नेह की भावना फूट पड़ती थी। उनका मानना था कि इस क्षेत्र में आरम्भ में कठिनाई आने की सम्भावना अधिक होती है इसलिए वे आरम्भ में तो चिन्ता करते हैं परन्तु इस क्षेत्र में आगे बढ़ने पर चिन्ता करना उनका काम नहीं अपितु उस नवयुवक का होता है।

विशेष –

1. चतुर्वेदी जी ने तरूणाई को अपना प्रेरणा स्रोत माना हैं

2. चतुर्वेदी जी को युवाओं को देश–प्रेम की ओर प्रेरित करना अधिक प्रिय था।

3. भाषा सरल, सहज एवं प्रभावोत्पादक है।

4. प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

'एक बड़े पहाड़ के किसी दर्रे में, किसी गड्डे में उलझ कर रह जो वाले नाले में पूरी गहराई पर जहां मनुष्य की पहुंच कठिन है, एक गुलाब उग आया है और गुलाब के पास एक साँप का जोड़ा अठखेलियां कर रहा है। उस गुलाब में आया हुआ फूल, हवा की लहरों पर लहरा रहा है– बस, वह फूल मुझे चाहिए। काश, मैं उसे ला सकूं। काश, कोई और मुझे लाकर दे सके। यह मेरा सौन्दर्य है।'

शब्दार्थ – अठखेलियां = क्रीड़ा। सौन्दर्य = सुन्दरता।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी गद्य की साक्षात्कार विधा के अन्तर्गत पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा माखनलाल चतुर्वेदी के लिए गए साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' का अंश है। इसमें माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–छोटी बातों के साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तितव की परतें खुलकर सामने आई हैं। यहां चतुर्वेदी जी के वास्तविक सौन्दर्य के प्रति विचार व्यक्त हुए हैं।

व्याख्या – माखनलाल चतुर्वेदी वास्तविक सौन्दर्य उसे मानते थे जिसमें कोई संकट या खतरा हो। उनका मत था कि जिसमें खतरा नहीं उसमें माधुर्य नहीं हो सकता। वे सौन्दर्य की तुलना सर्प के जोड़े के पास खिले गुलाब के फूल से करते हैं। वे कहते हैं कि उनके

सौन्दर्य का निर्माण तो संकट में ही होता है। जैसे किसी पहाड़ के दर्रे में अत्यन्त गहराई पर, जहां पहुंचना भी कठिन हो वहां एक सुन्दर गुलाब उग आया हो और उस गुलाब के पास ही सर्प का एक जोड़ा क्रिड़ा कर रहा हो परन्तु गुलाब का फूल अपनी सुन्दरता बिखेरता हुआ हवा में लहरा रहा हो–ऐसे फूल को प्राप्त करना ही सौन्दर्य को प्राप्त करना है। वह गुलाब का फूल ही वास्तविक सौन्दर्य है क्योकि उस फूल को प्राप्त करने में खतरा और कठिनाई है। चतुर्वेदी जी ऐसे ही गुलाब के फूल को लाना चाहते हैं जिसमें खतरा हो, वे इसे ही सुन्दरता मानते हैं। कहने का भाव यह है कि चतुर्वेदी जी ऐसे नवयुवकों को ही वास्तविक सौन्दर्ययुक्त कहना चाहते थे जो वास्तव में कठिनाइयों और संकटों से झूझने के लिए तैयार हों। उनका मत था कि संकट का मूल्य चुकाए बिना मिली चीज़ तो चोरी के समान होती है।

विशेष –

1. सौन्दर्य की तुलना अत्यन्त कठिनाई से प्राप्त होने वाले गुलाब के फूल से करना अत्यन्त सुन्दर है।
2. नवयुवकों का संकटों तथा कठिनाइयों से झूझने के लिए आह्वान किया गया है।
3. भाषा अत्यन्त आकर्षक, सरस एवं रोचक है।
4. आकर्षक बिम्बात्मक रचना है।

मेरा लेखन दशांश कल्पना का है, पर नौ, अंश जीवन से आया है। जहां कोई घटना घटी, व्यक्ति पर बीती या समाज पर संकट उतरा या देश की दशा में परिवर्तन हुआ, यहां मेरी बेचैनी की सीमा नहीं रहती और जिस तरह आकाश से बरसा हुआ पानी नदी–नालों तथा खाई–खंदकों में आकार ढूंढने लगता है, उसी तरह त्रिविध जीवनों से होने वाले परिणाम जीवन की आकुलता को आकार और प्रकार प्रदान करते हैं।

शब्दार्थ – दशांश = दसवां भाग। संकट = मुसीबत। आकुलता = मन की बेचैनी।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिखे साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' से उद्धृत हैं। इसमें उन्होंने माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–छोटी बातों के साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तितव पर प्रकाश डाला है। इन पंक्तियों में चतुर्वेदी जी की लेखन पद्धति के विषय में पता चलता है।

व्याख्या – लेखक साक्षात्कार के दौरान माखनलाल चतुर्वेदी जी उनकी लेखन पद्धति के विषय में पूछता है तो वे कहते हैं कि उनके लेखन में कल्पना का बहुत कम स्थान रहता है। उनका लेखन यथार्थ पर आधारित हैं उनके लेखक में कल्पना तो केवल दशांश होती है बाकी के नौ हिस्सों में कटु यथार्थ होता है। जब भी उनके आस–पास कोई घटना घटती है तो उसका सीधा प्रभाव उन पर पड़ता है। यह घटना चाहे किसी व्यक्ति पर घटती है, समाज पर संकट आता है अथवा देश की स्थिति में कोई बदलाव आता है, वे इससे प्रभावित अवश्य होते हैं। चतुर्वेदी जी बताते हैं कि इन घटनाओं से उन पर इतना प्रभाव पड़ता है कि उनके मन में असीम बेचैनी पैदा हो जाती है और जिस प्रकार वर्षा के समय आकाश से बरसा पानी नदी नालों तथा खाईयों और गुफाओं में आकार ग्रहण करने के लिए बेचैन हो उठता है, उसी प्रकार घटना से प्रभावित होने पर उसके मन में उठने वाले उनके विचार भी आकार और रूप प्राप्त करने के लिए तीव्रता से छटपटाने लगते हैं। अभिप्राय यह है कि समाज में घटने वाली घटनाओं का सीधा प्रभाव उन पर पड़ता है।

विशेष –

1. माखनलाल चतुर्वेदी जी का लेखन कल्पना की अपेक्षा यथार्थ के धरातल पर आधारित है।
2. जीवन–दर्शन का उदाहरण सम्मत रूप है।
3. आकाश से बरसने वाले पानी और मन में उठने वाले विचारों की सुन्दर तुलना की हुई है।
4. भाषा सरसता एवं प्रवाहमयता है।
5. प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

कोलाहल में तो मैं लिख ही नहीं सकता। लिखने की कठिनाई वह आगंतुक है, जो मेरे यहां नित्य आता रहा है और कहता रहा कि सिर्फ 5 मिनट का काम है। उनके 5 मिनट के काम पर मेरी कितनी ही रचनाएं स्थगित हो गई और कभी पूरी नहीं हुई, क्योंकि, मैं सिर्फ एक बैठक में लिखने का अभ्यासी हूं। दो बैठकों में दो वस्तुएं लिख पाता हूं, एक नहीं। संशोधन अवश्य करता हूं। लिखते समय ही उलट फेर करता जाता हूं।

शब्दार्थ – कोलाहल = शोर–शराबा। आगंतुक = अतिथि। नित्य = प्रतिदिन। स्थगित = रुकी। संशोधन = सुधार।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिखे साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' से उद्धृत है। इसमें माखन चतुर्वेदी जी के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–छोटी बातों के साथ–साथ उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व उजागर हुआ है। प्रस्तुत पंक्तियों में माखनलाल चतुर्वेदी जी ने अपनी लेखन पद्धति के विषय में बताया है।

व्याख्या –माखनलाल चतुर्वेदी अपने लेखन के विषय में बताते हैं कि वे शोर में नहीं लिख सकते। लिखने के लिए उन्हें शान्त वातावरण की आवश्यकता हेाती है। चतुर्वेदी जी ने यह भी स्पष्ट किया है कि लिखते समय सदैव उन्हें बाधाओं का सामना करना पड़ा है। वे जब भी लिखने बैठते थे उसी समय कोई न कोई आकर चाहे पांच मिनट के लिए ही सही उनके लेखन में बाधा अवश्य डालता था अर्थात् उनके लिखने के समय ही कोई न कोई व्यक्ति आकर उनसे पांच मिनट का समय मांगता किन्तु यह पांच मिनट का समय उन्हें बहुत भारी पड़ता। इस व्यवधान से उनकी एकाग्रता टूट जाया करती थी। इसी पांच मिनट की बाधा के कारण ही उनकी अनेक रचनाएं कभी भी पूरी नहीं हो पाई। चतुर्वेदी जी अपने विषय में बताते हैं कि वे जब भी लिखने बैठते थे तो एक ही बार बैठकर लिखते थे। बार–बार बाधाएं आने पर वे लिखने में कठिनाई अनुभव करते थे। वे अलग–अलग समय बैठकर अलग–अलग रचनाएं ही लिख पाते थे। एक ही रचना को वे निरन्तर एक ही बैठक में बैठकर लिखते थे। वे अपनी रचनाओं में संशोधन भी अवश्य करते थे। अधिकतर वे लिखते समय ही रचना में आवश्यक परिवर्तन कर लिया करते थे।

विशेष –

1. चतुर्वेदी जी ने अपनी लेखन शैली के विषय में बताया है।
2. लिखने की कठिनाई को आगन्तुक कहना अत्यंत रोचक है।
3. भाषा–शैजी सरल, सरस एवं स्वाभाविक है।

''जो प्रतिभा फूट चुकी है, उसकी जय–जयकार करेंगे, तो बढ़ेगी, आलोचना करेंगे, तो बढ़ेगी। लेकिन नया लेखक तो बोई हुई फसल है। कटी हुई फसल से बोई हुई फसल पर किसान की आशा अधिक होती हैं । यदि नन्हा बच्चा अंगुली पकड़ कर चलाया जाता है, तो यह परम आवश्यक है कि सरस्वती के आंगन का नन्हा बच्चा जब चलाने के लिए अंगुली की आशा करे, तो साहित्य के ईमान की तरह पके हुए साहित्यकों की उँगलियाँ आगे आवें। यदि आकाश में उगे हुए नक्षत्रों के डूबने से पहले ही नए नक्षत्र उग आते हैं और आकाश उनके लिए जगह कर देता है, तो पृथ्वी की नई पीढ़ी को भी अपने पूर्वगामियों के मरने की प्रतीक्षा क्यों करनी पड़े ?''

शब्दार्थ – प्रतिभा = तेज बुद्धि । पूर्वगामी = पहले जाने वाले।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिखे साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' से लिया गया है। इस साक्षात्कार के माध्यम से माखन चतुर्वेदी जी के जीवन , रचना प्रक्रिया, साहित्यिक चिंतन के साथ–साथ उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व की छोटी–छोटी बातें भी स्पष्ट हो गई हैं। यहां चतुर्वेदी जी के नई पीढ़ी के साहित्यकारों के प्रति विचार व्यक्त हुए हैं।

व्याख्या – श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी ने अपने पत्र 'कर्मवीर' के माध्यम से नई पीढ़ी के साहित्यकारों के स्तर को ऊँचा उठाने का भरसक प्रयास किया था। इस संदर्भ में उनका कहना था कि जो प्रतिभा फूट चुकी है अर्थात् जो साहित्यकार अब पुराने हो चुके हैं, उनकी प्रशंसा और आलोचना से उनकी प्रतिभा पर कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा। इन साहित्यकारों की प्रतिभा तो विकसित हो चुकी है किन्तु नए लेखकों और कवियों को प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है। नए लेखक तो किसान द्वारा बोई हुई फसल के समान विशेष महत्त्वपूर्ण होते हैं अर्थात् जिस प्रकार किसान की आशा उसकी बोई हुई फसल पर टिकी होती है, उसी प्रकार हिन्दी

जगत् की आशा का आधार भी उसके नई पीढ़ी के साहित्यकार ही हैं। चतुर्वेदी जी का मत था कि जैसे नन्हें बालक को अँगुली पकड़कर चलाया जाता है ठीक वैसी ही महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की पत्रिका 'सरस्वती' के आंगन का नन्हा बच्चा अर्थात् नई पीढ़ी का साहित्यकार भी जब प्रोत्साहन और आश्रय की आशा करे तो पुरानी पीड़ी के साहित्यकारों को उनकी सहायता के लिए हाथ आगे बढ़ाने चाहिए, तभी नई पीढ़ी का साहित्यकार आगे बढ़ पाएगा। चतुर्वेदी जी एक अन्य उदाहरण के द्वारा समझाते हैं कि यदि आकाश में दिखाई देने वाले सितारों के अस्त होने से पहले ही कोई नए सितारे उदय होना चाहते हैं। तो आकाश भी उनके लिए जगह बना देता है, ऐसे ही नई पीढ़ी के साहित्यकारों के उदय होने पर पुरानी पीढ़ी के साहित्यकारों को भी उन्हें प्रोत्साहन देकर उन्हें साहित्य जगत् में स्थान देना चाहिए ताकि नए साहित्यकारों को पुराने साहित्यकारों के मरने तक उनका स्थान खाली होने की प्रतीक्षा न करनी पड़े।

विशेष –

1. चतुर्वेदी जी नई पीढ़ी के साहित्यकारों को प्रोत्साहन देने के पक्ष में थे।
2. नई पीढ़ी के साहित्यकारों को 'बोई हुई फसल', 'नन्हा बच्चा', 'नए नक्षत्र' आदि कह कर यथार्थ रेखांकित किया गया है।
3. भाषा – शैली सरल तथा सहज है।
4. संदर्भ के रेखांकन में उदाहरणों का सुन्दर प्रयोग हैं

मैं इस दावे को मान्य करता हूं कि बिजली के खम्भे पर भी कविता लिखी है। प्रतिभाहीनता को उत्तेजक भाषा में लिखकर कविता की संज्ञा नहीं दी जा सकती। कविता में कविता का माधुर्य, कविता की मस्ती, कविता की निर्भयता आनी ही चाहिए, छायावाद श्रृंगार से अलग है। लेकिन अन्तर में माधुर्य के साथ उतरकर अपने अभिमत के प्रति व्यक्त की गई अपनी बेबसी के उन्माद को यदि हम आकर्षण से ओत–प्रोत करते हैं, तो यह कविता का एक रूप बन जाता है।

शब्दार्थ – उत्तेजक = मन में आंदोलन पैदा करने वाली। अभिमत = विचार। बेबसी = विवशता।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश सुप्रसिद्ध साक्षात्कार लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' द्वारा लिए गए साहित्यकार माखनलाल चतुर्वेदी साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' का अंश है। इसमें माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन से जुड़ी समस्त छोटी–छोटी बातों के साथ–साथ उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व उभरकर सामने आया है। इन पंक्तियों में चतुर्वेदी जी के हिन्दी कविता से सम्बन्धित विचार प्रकट हुए हैं।

व्याख्या – माखनलाल चतुर्वेदी जी हिन्दी कविता में निरन्तर उठने वाले वादों के पक्ष में नहीं थे। वे कविता को किसी वाद के चक्र में बंधा हुआ नहीं देखना चाहते थे। वे दावे के साथ इस बात को कहते हें कि कविता किसी भी विषय पर लिखी जा सकती है । कविता का विषय बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा भी हो सकता है। कविता बिजली के खम्भे पर भी लिखी जा सकती है। उसके लिए प्रतिभा की आवश्यकता होती है। यदि कोई प्रतिभाहीन व्यक्ति केवल उत्तेजक भाषा का प्रयोग करके कविता लिखने का प्रयास करे तो उसे कविता का नाम नहीं दिया दिया जा सकता। किसी भी कविता में मधुरता, मस्ती और निर्भयता आदि अवश्य आनी चाहिए। इन्हीं तत्त्वों से कविता का निर्माण होता है। हिन्दी के प्रसिद्ध वाद छायावाद ओर श्रृंगार में अन्तर है। सभी श्रृंगार की कविताओं को छायावाद के अन्तर्गत नहीं रखा जा सकता किन्तु यदि माधुर्य को हृदय में उतारकर अपने अभिमत के प्रति व्यक्त की गई अपनी विवशता और मस्ती को आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया जाए तो वह कविता का रूप धारण कर लेता है। माधुर्य कविता का आवश्यक गुण है।

विशेष –

1. चतुर्वेदी जी कविता को वादों के घेरे से मुक्त देखना चाहते थे।
2. कविता में माधुर्य, मस्ती और निर्भयता का विशेष महत्त्व दिया गया हे।
3. भाषा–शैली सहज एवं प्रभावशाली है।

खण्ड ग : पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'

साहित्यिक परिचय

डॉ॰ पद्मसिंह शर्मा कमलेश का जन्म 22 जनवरी, सन् 1915 में उत्तर प्रदेश के मथुरा ज़िले में 'बरीका नगला' नामक गांव में हुआ। इनके पिता का नाम श्री किशनलाल शर्मा तथा माता का नाम धर्मवती था। बचपन में ही इनके पिता की मृत्यु के पश्चात् इनका पालन–पोषण अत्यन्त कठिनता से हुआ। अनेक आर्थिक कठिनाइयों से जूझते हुए भी इन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा। इन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से एम॰ ए॰ प्रथम श्रेणी से करने के बाद इसी विश्वविद्यालय से ही पी–एच॰ डी॰ की उपाधि ग्रहण की। अपनी लगन और कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप ये कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में प्रोफैसर के पद पर प्रतिष्ठित हुए । यद्यपि ये अधिकतर समय पंजाब, दक्षिण भारत, गुजरात और आगरा में रहे किन्तु इनके जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काल हरियाणा में ही बीता। इनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए भाषा–विभाग, हरियाणा ने इन्हें अनेक बार सम्मानित किया। 5 फरवरी, 1974 को हृदयगति रुकने से इनका आकस्मिक निधन हो गया।

रचनाएँ –

डॉ॰ पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न थे। ये एक सफल कवि, लेखक, निबन्धकार होने के साथ–साथ साक्षात्कार विधा के जन्मदाता भी हैं। इनकी प्रसिद्ध रचनाएं निम्नलिखित हैं–

काव्य संग्रह – 'तू युवक है', 'दूब के आंसू', 'धरती पर उतरो', 'एक युग बीत गया'।

निबन्ध संग्रह – 'साहित्यिक निबन्ध मणि', साहित्य : 'संदर्भ और दिशाएं'।

खण्डकाव्य – 'दिग्विजय'।

इन रचनाओं के अतिरिक्त कमलेश जी ने हिन्दी के साहित्यकारों से साक्षात्कार करके उन्हे लिपिबद्ध किया है तथा 'मैं इनसे मिला' नाम से दो भागों में प्रकाशित करवाया है।

साहित्यिक विशेषताएँ –

डॉ॰ पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' को विशेष प्रसिद्धि एक संवेदनशील कवि के रूप में मिली है। उनका 'एक युग बीत गया' काव्य संग्रह उत्कृष्ट कोटि का है। इनके साहित्य में मानव प्रेम और क्रांति के दो स्वरों को स्पष्ट देखा जा सकता है। इन्होंने क्रांति का प्रचार–प्रसार जन सामान्य से किया। देश को एकता के सूत्र में बाँधने का स्वर इनकी रचनाओं से मिलता है। इन्होंने अपने 'दिग्विजय' खंड काव्य में राष्ट्र की एकता को राष्ट्र की जीवनी शक्ति माना है।

डॉ॰ कमलेश एक सफल प्राध्यापक के साथ–साथ एक अच्छे समीक्षक एवं शोधकर्त्ता थे। इनके द्वारा लिखित 'हिन्दी गद्य विधाएं और विकास' इनके समय का श्रेष्ठ शोध प्रबन्ध है। ये सरस साहित्य के सर्जक होने के साथ–साथ एक सफल अनुवादक भी थे। इन्होंने अंग्रेजी और गुजराती के अनेक ग्रंथों का अनुवाद किया। इन्हें हिन्दी गद्य की साक्षात्कार विधा का जन्मदाता माना जाता है। हिन्दी के शीर्ष साहित्यकारों से साक्षात्कार करके उनके बाह्य जीवन, विचार और साहित्य सम्बन्धी अनेक प्रश्नों व उत्तरों को लिपिबद्ध करके इन्होंने हिन्दी साहित्य को समृद्ध किया है। 'मै इनसे मिला' नामक इनके साक्षात्कार संग्रह की साहित्य जगत् में पर्याप्त चर्चा हुई है। समीक्षा के क्षेत्र में भी इनकी देन अद्वितीय है। कमलेश जी की भाषा सरल, सहज और स्पष्ट है। इनकी भाषा में प्रवाहमयता और लयात्मकता विद्यमान है। भाषा में सरसता और उसका भावानुकूल होना इनकी भाषा की अपनी विशेषता है। कमलेश जी को भाषा का शिल्पी कहा गया है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 श्री माखनलाल चतुर्वेदी से लिए गए साक्षात्कार के आधार पर उनके समकालीन साहित्यिक परिवेश का चित्रण कीजिए ?

उत्तर श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी से लिए गए साक्षात्कार से चतुर्वेदी जी के समकालीन साहित्यिक परिवेश की स्पष्ट झलक

मिली है। उस समय देश गुलाम था और देश की स्वतन्त्रता के लिए प्रयास किए जा रहे थे। उस समय साहित्य और राजनीति दोनों एक साथ चल रहे थे। बड़े–बड़े साहित्यकार साहित्य और राजनीति के संचालन के लिए किसी न किसी पत्र का सहारा ले रहे थे। चतुर्वेदी जी ने भी इसी उद्देश्य से 'कर्मवीर' पत्र को आरम्भ किया। तत्कालीन कुछ पत्रकार पत्रकारिता से न्याय भी नहीं कर पा रहे थे। वे किसी की निंदा ओर स्तुति को ही आधार बनाकर पत्रकारिता को सफल बनाने का प्रयास कर रहे थे। इसी कारण हिन्दी पत्रों और उसमें छपने वाले साहित्य का स्तर गिरता जा रहा था। पत्र और पत्रकारिता केवल पूंजीपति वर्ग के हाथों में कठपुतली बन कर रह गयी थी।

श्री माखनलाल चतुर्वेदी के समकालीन जो बड़े साहित्यकार थे वे नई पीढ़ी को प्रोत्साहन नहीं दे रहे थे। चतुर्वेदी जी नई पीढ़ी को प्रोत्साहन और प्रेरणा देना अपना कर्त्तव्य समझते थे। उन्होंने पुरानी पीढ़ी के साहित्यकारों को नई पीढ़ी के लिए स्थान रिक्त करने के लिए कहा। उनका मत था कि जिस प्रकार किसान को बोई हुई फसल पर अधिक आशा टिकी होती है, उसी प्रकार नई पीढ़ी के कवियों और लेखकों पर हिन्दी साहित्य जगत् की आशाएं टिकी है। उन्होंने अपने समकालीन साहित्यकारों से नई पीढ़ी के साहित्यकारों को आगे पढ़कर सहायता करने की बात कही। चतुर्वेदी जी के समकालीन साहित्यिक परिवेश में कविता को वादों में बांधना एक मुख्य विषय था। उनके समकालीन साहित्यकार कविता को छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के घेरों में सीमित करना चाहते थे। चतुर्वेदी जी ने हिन्दी साहित्य को खण्ड–खण्ड में बांटने वाले वादों का विरोध किया। उनके समकालीन साहित्यकारों में 'वाद' एक ज्वलंत मुद्दा था। इस संदर्भ में चतुर्वेदी जी का मानना था कि कविता में वाद नाम की कोई चीज़ नहीं होती। कविता के लिए प्रतिभा की आवश्यकता होती है। प्रतिभाहीनता को उत्तेजक भाषा में लिखकर कविता की संज्ञा नहीं दी जा सकती। चतुर्वेदी जी के समकालीन साहित्यिक परिवेश में प्राचीन एवं नवीन अभिव्यंजना शैलियों को अपनाने तथा हिन्दी कविता को विभिन्न वादों में बांटने जैसे विषयों पर साहित्यकारों में गहरा विवाद चल रहा था।

प्रश्न 2 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी ' साक्षात्कार का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर 'साक्षात्कार' विधा हिन्दी की एक महत्त्वपूर्ण विधा है। साक्षात्कार में साक्षात्कार करने वाला व्यक्ति उद्देश्य निर्धारित करके ही साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के पास जाता है। उसका उद्देश्य साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के जीवन से जुड़ी छोटी से छोटी तथा गहरी से गहरी बात को उजागर करना होता है। वह उस व्यक्ति से जुड़ी समस्त जानकारियाँ प्राप्त करना ही उसका उद्देश्य होता है प्रस्तुत साक्षात्कार में लेखक का उद्देश्य श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, रचना प्रक्रिया, साहित्यिक चिन्तन तथा उनके विराट् व्यक्तित्व को उजागर करना रहा है। लेखक के उद्देश्य को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत देखा जा सकता है –

1. **माखनलाल चतुर्वेदी जी का व्यक्तिगत जीवन** – लेखक ने इस साक्षात्कार के माध्यम से चतुर्वेदी जी के व्यक्तिगत जीवन से जुड़े हर पहलू को स्पष्ट कर दिया है। चतुर्वेदी जी के बचपन, आर्थिक अभाव तथा उनका दाम्पत्य जीवन भी सामने आया है। टी॰ बी॰ की बीमारी से उनकी पत्नी की मृत्यु हो जाना तथा उसके बाद उनके आए परिवर्तन जैसी प्रत्येक व्यक्तिगत बात भी खुलकर सामने आई है। साक्षात्कार में अनेक स्थलों पर चतुर्वेदी जी के व्यक्तिगत जीवन की साफ झलक मिली है। उदाहरणस्वरूप – ''मेरी शादी चौदह साल की उम्र में हुई थी। पत्नी तब दस वर्ष की थी। लेकिन संघर्षों ने पत्नी को 'टी॰ बी॰' का शिकार बना दिया। मैं उसे बलवर्धक भोजन न दे सका।'' साक्षात्कार में उनकी दिनचर्या का भी पूरा वर्णन है।

2. **साहित्यिक जीवन** – इस साक्षात्कार में चतुर्वेदी जी के साहित्यिक जीवन व चिन्तन पर भी पूर्ण प्रकाश डाला गया है। उनके गद्यकाव्य से सम्बन्धित विचार, खड़ी बोली सीखने की उत्सुकता तथा पत्रकारिता से सम्बन्धित उनके विचार स्पष्टता से व्यक्त हुए हैं। साक्षात्कार में उनके समकालीन साहित्यिक परिवेश की भी साफ झलक मिलती है। उन्होंने हिन्दी के प्रचार–प्रसार में किस प्रकार योगदान दिया–यह भी स्पष्ट हुआ है। हिन्दी साहित्य में प्रचलित विभिन्न वादों पर भी उनके विचार व्यक्त हुए हैं। उन्होंने स्पष्ट किया है कि वे साहित्य अथवा कविता को वादों में बांटने के पक्ष में नहीं हैं। उनके साहित्यिक जीवन के उस पहलू की ओर भी संकेत है जहां वे नई पीढ़ी के साहित्यकारों को प्रेरणा देना अपना नैतिक कर्त्तव्य समझते हैं और अपने समकालीन साहित्यकारों को

भी नई पीढ़ी के लेखकों और कवियों को स्थान देने के लिए कहते हैं। लेखक ने चतुर्वेदी जी के साहित्यिक जीवन से जुड़े प्रत्येक पहलू को स्पष्ट किया है।

3. **दर्शन** – श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी का जीवन दर्शन भी इस साक्षात्कार के माध्यम से स्पष्ट हुआ है। उनकी दृष्टि में अलौकिक वस्तुओं को लौकिक जीवन में लाने का प्रयत्न ही स्नेह की साधना है। यह स्नेह अखण्ड है। इसके टुकडे करके देखना समय अथवा प्रभु के टुकड़े करके देखने के समान है। लेखक ने चतुर्वेदी जी के दर्शन को पूर्ण रूप से स्पष्ट किया है। लेखक द्वारा यह कहने पर कि–'आपका दर्शन संतों और सूफियों का–सा है।' चतुर्वेदी जी कहते हैं– ''वस्तुतः मैं धार्मिक जड़ता के विरुद्ध विद्रोह ही को संतत्व मानता हूं। इसीलिए हिन्दू, मुसलमान, ईसाई किसी भी धर्म के संत हो, मेरे लिए आराध्यदेव जैसे हैं।'' इस प्रकार चतुर्वेदी जी का जीवन दर्शन स्पष्ट हुआ है।

4. **लेखन पद्धति** – प्रस्तुत साक्षात्कार में लेखक ने चतुर्वेदी जी की जीवन–पद्धति पर भी प्रकाश डाला हैं चतुर्वेदी जी के लेखन में कल्पना दशांश है तथा बाकी यथार्थ जीवन का वर्णन है। उन्हें आस–पास की घटनाएं बहुत प्रभावित करती हैं तथा लिखने के लिए उन्हें सफेद कागज तथा रेड इंक निब बेहद प्रिय है। वे कोलाहल में नहीं लिख सकते और लेखन में बाधा आने पर उन्हें कठिनाई होती है। यह सब लेखक ने स्पष्ट किया है।

5. **रुचियाँ** – लेखक ने साक्षात्कार के माध्यम से चतुर्वेदी जी की रूचियों का भी उल्लेख किया है। उनकी बचपन की रुचियों में अखबारों की कतरने काटना और दीवारों पर चिपकाना, कविता करना, चमकीले पत्थर समेटना आदि छोटी–छोटी बातें भी लेखक ने उजागर की हैं। बड़े होकर उन्हें वृक्षों, गायों और नन्हें बच्चों के साथ या अकेला रहना पसन्द था, इसका भी उल्लेख हुआ है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि साक्षात्कार विधा में जिस उद्देश्य को सामने रखा जाता है, लेखक उसमें पूर्णतः सफल हुआ है। लेखक ने श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, साहित्य तथा व्यक्तिगत जीवन के जुड़ी प्रत्येक छोटी और बड़ी बात को स्पष्ट करने में पूर्ण सफलता पाई है।

प्रश्न 3 साक्षात्कार के मानक तत्त्वों के आधार पर 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' साक्षात्कार की समीक्षा कीजिए ?

उत्तर साक्षात्कार विधा हिन्दी गद्य साहित्य की नव्यतर विधा है। किसी भी विधा को दूसरी विधा से अलग करने के लिए उसके कुछ मानक तत्त्व निर्धारित किए गए हैं। समीक्षकों के अनुसार साक्षात्कार विधा में निम्नलिखित पांच तत्त्व हैं––

1. संवाद 2. पात्र 3. वातावरण 4. भाषा–शैली 5. उद्देश्य।

इन तत्त्वों के आधार पर प्रस्तुत साक्षात्कार 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' की समीक्षा इस प्रकार है –

1. **संवाद** – संवाद किसी भी साक्षात्कार का महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। संवादों के बिना साक्षात्कार की कल्पना नहीं की जा सकती। एक सफल साक्षात्कार में संवादों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। साक्षात्कार में साक्षात्कार करने वाला व्यक्ति प्रश्न पूछता है और साक्षात्कार देने वाला उत्तर देता है। इसलिए संवाद स्वतः ही साक्षात्कार में आ जाते हैं। ये संवाद कहीं–कहीं अत्यंत छोटे तो बड़े–बड़े होते हैं। परस्पर संवादों से साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के दृष्टिकोण, विचारों तथा मनोभावों का पता चलता है। प्रस्तुत साक्षात्कार भी संवाद योजना की दृष्टि से सफल साक्षात्कार है। लेखक पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' ने माखनलाल चतुर्वेदी जी से संवाद करते हुए अपने साक्षात्कार और चर्चा को गति दी है। इन संवादों से साक्षात्कार में नाटकीयता एवं रोचकता आ गई है। कमलेश जी ने प्रश्न किए हैं तथा चतुर्वेदी जी ने संवाद रूप से पूछे गए उन प्रश्नों का उत्तर दिया है।

2. **पात्र** – साक्षात्कार में पात्रों का विशेष महत्त्व है। इसमें प्रायः दो ही पात्र होते हैं। एक साक्षात्कार करने वाला और दूसरा साक्षात्कार देने वाला। साक्षात्कार लेने वाले पात्र के द्वारा पूछे गए प्रश्नों से ही साक्षात्कार देने वाले पात्र की मनोस्थितियों एवं उसके जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं की जानकारी मिलती है। प्रस्तुत साक्षात्कार में साक्षात्कर्त्ता और साक्षात्कारदाता दो ही पात्र हैं। साक्षात्कारकर्त्ता के द्वारा पूछे गए प्रश्नों के परिणामस्वरूप

ही साक्षात्कारदाता श्री माखनलाल चतुर्वेदी के जीवन और साहित्य से जुड़ी अनेक घटनाओं की जानकारी मिली है।

3. **वातावरण** – साक्षात्कार में वातावरण भी महत्त्वपूर्ण तत्त्व होता है। साक्षात्कार को रोचक बनाने के लिए वातावरण अथवा परिवेश का अंकन भी अनिवार्य है। साक्षात्कार लेने वाला व्यक्ति साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति की मानसिक स्थिति तथा वातावरण और परिवेश का अत्यन्त सूक्ष्मता व सजीवता से वर्णन करता हुआ चर्चा को आगे बढ़ाता है। प्रस्तुत साक्षात्कार में लेखक ने वातावरण का सजीव अंकन किया है। उदाहरणस्वरूप – ''सायंकाल के समय चाय–पान के बाद तांगा आया और हम लोग एक तालाब के किनारे पहुंचे। तालाब के किनारे ही वह मन्दिर है, जहां किसी समय पत्नी के साथ वह सैर करने के लिए आया करते थे।''

4. **भाषा–शैली** – किसी भी साक्षात्कार को कलात्मक बनाने में भाषा–शैली का महत्त्वपूर्ण योगदान होता हैं साक्षात्कार में आत्मीयता का भाव व्यंजित करने वाली सरल, सहज भाषा–शैली का होना आवश्यक होता है। इस साक्षात्कार में लेखक की भाषा–शैली अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि की है। लेखक ने अत्यन्त छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग करते हुए सरल, सहज भाषा–शैली का प्रयोग किया है। भाषा में प्रवाहमयता, सरसता एवं आत्मीयता का भाव व्यंजित करने का गुण विद्यमान है। संवादों के प्रयोग से लेखक की शैली नाटकीय तथा संवादात्मक है। शैली में वर्णनात्मकता भी है।

5. **उद्देश्य** – साक्षात्कार में साक्षात्कार करने वाले का उद्देश्य साक्षात्कार देने वाले के विषय में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना होता है। बिना उद्देश्य के साक्षात्कार नहीं लिया जा सकता क्योंकि साक्षात्कार लेने के लिए भेंटकर्त्ता एक प्रश्नावली तैयार करता है और अपना उद्देश्य निर्धारित करता है। प्रस्तुत साक्षात्कार में लेखक का उद्देश्य हिन्दी के शीर्षस्थ रचनाकार श्री माखनलाल चतुर्वेदी जी के जीवन, साहित्यिक चिन्तन, दर्शन तथा उनके विराट् व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू को उजागर करना रहा है और लेखक अपने इस उद्देश्य में पूर्णतः सफल हुआ है। उद्देश्य की दृष्टि से यह साक्षात्कार एक सफल साक्षात्कार है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि साक्षात्कार विधा के मानक तत्त्वों के आधार पर यह साक्षात्कार एक सम्पूर्ण और आदर्श साक्षात्कार है। इसमें साक्षात्कार विधा के समस्त तत्त्व विद्यमान हैं।

प्रश्न 4 पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' की भाषा–शैली पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' को भाषा का शिल्पी कहा जाता है। उनकी भाषा–शैली में सरलता, स्पष्टता और व्यावहारिकता है। उनकी भाषा–शैली की निम्नलिखित विशेषताएं हैं––

1. **चित्रात्मकता** – कमलेश जी की भाषा में चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है। वे शब्दों के माध्यम से चित्र प्रस्तुत करने में निपुण हैं। प्रस्तुत साक्षात्कार की भाषा में भी चित्रात्मकता स्पष्ट दिखाई देती है। उदाहरणस्वरूप–''मैने एक दिन दुछत्ती में पहुंचने के लिए रस्सी बाँधी और ऊपर चढ़ गया। जल्दी में एक पुस्तक हाथ लगी–लल्लूलाला जी का 'प्रेमसागर'। उसे लेकर मैं नीचे उतर आया और बस्ते में ज्यों–त्यों जमा दिए।''

2. **प्रवाहमयता** – डॉ॰ पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' की भाषा में प्रवाहमयता एक ऐसा गुण है जो आरम्भ से अन्त तक विद्यमान है। प्रवाहमयता होने से पूरा विषय परस्पर गुंथा हुआ प्रतीत होता है। 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' साक्षात्कार में भी यह प्रवाहमयता दिखाई देती है। उदाहरणस्वरूप––''उनके शब्दों में जादू का असर है। शब्द निकलते है और सुनने वाले के हृदय को व्यंजना के पंखों पर उठाकर किसी सुदूरलोक में ले जाते हैं। उनका व्याख्यान, जिन्होंने सुना है, वे जानते हैं कि वह साहित्य बोलते हैं। फिर, कविता–पाठ का तो कहना ही क्या ? जब मैं चला तो उनकी पंक्तियाँ मेरे मानस–पट पर अंकित थीं।''

3. **मिश्रित शब्दावली** – कमलेश जी का शब्द–भंडार विपुल है। इनकी भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों की बहुलता है। अंग्रेज़ी तथा उर्दू–फारसी के शब्दों का भी उन्होंने प्रयोग किया है। भिन्न–भिन्न

शब्दों को एक सूत्र में पिरोकर उन्होंने जो माला प्रस्तुत की है वह अत्यन्त प्रभावशाली एवं विषय को रोचक बनाने में सक्षम है।

4. **सरसता** – कमलेश जी की भाषा में सरसता और सहजता है। उन्होंने विषय को अत्यन्त सरस ढंग से प्रस्तुत किया है। माखनलाल चतुर्वेदी जी के विषय में वे लिखते हैं––''यह जैसे इनके छलकते हृदय का सार है। तभी तो आज भी जो कविताएं वे लिखते हैं, उन्हें पढ़कर किशोर और तरुण कवि भी दांतों तले अंगुली दबाते हैं।''

5. **शैली** – कमलेश जी की शैली अत्यन्त आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक है। उनकी शैली में सरसता और रोचकता निरन्तर विद्यमान रहती है। 'श्री माखनलाल चतुर्वेदी' साक्षात्कार में इनकी शैली वर्णनात्मक तथा संवादात्मक हैं। शैली में नाटकीयता का पुट भी है।

अध्याय–7
नीड़ का निर्माण फिर
हरिवंशराय 'बच्चन'

खण्ड क : पाठ सार

'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा का आरम्भ लेखक ने रोमें रोलाँ की इन पंक्तियों से किया है––''प्रभु, क्या तू अपने सेवक से असंतुष्ट है ? मैं कितना कम कर पाया हूं, ज्यादा कर सकना मेरे बस के बाहर था..... मैं जीवन–संघर्ष में धँसा, मैंने मुसीबतें झेली हैं, मैंने भूलें की हैं, मैंने सृजन किया है।''

लेखक ने सोलह नवम्बर, सन् 1936 ई॰ की रात को एक स्वप्न देखा था जो आज तीस वर्ष बाद भी उसे वैसा का वैसा स्मरण है। स्वप्न में वह अपना विवाह होते हुए देखता है। उसने विवाह को जोड़ा, मुकुट पहना है। उसकी बारात में उसके जीवित–मृत पड़ोसी, सम्बन्धी तथा मित्र सम्मिलित हैं। बहुत–सी स्त्रियां मंगल गीत गा रही हैं। भांवर पड़ रही है कि अचानक अग्नि–कुण्ड की एक लपट से नव–वधू का आंचल जल जाता है और वह सिर से पांव तक आग की लपटों में घिर जाती है। वह उसे बचाने के स्थान पर अग्नि–कुण्ड की परिक्रमा करता जा रहा है। अन्य लोगों पर भी इसका कोई प्रभाव नहीं होता है। तभी उस चलती–फिरती ज्वाला में से एक हाथ निकलकर लेखक का हाथ पकड़ लेता है और उसकी आँख खुल जाती है।

वह स्वप्नलोक से वास्तविक संसार में आ जाता है जहां वह अपनी बीमार पत्नी की देखभाल करने के लिए एक चारपाई पर सोया यह स्वप्न देख रहा था। बचपन में जब वह स्वप्न देखता था तो मां के कहने के अनुसार यह दोहा पढ़कर स्वपन की घबराहट से मुक्त हो जाता था––

''सपने होई भिखारी नृप रंकनाकपति होय ;
जागे हानि न लाभ कछु, तिमि प्रपंच जिय जोय।''

सपनों के सम्बंध में लेखक की यह मान्यता रही है कि जैसा स्वप्न देखा जाता है यथार्थ में उसका विपरीत ही होता हैं जैसे मृत्यु की सूचना विवाह से और घर आने वाली डोली की सूचना घर से जाने वाली अर्थी से दी जाती है। उसे लग रहा था कि कहीं यह उसकी पत्नी श्यामा के सम्बन्ध में कोई अमंगलकारी संदेश तो नहीं है। उसकी बीमार पत्नी श्यामा का स्वास्थ्य कुछ सुधरने लगा था, इसलिए वह इस स्वप्न पर विश्वास नहीं कर रहा था।

सतरह नवम्बर की शाम से श्यामा की तबीयत बिगड़ने लगती है। उसे अचानक बेहोशी का दौरा पड़ा, उसके दांत बैठ गए, आँखें डूब गई और सांसें उखड़ने लगीं। डॉ॰ घोष ने श्यामा की नाड़ी देखकर मरीज़ को शान्त पड़े रहने देने के लिए कहा और फीस भी नहीं ली। परिवार के सभी सदस्य श्यामा की चारपाई को घेर कर बैठ गए। बाई के बाग़ से श्यामा के पिता बाबू राम किशोर अपने बड़े भाई बाबू रामचन्द्र को लेकर आकर वहीं बैठ गए और भगवान् से उसे बचाने की प्रार्थना करने लगे। श्यामा को बीच–बीच में होश आता तो वह अस्फुट स्वर में ''मेरे संदूक में गत्ते का एक बक्स है .....उसे मुक्त को पहुँचा देना.....मेरे कागज़–पत्तर मेरी सब चीज़ें मेरे साथ जला देना''कहकर आधी रात को अन्तिम सांस लेती है। श्यामा की आधी रात को मृत्यु लेखक को हैमलेट का आधी रात में अपने मृत पिता की प्रेतात्मा को देखना, मैकबेथ का राजा डंकन की हत्या आधी रात को करना, फ़ाउस्ट के सम्मुख मेफ़िसटोफ़ेलीज अथवा शैतान का आधी रात को प्रकट होना, सिद्धार्थ का आधी रात के समय गृह–त्याग, राम का आधी रात के समय लक्ष्मण के मूर्च्छित शरीर को हृदय से लगाकर विलाप करना, दशरथ का राम के वियोग में आधी रात को दृष्टि–शून्य लेना, आधी रात को ही दशरथ श्रवण कुमार को अनजाने शर–बिद्ध करने की घटना का स्मरण करते हुए आधी रात को ही अपने प्राण त्यागते हैं आदि घटनाएं स्मरण आ जाती हैं तो उसे लगता है कि आधी रात का समय तनाव

झेलने का ही समय होता है। वह आधी रात को दो तनावों के बीच की स्थिति का प्रतीक मानता है। श्यामा की मृत्यु ने लेखक को टुकड़े–टुकड़े कर बिखेर दिया था। इससे बड़ा आघात उसे अब तक नहीं लगा था।

श्यामा के शव के पास बैठकर सभी परिवार–जन रो रहे थे परन्तु लेखक पथराई–पथराई आँखों से उसके शव को देख रहा था। उसके मुंह से न आह निकली और न उसकी आँखों में आंसू थे। पिता ने लेखक को बहू का शव चारपाई से धरती पर रखने के लिए कहा परन्तु श्यामा को बिस्तर से उठाकर ज़मीन पर डालना लेखक को अच्छा नहीं लग रहा था। पिता ने उसकी भावना को समझ कर श्यामा को बिस्तर पर ही रहने दिया। पिता जी गीता पढ़ रहे थे और लेखक श्यामा के पास बिताये नौ वर्षों के वैवाहिक जीवन की स्मृतियों में डूबा हुआ था। लेखक का परिवार बिरादरी द्वारा बहिष्कृत था इसलिए पड़ोस के दो मित्रों, मामा जी तथा घर के तीन मर्दों के साथ श्यामा की चारपाई पर कफ़न डालकर उसे चारपाई समेत उठाकर श्मशान तक ले जाते हैं। वे उसके शव को टिकठी में बांधने नहीं देते। रास्ते में 'राम–नाम सत्य है' का घोष न करते हुए लेखक के कानों में उपनिषद् का श्लाक गूंजता रहा–

''वायुरनिलम् .....स्मर कृतं स्मर।।''

अर्थात् यह शरीर अन्त में भस्म होकर समाप्त हो जाने वाला है और प्राणवायु अमर वायु में मिल जाने वाली है इसलिए ॐ यज्ञ देवता को स्मरण करो और अपने किए हुए शुभ कर्मों को स्मरण करो।

लेखक सोचता है कि जब वह श्यामा को ब्याह कर लाया था तो उसके साथ अनेक लोग थे और आज जब उसकी अर्थी ले जा रहा है तो साथ केवल चार–छह लोग ही हैं। बिरादरी बाहर होने का दर्द उसे कटोच जाता है और जाति–व्यवस्था से गठित इस समाज पर उसे आक्रोश आता है। उसे शंकराचार्य की याद आती है। उनकी मां की अर्थी उठाने कोई नहीं आता तो वे अपनी मां का दाह–संस्कार अपने घर के सामने ही कर देते है। आज भी नम्बूदरी ब्राह्मण अपने शव अपने घर के सामने जलाते हैं। गंगा किनारे श्मशान घाट पर पहुंचने पर पिता उसे श्यामा का दाह–कर्म करने के लिए कहते हैं। वह दाह करने के लिए तो तैयार हो जाता है परन्तु दाह से सम्बन्धित अन्य कर्मकाण्ड करने से मना कर देता है। वह सब आडम्बर उसे पाखण्ड लगता है। तब उसके पिता ही उसकी पत्नी को मुखाग्नि देते हैं। कुछ देर बाद वहां श्यामा की राख ही शेष रह जाती है, जिसे वे गंगा में बहा देते हैं।

श्यामा की मृत्यु लेखक को एकान्त प्रिय बना देती हैं वह जीवन और मृत्यु के द्वन्द्व में फंसकर निराशावादी बन जाता है। उसे लगता है कि वह भी एक दिन सो जाएगा और मर जाएगा। लेखक का मन बीमार और तन अस्वस्थ होता जा रहा था। सार्त्र के संस्मरण वर्ड्स में' मरना सरल नहीं है 'पढ़कर लेखक परिवार की दयनीय आर्थिक स्थिति का स्मरण कर श्यामा की मृत्यु के चार महीने बाद स्कूल पढ़ाने जाना प्रारम्भ कर देता है। उन दिनों वह क्या, कैसे पढ़ा रहा है उसे याद नहीं पर एक दिन स्कूल से लौटते हुए वह संज्ञा शून्य होकर साइकिल से गिर पड़ा था। उसके पाँव में चोट आ गयी थी। फिर वह पैदल ही स्कूल आता–जाता रहा। उसे अपना जीवन निष्क्रिय लगने लगा था। वह यमुना किनारे बैठकर अपनी वेदना के क्षण व्यतीत करता था।

लेखक को सामान्य बनाने में उसकी कविता, काव्यपाठ आदि ने बहुत सहयोग दिया था। उसे लोग कवि–सम्मेलन, कवि–गोष्ठियों में बुलाते थे। पहले वह कहीं नहीं गया फिर धीरे–धीरे उसने कवि–गोष्ठियों आदि में जाना प्रारम्भ कर दिया और वहां 'खैयाम की मधुशाला', 'मधुशाला' , 'मधुबाला' आदि कवितायें वह सुनाया करता था। इन्हें उसने अपनी और श्यामा की बीमारी के दिनों में लिखा था। इस प्रकार उसे शान्ति का अनुभव होता था। उसे लगता है कि ''कला अनुभूतियों का किसी इन्द्रिय–ग्राह्य मध्यम में रूपान्तरण है'' इसलिए इसके माध्यम से ही प्राप्त आनन्द मनुष्य को शान्ति प्रदान करता है। 'शोक की अनुभूति से शोक–गीत रचना और शोक–गीत से आनन्द, संतोष और शान्ति की उपलब्धि कर लेना विष को मधुरस बना देता है।' यह सब कला अथवा साहित्य साधना द्वारा ही सम्भव है। साहित्य सृजन ही लेखक को श्यामा की मृत्यु का आघात सहन करने की शक्ति प्रदान करता है और वह असामान्य से सामान्य हो पाता है।

खण्ड ख : व्याख्या

सोलह की रात को मैंने एक सपना देखा जो आज तीस वर्षों के बाद भी मेरी आँखों के आगे वैसा ही स्पष्ट है जैसे उसे मैंने कल रात ही देखा हो। मैंने देखा कि जैसे मेरा विवाह हो रहा है, मुझे बसन्ती रंग का जामा–जोड़ा

पहनाया गया है, सिर पर मौर बांधा गया है, चेहरे पर सेहरा लटक रहा है––बेले की कलियों की लड़ियों का। मेरी बारात में चलने को मेरे बहुत–से नाते–रिश्तेदार आये हैं, पड़ोसी, मित्र'जीवित–मृत , और उनमें कोई भेद नहीं है। मैं अपने सेहरे की आड से भी उनमें से बहुतों को पहचान रहा हूं––

शब्दार्थ – जामा – जोड़ा = शादी का विशेष कपड़ा। नाते–रिश्तेदार = संबंधी।

प्रसंग – प्रस्तुत गंद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु से उत्पन्न अपनी दशा का वर्णन करते हुए आडम्बरपूर्ण कर्मकाण्डों का विरोध किया है तथा साहित्य सृजन को उन्हें श्यामा की मृत्यु के आघात को सहन करने की शक्ति प्रदान की है।

व्याख्या – लेखक सोलह नवम्बर, सन् 1936 ई॰ को देखे हुए एक स्वप्न को तीस वर्ष पश्चात् स्मरण करते हुए लिखता है कि सोलह की रात को उसने जो स्वप्न देखा था उसे वह आज तीस वर्ष बाद भी नहीं भूल पाया है। वह स्वप्न उसकी आँखों के सम्मुख उसी प्रकार से पूरी तरह से स्पष्ट है जैसे कि उसने यह स्वप्न कल रात ही देखा हो। उस स्वप्न में उसने देखा था कि उसका विवाह हो रहा है। उसे वासन्ती रंग का विवाह का जोड़ा पहनाया गया है। उसके सिर पर विवाह के समय पहने जाने वाला मुकुट बांधा गया है। उसके चेहरे पर बेले के फूल की कलियों से बनी लड़ियों का सेहरा लटक रहा है। उसकी बारात में सम्मिलित होने के लिए उसके अनेक रिश्तेदार आए हुए हैं। इनमें उसके पड़ोसी और मित्र भी हैं । इनमें उसके जीवित मित्र, सम्बन्धियों के अतिरिक्त वे मित्र, सम्बन्धी और पड़ोसी भी हैं जो अब मर चुके हैं। इन बारातियों में जीवित और मृत व्यक्तियों का कोई भेदभाव नहीं है। वह अपने सेहरे को ज़रा–सा हटाकर उन बारातियों में से अनेक को पहचान रहा है।

विशेष –

1. लेखक ने तीस वर्ष पूर्व देखे गए उस स्वप्न का वर्णन किया है जिसमें उसे अपना विवाह होता हुआ दिखाई देता है।
2. अपनी बारात में लेखक का मृत और जीवित दोनों प्रकार के सम्बन्धियों, मित्रों, पड़ोसियों आदि को देखना उसके अवचेतन में स्थित इन सबके प्रति भावनाओं का प्रतीक है।
3. लेखक की भाषा सहज, प्रवाहमयी और भावपूर्ण है।
4. लेखक की शैली आत्मकथात्मक, चित्रात्मक तथा वर्णन प्रधान है।

शोर–गुल, गीत–नार, भीड़–भाड़ और बाजे–गाजे के संसार से सहसा मैं शान्ति की एक छोटी–सी दुनिया में आ गया था जहां बस एक लाचार बीमार ओर एक तीमारदार की दो चारपाइयाँ पड़ी थीं और एक खूँटी से टँगी हरीकेन लालटेन की मन्द–मन्द जलती लौ प्रभात के बढ़ते प्रकाश में पल–पल निष्प्रभ हो रही थी। सपना कुछ देर मेरी खुली आँखों के सामने भी नाचकर अपना अर्थ मांगने लगा था। क्या मतलब हो सकता है इसका ?

शब्दार्थ – प्रभात = सवेरा। निष्प्रभ = प्रकाशहीन।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर ' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा के मृत्यु के बाद अपनी व्यथा व्यक्त करते हुए विभिन्न आडम्बरपूर्ण कर्मकाण्डों की व्यर्थता सिद्ध की है।

व्याख्या – लेखक उस समय का वर्णन करता है जब उसका स्वप्न भंग हो जाता है। उसकी आँख खुल जाती है तो वह देखता है कि वह विवाह के शोर–गुल, नाच–गीत, भीड़–भाड़ तथा गाजे–बाजे के उल्लासमय वातावरण से अचानक शान्ति के एक छोट–से परिवेश में लौट आया है। इस स्थान पर केवल दो चारपाईयाँ पड़ी हैं। जिसमें एक पर उसकी बीमार और मज़बूर पत्नी लेटी हुई है और दूसरी पर उसकी देखभाल करने वाला वह स्वयं लेटा हुआ था। उस कमरे की खूँटी पर मिट्टी के तेल की लालटेन टंगी हुई है जिसकी लपट सुबह की बढ़ती हुई रोशनी के कारण धीरे–धीरे मंद पड़ रही थी। उसे जागने के बाद भी बार–बार इसी स्वप्न की याद आ रही थी और वह इस स्वप्न का अर्थ खोजने लगा था कि इस प्रकार के स्वप्न का क्या अर्थ हो सकता है ? वह इसी स्वप्न को लेकर असमंजस की स्थिति में था।

विशेष –

1. लेखक अपने विवाह का स्वप्न देखकर दुविधाग्रस्त हो गया है क्योंकि उसके सामने तो उसकी बीमार और लाचार पत्नी सोई हुई है।
2. मन के अन्तर्द्वन्द्व का मनोवैज्ञानिक प्रस्तुतिकरण है।
3. भाषा सहज, सरल बोधगम्य है।
4. आत्मकथात्मक शैली में चित्रात्मकता प्रभावीरूप विद्यमान है।

प्रायः देखा जाता है कि जिन समस्याओं पर ज्ञान–विज्ञान असमंजस में पड़े रहते हैं उनका लोक–बुद्धि कोई कल्पित समाधान खोज लेती है। सपनों के विषय में उसका समाधान यह है कि सपने आने वाली घटनाओं की उलटवाँसी आगाहियाँ हैं––मृत्यु की सूचना विवाह से दी जाती है, घर आने वाली डोली की सूचना घर से जाने वाली अर्थी से। धीरे–धीरे मुझ पर लोक–बुद्धि हावी होने लगी थी, गो कहीं मेरा अन्तर्मन उसका विरोध भी कर रहा था।

शब्दार्थ – असमंजस = तर्क–वितर्क के मध्य। समाधान = हल। हावी होना = प्रबल प्रभाव।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु से व्यथित अपने जीवन को फिर से सहज बनाने का वर्णन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक अपने विवाह से सम्बन्धित देखे हुए स्वप्न के अन्तर्द्वन्द्व में फंसा हुआ अपने इस स्वप्न का अर्थ तलाशने का प्रयत्न कर रहा है। लेखक का विचार है कि जब हम किसी समस्या का हल अपने ज्ञान अथवा विशिष्ट ज्ञान के आधार पर नहीं ढूँढ पाते और दुविधाग्रस्त हो जाते हैं तो ऐसी स्थिति में हम उसका समाधान लोक–प्रचलित विश्वासों के आधार पर करते हैं। इसी लोक–परम्परा के आधार पर स्वप्नों के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि मनुष्य को स्वप्न आते हैं वे उसके जीवन में घटित होने वाली घटनाओं की विपरीत पूर्व सूचना होती है। जैसे मृत्यु की सूचना विवाह के स्वप्न से तथा घर आने वाली डोली की सूचना घर से जाने वाली अर्थी के स्वप्न से मिलती है। यह लोक विश्वास धीरे–धीरे लेखक के मन पर भी अपना प्रभाव डालने लगा था। उसे भी लगने लगा था कि उसके द्वारा देखा गया विवाह का स्वप्न किसी की मृत्यु का संदेश है। लेखक का अन्तर्मन इस लोक–विश्वास को स्वीकार नहीं कर रहा था।

विशेष –

1. लेखक ने लोक–परम्परा में प्रचलित इस धारणा की पुष्टि की है कि जैसा हम स्वप्न देखते हैं, उसके विपरीत हमारे जीवन में घटित होता है।
2. स्वप्नों को लेखक ने आने वाली घटनाओं की 'उलटवाँसी अगाही' नाम दिया है।
3. भाषा तत्सम प्रधान सहज तथा प्रवाहमयी है।
4. आत्मकथात्मक शैली का भावात्मक रूप है।

उस हंसी के साथ मेरी आस्था, श्रद्धा, विश्वास के सारे आधार न जाने कहाँ विलुप्त हो गये, और मुझे यह स्पष्ट हो गया कि अब अगर पहाड़ भी मुझ पर टूटना है तो मुझे निःसंग, निःसहाय, निराश्रय और एकाकी रहकर उसको झेलना है। अब कभी–कभी सोचता हूँ कि उस समय आस्था का अर्थ मैंने गलत समझा था, और सही अर्थों में आस्था ने मुझे उस समय भी नहीं छोड़ा। खैर ! तब तो मुझे वैसा ही लगा था और वही मेरी अनुभूति की सच्चाई थी।

शब्दार्थ – विलुप्त = गायब। निःसंग = बिना साथ। निराश्रय = आश्रयविहीन। एकाकी = अकेला।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में

लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा के निधन से अपने जीवन में उत्पन्न तनाव की स्थिति का निरूपण किया है।

व्याख्या – लेखक उस समय का वर्णन करता है जब श्यामा के पिता और ताऊ आकर उसकी मृत्यु–शय्या के पास बैठकर भगवान् से उसे बचाने की प्रार्थना करते हैं तो लेखक यह सुनकर जोर से हंस पड़ता है। उसे लग रहा था कि नियति उनके श्यामा को जीवित रखने के सभी प्रयत्नों पर हंस रही है और उसकी यह हँसी उसी की प्रतिध्वनि थी। इस हँसी के साथ ही लेखक के मन में उस परमात्मा के प्रति जो आस्था, श्रद्धा और विश्वास था वह भी समाप्त हो गया। उसे अब किसी पर भी विश्वास नहीं रहा था। उसे लग रहा था कि अब उस पर जितनी भी मुसीबतें आएंगी उन सब को उसे बिना किसी साथी के, बिना किसी सहारे के निराश्रित अकेले रहकर ही सहन करनी होगी। इन मुसीबतों में उसका साथ देने वाला अब कोई नहीं रहा। अब वह विचार करता है कि श्यामा को मृत्यु–शय्या पर पड़े देखकर वह आस्था का अर्थ गलत समझ गया था। उसकी आस्था डगमगा गयी थी । उसे लगता है कि वास्तव में आस्था ने उस समय भी उसका साथ नहीं छोड़ा था। उस समय तो लेखक को वैसा ही लगा था और वही उस समय जो लेखक ने अनुभव किया था वही उसके अनुभवों की सत्यता थी।

विशेष –

1. लेखक ने इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को स्पष्ट किया है कि जब मनुष्य की मनोकामना पूर्ण नहीं होती तो अटूट आस्था भी समाप्त हो जाती है।
2. पत्नी को मरणासन्न देखकर लेखक की आस्था टूट गयी है।
3. भाषा तत्सम प्रधान, सहज और प्रवाहमयी है।
4. आत्मकथात्मक शैली में भावात्मकता की प्रधानता है।
5. मुहावरों का सहज प्रयोग है।

कवि और साहित्यकार प्रायः वातावरण की अनुकूलता की दृष्टि से ऐसे क्षणों को चुनते हैं, पर प्रकृति, सम्भवतः अपने सहज संवरणीय स्वभाव से – प्रकृति में अपने को गुह्य रखने की प्रवृत्ति निश्चय है– वह वस्तुतः गुह्यश्वरी – कितना कुछ विचित्र वह मानवों की आँख बचाकर करती रहती है, और जब हम उसे देखते हैं अपनी आँखें फाड़ देते हैं। वह एक ऐसी जादूगरनी है जो हमें आश्चर्यचकित भी करती है, आघात–विमूर्च्छित भी।

शब्दार्थ – संवरणीय = संभालने योग्य। गृह्य = छिपाने। आघात = चोट। विमूर्च्छित = बेहोश।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा के निधन के कारण अपने जीवन में उत्पन्न तनाव की स्थिति का अंकन किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक आधी रात के समय अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु के बाद सोचता है कि जीवन में जो भी करुण, कातर, रहस्यपूर्ण अथवा रोमांचकारी होता है।वह प्रायः आधी रात को ही क्यों घटित होता है ? उसे लगता है कि कवि और साहित्यकार आधी रात का समय सृजन के लिए इसलिए चुनते होंगे क्योंकि इस समय कां शान्त वातावरण उनके साहित्य सृजन के अनुकूल होता होगा। वह सोचता है कि प्रकृति आधी रात का समय किस कारण चुनती है ? इसका उत्तर भी वह स्वयं ही देता है कि प्रकृति भी शायद अपने स्वाभाविक संकोचशील स्वभाव के कारण ऐसा करती है क्योंकि प्रकृति अपना सब कुछ अपने तक ही छिपाकर रखती है। इस कारण प्रकृति को छिपी हई देवी भी कहते हैं। प्रकृति को ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि वह अनेक विचित्रताएँ मनुष्य से छिपाकर करती रहती हैं। जब मनुष्य उसकी लीलाओं को देखता है तो वह आश्चर्यचकित रह जाता है। इसलिए प्रकृति को ऐसी जादूगरी भी कहा जाता है जो अपने नित–नवीन कार्यों से मनुष्य को आनन्द विभोर भी कर देती है और अपने विकराल तथा भयंकर रूप से उसे इतना आहत करती है कि वह भय से बेहोश हो जाता है।

विशेष –

1. साहित्यकार को शान्त तथा एकान्त वातावरण में सृजनशील होते हुए चित्रित किया गया है।

2. प्रकृति भी शान्त तथा एकान्त वातावरण में अपना रूप पल–पल बदलती रहती है।

3. प्रकृति का सौम्य रूप मनुष्य को आनन्द प्रदान करता है तथा उसका रोद्र रूप उसे भयभीत कर देता है।

4. भाषा तत्सम प्रधान तथा आलंकारिक है।

5. आत्मकथात्मक शैली में भाव प्रधानता है।

कभी मैंने सोचा है कि क्या जीवन घटनाओं का एक क्रम मात्र है या उसके पीछे कोई शृंखला–बद्ध योजना है। और मैं अपने हृदय को ठीक–ठाक टटोलूँ तो मुझे कहना चाहिए कि मैं एक अथवा दूसरी बात को पूरी तरह नहीं मान सका। बार–बार घटनाओं का शिकार होते हुए भी अपने अतीत को देखकर मैं अपने जीवन को, और कुछ कहूँ, विशृंखल तो नहीं कह सकता। विशृंखलता को साधारण मानव–मस्तिष्क स्वीकार भर नहीं करता, जैसे वह घटनाओं के आक्रमण से अपने को बचा भी नहीं सकता। शायद साधारण मानव–जीवन की यत्किंचित् सफलता इसी में है कि वह अनिवार्य घटनाओं के बीच भी अपने जीवन को विशृंखल होने से बचा ले जाये।

प्रसंग –प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी की मृत्यु से लगे आघात को व्यक्त किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों मे लेखक अपनी पत्नी की मृत्यु से व्यथित होकर जीवन में आने वाली विसंगतियों पर विचार करता है। लेखक स्वयं से ही प्रश्न करता है कि क्या मानव जीवन घटनाओं का एक क्रम मात्र ही है अथवा इसके पीछे कोई सोची–समझी योजना है। लेखक का मानना है कि यदि वह हृदय की अच्छी प्रकार से परीक्षा करे अथवा अपने मन को ठीक से समझ ले तो वह यह कहेगा कि मैं किसी एक अथवा दूसरी बात को परी तरह नहीं मानता हूँ। वह अपने जीवन में अनेक बार विभिन्न घटनाओं का शिकार हुआ है फिर भी अपने बीते हुए दिनों को याद करके वह अपने जीवन को ऐसा नहीं कह सकता कि जो क्रम–बद्ध न हो। उसका जीवन कभी भी सामाजिक बन्धनों से मुक्त नहीं रहा है। कोई सामान्य व्यक्ति अपने जीवन को कभी भी बन्धनों से मुक्त नहीं मानता है। वह अपने जीवन में होने वाली घटनाओं के आघात से भी स्वयं को सुरक्षित नहीं रख पाता है। वह मानता है कि मानव जीवन को थोड़ी–सी सफलता इसी में प्राप्त हुई है कि वह अपने जीवन में घटने वाली अनिवार्य घटनाओं के बीच से अपने जीवन को बिखरने से बचा सके।

विशेष –

1. लेखक मानव जीवन में घटित होने वाली आकस्मिक घटनाओं की मानव जीवन की अनिवार्यता स्वीकार करता हैं

2. मनुष्य को जीवन में घटित होने वाली घटनाओं से भयभीत होकर बिखरना नहीं चाहिए अपितु स्वयं को इन घटनाओं को साहसपूर्वक सहन करने के लिए तैयार रखना चाहिए।

3. भाषा तत्सम प्रधान, सरल तथा प्रवाहमयी है।

4. आत्मकथात्मक शैली में विचारों की प्रधानता है।

5. मुहावरों का सुन्दर प्रयोग है।

वस्तु–सत्य बड़ा क्रूर, कठोर और निर्मम होता है, और एक तरह से उसका ऐसा होना ठीक ही है। वह हमारे सामने एक स्थूल स्थिति प्रस्तुत करता है और कहता है कि इसका सामना करो। हम न करना चाहें, हिचकें–झिझकें, टाल–मटूल करें तो वह हमें विवश कर देना भी जानता है। उसमें यह शक्ति न होती तो हममें से बहुत–से–स्वप्न और कल्पना की अफ़ीम खाये पड़े रहते।

शब्दार्थ – क्रूर = निर्द्रय । निर्मम = ममता–विहीन। टाल–मटूल = नकारने का प्रयत्न।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु के पश्चात् अनुभव किए गए अपने एकाकीपन को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन करता है जब वह श्यामा की मृत्यु के पश्चात् उसके साथ बिताये हुए नौ वर्ष के वैवाहिक जीवन की स्मृतियों में डूब जाता है और चाह कर भी उन यादों से आजाद नहीं हो पाता। वह स्वयं को 'सुधियों के बंधन से' मुक्त नहीं कर पाता। उसे लगता है कि जीवन का यथार्थ अथवा जीवन की वास्तविकताएँ बहुत ही कठोर, निर्मम और भयानक होती हैं। वह उनका ऐसा होना उचित मानता है। क्योंकि जीवन के सत्य हमारे सम्मुख जीवन की कठोर स्थितियों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत कर देते हैं और हमें उन स्थितियों का सामना करने के लिए कहते हैं। यदि हम जीवन की वास्तवकिताओं का मुकाबला करने से मना कर दें अथवा हिचकते–झिझकते हुए टाल–मटोल करने लगे तो वे सच्चाइयाँ हमें विवश कर देती हैं कि हम उन का सामना करें। यदि जीवन–सत्यों में यह शक्ति न होती कि वे परिस्थितियों का सामना करने के लिए हमें विवश कर सकते तो संसार में बहुत–से लोग काई कार्य भी न करते और निठल्ले पड़े हुए स्वप्न और कल्पना लोक की अफ़ीम खाकर उसके नशे में डूबे पड़े रहते।

विशेष –

1. **लेखक ने जीवन की वास्तविकताओं की निर्ममता की ओर संकेत करते हुए उनका सामना करने के लिए कहा है।**
2. जीवन की विसंगतियों के सम्मुख पलायन करना अनुचित है।
3. भाषा तत्सम प्रधान सरल तथा प्रवाहमयी है।
4. आत्मकथात्मक शैली में विचारों और भावों की प्रधानता है।
5. **मुहावरों का सुन्दर प्रयोग है।**

जाति–व्यवस्था से गठित–ग्रसित भी कहना अनुपयुक्त न होगा––समाज में व्यष्टि और समष्टि के संबंधों पर जब–जब मैंने सोचा है, क्षेभ से भर उठा हूँ। व्यक्ति को समाज के सहयोग की आवश्यकता होती है, अपने साधारण जीवन में भी, अपने सुख, अपने दुःख में भी। पर व्यक्ति को समाज से यह सहयोग लेने के लिए बड़ा महंगा मूल्य चुकाना पड़ता है। उसे अपनी स्वतंत्रता समाज के हाथों में गिरवी रखनी पड़ती है। समाज से कोई स्वतंत्र हुआ नहीं, उसके विपरीत, उससे अलग उसने कुछ किया नहीं कि समाज उस पर अपना आक्रोश प्रकट करना शुरू कर देता है।

शब्दार्थ – अनुपयुक्त = विपरीत। व्यष्टि = व्यक्ति। समष्टि = सब। आक्रोश = क्रोध।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु से व्यथित अपने मन की दशा का मार्मिक चित्रण किया है।

व्याख्या – परिवार को समाज ने बिरादरी–बाहर कर दिया था। इस कारण उसकी पत्नी की अर्थी के साथ केवल चार–छह लोग ही जा रहे थे। समाज की इसी जाति–व्यवस्था पर अपना आक्रोश व्यक्त करते हुए लेखक लिखता है कि यह समाज जाति–व्यवस्था पर गठित किया गया है और यदि वह इस समाज को जाति–व्यवस्था से जकड़ा हुआ कहे तो इसे भी वह अनुचित नहीं मानता। वह जब भी समाज में व्यक्ति और समाज के संबंधों पर विचार करता है, उसका मन आक्रोश से भर उठता है। प्रत्येक व्यक्ति को समाज में रहते हुए समाज के सहयोग की आवश्यकता होती है। वह अपना सामान्य जीवन व्यतीत करते हुए अथवा अपने सुख–दुःख में भी समाज की सहायता की अपेक्षा करता है। परन्तु समाज से यह सहयोग लेने के लिए व्यक्ति को बहुत कीमत चुकानी पड़ती है अथवा उसे अनेक बलिदान देने पड़ते हैं। यहाँ तक कि उसे अपनी आजादी भी समाज के पास गिरवी रखनी हैं वह अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं कर पाता। समाज के बंधनों से कभी भी कोई मुक्त नहीं हो पाता और यदि कोई ऐसा करता है तो उसे समाज का कोप–भाजन बनना पड़ता है तथा समाज उसे बिरादरी–बाहर कर देता है।

विशेष –

1. जातिगत सामाजिक बंधनों को व्यक्ति की स्वतंत्रता में बाधक माना गया है।
2. मनुष्य को अपना मन मारकर सामाजिक बंधन स्वीकार करने पड़ते हैं अन्यथा समाज उसे बहिष्कृत कर देता है।

3. भाषा तत्सम प्रधान सरल तथा प्रवाहमयी है।

4. आत्मकथात्मक शैली में भावुकता एवं विचारों की प्रधानता है।

5. मुहावरों का सुन्दर प्रयोग है।

जमुना की लहरियों ने विगत स्मृतियों से क्षत–विक्षत मेरे मन पर कितना मरहम लगाया होगा इसे बताना मेरे लिए सम्भव नहीं। जमुना के किनारे थोड़ी देर बैठनेके बाद मुझे ऐसा लगता जैसे उसकी लहरें मेरी पलकों, मेरी भौहों, मेरे सिर पर से होती निकली जा रही हैं ओर मस्तिष्क उनकी शीतल–तरल–कोमल स्पर्श अनुभव कर रहा है। पुल की किसी कोठी पर बैठकर जल की ओर दृष्टि स्थिर करता तो थोड़ी देर बाद ऐसा लगता कि जमुना का जल थम गया है ओर कोठी ही जमुना की धारा में आगे, और आगे धंसती चली जा रही है और जैसे इस यात्रा से मैं अपने अतीत की स्मृतियों से दूर, बहुत दूर चला जा रहा हूं।

शब्दार्थ – विगत = पहले की। स्मृतियों = यादें। क्षत–विक्षत = टुकडे–टुकड़े हुए। अतीत = बीता हुआ समय।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु के पश्चात् की अपनी मानसिक व्यथा का वर्णन किया है।

व्याख्या – लेखक अपनी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् स्वयं को बहुत अकेला और टूटा हुआ अनुभव करता है। अपने एकांत के इन क्षणों को व्यतीत करने के लिए वह यमुना नदी के किनारे जा बैठता था। लेखक कहता है कि यमुना नदी की लहरों ने अतीत की स्मृतियों से आहत मेरे मन को कितनी सांत्वना दी होगी यह यह बताना उसके लिए सम्भव नहीं है। जब वह यमुना के किनारे थोड़ी देर बैठा रहता तो उसे ऐसा लगता था जैसे यमुना की लहरें उसकी पलकों, भौहों, माथे, सिर से होकर निकलती जा रही हैं और उसका मस्तिष्क उन लहरों की शीतलता, तरलता और कोमलता का अनुभव करके शान्त होता जा रहा है। जब वह पुल को किसी कोठी पर बैठकर टकटकी लगाकर जल की ओर देखता था तो थोड़ी देर बाद उसे ऐसा लगता था जैसे यमुना का जल प्रवाह रुक गया हो और जिस कोठी पर वह बैठा ही वही यमुना की जल–धारा में आगे, और आगे धंसती चली जा रही है। कोठी की इस यात्रा को देखकर वह अनुभव करता था जैसे वह अपने बीते दिनों की यादों से भी दूर बहुत दूर होता जा रहा है। यमुना की लहरियां उसे अतीत की स्मृतियों को भुलाने में सहायता कर रही हैं।

विशेष –

1. लेखक अपने व्याकुल मन को शान्त करने के लिए यमुना नदी के किनारे आकर बैठता है और उसकी जल–धारा देखकर शान्ति का अनुभव करता है।

2. व्यथित मन को शान्ति प्राकृतिक परिवेश ही प्रदान करते हैं।

3. भाषा तत्सम प्रधान, सरल तथा प्रवाहमयी है।

4. आत्मकथात्मक शैली में बिंबात्मकता और भावात्मकता का गुण सम्पन्न है।

5. मुहावरों का सुन्दर प्रयोग है।

कला अनुभूतियों का किसी इन्द्रिय–ग्रह्य माध्यम में रूपान्तरण है। यह रूपान्तरण ही वह जादू है जो अनुभूतियों को मस्तिष्क के उस स्तर से उठाकर, जहाँ वे भोगी–झेली जाती हैं, उस स्तर पर ले जाता है जहाँ उनका आस्वादन किया जाता है। यह आस्वादन की प्रक्रिया कहीं पहुँचकर आनन्द–संतोषप्रद और कहीं पहुँचकर शान्तिदायिनी हो जाती है।

शब्दार्थ –ग्राह्य =समझने योग्य, अपनाने योग्य। आस्वादन = स्वाद लेना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हरिवंश राय बच्चन द्वारा रचित आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' से लिया गया है। इस आत्मकथा में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की मृत्यु के बाद की अपनी मानसिक व्यथा का मार्मिक चित्रण किया है।

व्याख्या – लेखक स्पष्ट करता है कि किस प्रकार वह श्यामा की मृत्यु की वेदना से स्वयं को, साहित्य–सृजन के माध्यम से , सहज बना सका। वह मानता है कि कला मानवीय अनुभूतियों को किसी इन्द्रिय के द्वारा ग्रहण करने का सशक्त माध्यम है। कला के द्वारा ही अनुभूतियों को मस्तिष्क के उस भाग से उठा कर लाया जाता है जहां मनुष्य उन्हें भोगता या सहन करता है। कला के द्वारा ही वह इन अनुभूतियों को ऐसा आकार प्रदान करता है जिसे देख, सुन अथवा पढ़कर मनुष्य उसका आनन्द लेता है। कला को देखकर अथवा पढ़–सुनकर जो अनुभव होता है वही अनुभव मनुष्य की व्यक्तिगत स्थिति के अनुरूप उसे आनन्द, संतोष अथवा शान्ति प्रदान करता है।

विशेष –

1. लेखक कला को अनुभूतियों का इन्द्रिय–ग्राह्य रूपान्तरण मानता है।
2. कला मनुष्य को उसकी व्यक्तिगत भावनाओं के अनुरूप आनन्द, संतोष अथवा शान्ति प्रदान करती है।
3. गंभीर भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।
4. कला का आस्वादन व्यक्ति विशेष की रुचि पर आधारित है।
5. भाषा तत्सम प्रधान तथा प्रवाहमयी है।
6. शैली चिन्तन प्रधान विचारात्मक है।

खण्ड ग : हरिवंशराय बच्चन

साहित्यिक परिचय

हालावाद के प्रवर्त्तक, छायावाद के उत्कर्ष काल में मांसलता को प्रमुखता देने वाले हरिवंशराय 'बच्चन' का जन्म 27 नवम्बर, 1907 ई॰को प्रयाग के चौक मोहल्ले के एक साधार कायस्थ परिवार में हुआ था। पढ़ाई के प्रति रुचि उन्हें पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली। अभावों की छत्र–छाया में रूखा–सूखा खाकर गरीब देश के एक साधारण छात्र की तरह उनकी प्रारम्भिक शिक्षा म्युन्सिपल स्कूल में हुई। उन्होंने प्रयाग विश्वविालय मं एम॰ ए॰ के लिए अंग्रेज़ी विषय लेकर प्रवेश लिया, परन्तु सन् 1930 के असहयोग आन्दोलन के कारण एम॰ ए॰ की पढ़ाई छोड़ दी।

बाद में उन्होंने सन् 1939 में एम॰ ए॰ और सन् 1939 में काशी विश्वविद्यालय से बी॰ टी॰ टी॰ की डिग्री प्राप्त की। सन् 1941 में वे प्रयाग विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हुए, 1952 ई॰ में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी कवि ईट्स पर पी–एच॰ डी॰ की। इंग्लैण्ड से लौटने पर एक वर्ष तक विश्वविद्यालय में कार्य किया और तत्पश्चात् आकाशवाणी के इलाहाबाद केन्द्र से सम्बद्ध हो गये। बाद में केन्द्रीय सरकार के विदेश मंत्रालय में हिन्दी विशेषज्ञ के पद पर नियुक्त हुए। दस वर्ष तक इस पद पर कार्य करने के उपरान्त वह राज्य सभा के सदस्य मनोनीत किये गये। जीवन के अन्तिम क्षणों तक वे स्वतंत्र लेखन करते रहे। इन्हें सोवियतलैंड तथा साहित्य अकादमी पुरस्कारों से सम्मानित किया गया था। 'दशद्वार से सोपान तक' रचना पर इन्हें 'सरस्वती' सम्मान दिया गया था। भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मभूषण' सम्मान प्रदान किया था। 18 जनवरी, सन् 2003 ई॰ को इनका मुम्बई में देहान्त हो गया था। बचपन से ही वे अत्यन्त परिश्रमी और उत्साही रहे। उनका सारा जीवन साधना श्रम का जीवन रहा। मानवीय ममता और भावुकता के वह अक्षय भण्डार थे। बच्चन जी भावनाओं के कवि थे और अपने अनुभवों को सहजतापूर्वक अभिव्यक्त करने को ही कवि कर्म मानते थे। मानव हृदय मर्मज्ञ, रस सिद्ध गायक, भाव–धनी कवि और युग प्रबुद्ध संदेशवाहक, आत्मजयी, संकल्प दृढ़ बच्चन सदैव अपने मित्रों और साथियों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहे हैं।

साहित्यिक रचनाएं

बच्चन जी का साहित्यकार रूप कवि के रूप में नहीं कहानीकार के रूप में उदय हुआ। प्रयाग विश्वविद्यालय में हुई कहानी प्रतियोगिता में उन्हें प्रथम पुरस्कार मिला। बाद में बच्चन जी ने कहानी लेखन से मुंह मोड़कर कविता लिखने की ओर ध्यान दिया। बच्चन की रचनाओं में प्रमुख – मधुशाला, निशा निमन्त्रण, प्रणय पत्रिका, एकांत संगीत, सतरंगिनी, मिलन यामिनी, बुद्ध और नाचघर, त्रिभंगिमा, आरती और अंगारे तथा जाल समेटा आदि है। अंग्रेज़ी और रूसी से अनुवाद के अतिरिक्त उन्होंने संस्मरण,

आलोचना, निबंध और आत्मचरित्र लिखकर भी यश प्राप्त किया है। इनमें प्रमुख रचनाएं 'बसेरे से दूर', 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ', 'नीड का निर्माण फिर', 'प्रवास की डायरी' प्रमुख हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ :

बच्चन जी ने अपनी रचना प्रक्रिया के संबंध में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था, ''काव्य चेतना एक प्रकार की भाव प्रवणता है। .....मैं जीवन के प्रति अत्यन्त संवेदनशील रहा हूँ। .....मेरे जीवन की परिस्थिति के परिवर्तनों के साथ ही उनका भी रूप परिवर्तित होता रहा है।'' बच्चन के काव्य का जन्म छायावाद के उत्कर्ष के समय हुआ। यद्यपि कुछ कविताओं में छायावाद का प्रभाव दिखाई देता है, परन्तु कवि के स्वाभिमान को छायावादियों का पिछलगुआ बने रहना इष्ट न था। अतः शीघ्र ही 'मधुशाला' के साथ हिन्दी काव्याकाश में धूमकेतु की तरह उदय हुए।

'मधुशाला' में हिन्दी पाठकों को वह मस्ती मिली जिसकी उन्हें बहुत दिन से तलाश थी। अपने मधु–काव्य में, जिसकी प्रेरणा कदाचित् उन्हें उमर खैय्याम से मिली। बच्चन ने अपने सौन्दर्योपासक हृदय के उल्लास, आनन्द और भावावेश को रसमुग्ध प्याली में उडेलने का प्रयत्न किया है। मधु–काव्य की राम–भावना को पारकर बच्चन मानव जीवन की निराशा और मृत्यु–विछोह–दुःख से कंटकित अपनी काव्य यात्रा के दूसरे सोपान पर चरण बढ़ाते हैं। निशा निमंत्रण, एकांत संगीत ओर आकुल–अन्तर इस काल की रचनाएं हैं। इनके गीतों का आकार भले ही लघु हो, पर उनमें भावों की आकुलता, संगीत का माधुर्य पाठक को सहज ही 'देखन में छोटन लगे घाव करे गम्भीर' की अनुभूति करा देता है।

टी॰ एस॰ इलियट के समान बच्चन जी का भी मत है कि साहित्यकार की प्रत्येक पंक्ति, प्रत्येक रचना, सर्प की काया के समान सुसम्बद्ध होना चाहिए, आदि से अंत तक समग्र गतिमय, प्रत्येक अंश परिपूर्ण को और परिपूर्ण प्रत्येक अंश को प्रस्फुरणशील रखे। अभिव्यंजना के नये प्रयोगों के लिए लिखना उन्हें अस्वाभाविक लगता है। उनकी कविता का विशेष गुण है–– अनुभूतिमूलक सत्यता, सहजता और संवेदनशीलता। उन्होंने साहस, सहन, धैर्य और ईमानदारी के साथ अपने अनुभवों, सुख–दुःख की भावना, यौवन के उल्लास और सामाजिक कुरीतियों के प्रति अपने विक्षोभ को सीधी–सादी भाषा, सहज कल्पनाशीलता और सजीव बिम्बों में सजाकर हिन्दी को सुकुमार गीत दिये हैं।

बच्चन की भाषा बोलचाल की साहित्यिक भाषा है। यह सहज, सरस, अर्थयुक्त, उर्दू शब्दों से युक्त है। इनकी शैली रोचक वर्णन प्रधान, भावमयी तथा आत्म कथात्मक है।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. 'नीड का निर्माण फिर' आत्मकथा बच्चन की रचना–प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण आयाम है– इस तथ्य पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर हरिवंश राय बच्चन की पत्नी श्यामा की जब मृत्यु हुई तो लेखक की मानसिक दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी। वह स्वयं को अत्यन्त एकाकी और टूटा हुआ अनुभव करने लगा था। उसका मन बहुत रुगण हो गया था। उसकी मानसिक दशा उस व्यक्ति के समान थी जिसे फांसी की सज़ा सुना दी गई हो, पर फांसी की तिथि अनिश्चित हो। उन्हीं दिनों उसने अपने परिवार की दयनीय आर्थिक स्थिति देखी। चार महीने से वह अपनी स्कूल नौकरी से बिना वेतन के छुट्टी पर था। उसने स्कूल जाना प्रारम्भ कर दिया। फिर भी उसका मन अवसाद से भरा रहता था। खाली क्षणों में अतीत की अनेक स्मृतियां उसे आन्दोलित करने लगती थी। वह यमुना नदी के किनारे नदी के जल की धारा को देखते हुए कुछ शान्ति का अनुभव करता था।

तभी कुछ लोग उसे कविता –पाठ के लिए आमन्त्रित करने लगे। कुछ दिनों तक तो लेखक ने उनकी अपेक्षा की फिर वह गोष्ठियों, सम्मेलनों में भाग लेने लगा। उसकी मानसिक वेदना शब्दों के माध्यम से व्यक्त होने लगी। इस अवसर पर वह अपनी और अपनी पत्नी श्यामा की बीमारी के दिनों में लिखी गई फुटकर कविताओं के अतिरिक्त 'खैयाम की मधुशाला', 'मधुशाला', 'रूबाइयत उमर ख़ैयाम' के अनुवाद आदि सुनाया करता था। इन्हीं दिनों लेखक ने 'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा भी लिखी थी।

'नीड़ का निर्माण फिर' लिखने से लेखक के मन का अवसाद धुल गया और उसका साहित्यकार जाग उठाा। वह समस्त आत्म–भोगी स्थितियों को कविताओं के रूप में अभिव्यक्ति प्रदान करने लगा। उसे अपनी कल्पनाओं के रूप में आकार लेते देखकर अपार शान्ति का अनुभव होता था। वह सोचने लगा कि 'जीवन है तो मनुष्य अपने को कटु–मधु अनुभूतियों के भार से विमुक्त नहीं कर सकता।' इस भार को सहन करने योग्य तथा सुखद बना देने में उसे अपनी साहित्य–साधना का योगदान बहुत ही महत्त्वपूर्ण लगता है। वह इसे ही अपनी जीवन–यात्रा की संगिनी मानता हैं इस कारण कह सकते हैं कि 'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा ने लेखक को अवसाद से निकाल कर सृजन करने की प्रेरणा दी थी। अतः यह उनकी रचना–प्रक्रिया का महत्त्वपूर्ण आयाम है।

प्रश्न 2 'आधी रात शायद प्रतीक मात्र है, दो तनावों के बीच की स्थिति का'––इस कथन के संदर्भ में लेखक के दार्शनिक विचारों का उल्लेख कीजिए ?

उत्तर हरिवंशराय बच्चन द्वारा रचित 'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा के इस अंश में लेखक ने अपनी पत्नी श्यामा की असाध्य बीमारी से मृत्यु का मार्मिक वर्णन किया है। लेखक रात–दिन अपनी बीमार पत्नी की सेवा करता है और उसकी मृत्यु उसे दार्शनिक बना देती है। 17 नवम्बर की शाम को जब श्यामा को अचानक बेहोशी का दौरा पड़ता है और डॉ॰ घोष जवाब दे देते हैं तो लेखक को श्यामा की मृत्यु की प्रतीक्षा करना मृत्यु से भी अधिक डरावनी प्रतीत होती है। श्यामा के पिता और ताऊ जब भगवान् से उसे बचाने की प्रार्थना करते हैं तो लेखक जोर से हंस पड़ता है क्योंकि जब नियति ही श्यामा को नहीं बचाना चाहती तो भगवान् की प्रार्थना करने से क्या लाभ ? आधी रात के समय श्यामा की मृत्यु हो जाती है। नियति की इच्छा पूरी हो जाती है।

लेखक आधी रात को दो तनावों की बीच की स्थिति मानता है क्योंकि इस क्षण में ही करणीय और अकरणीय अथवा होनी और अनहोनी का निर्णय हो जाता है। इसलिए इस स्थिति में वह सतर्क रहने के लिए कहता है। इस सतर्कता को भी वह मनुष्य का मात्र अहं मानता है क्योंकि जो होना होता है, वह तो हो ही जाता है। इस प्रकार लेखक नियति को बहुत महत्त्व प्रदान करता है, क्योंकि उसके सामने किसी की भी नहीं चलती है।

श्यामा की मृत्यु लेखक को उसके साथ व्यतीत किए वैवाहिक जीवन के नौ वर्षों की अतीत की स्मृतियों में ले जाती है। इन सुधियों के बन्धनों से वह स्वयं को आज़ाद नहीं कर पाता है। जब श्यामा की अर्थी ले जायी जा रही होती है तो 'राम नाम सत्य है' करने के स्थान पर वह अर्थी चुपचाप ले जाने के लिए कहता है और स्वयं सोचता रहता है कि शरीर ने तो अन्त में भस्म ही हो जाना है। इसलिए मनुष्य को सदा अपने शुभ कर्मों का स्मरण करना चाहिए। श्मशान में श्यामा की चिता का आग लगा दी जाती है। कुछ समय बाद शेष रही राख को भी गंगा में बहा दिया जाता है तो उसे लगता है कि 'सारा वस्तु सत्य लुप्त हो गया।' यही जीवन है, क्षणभंगुर ! उसका मन रुग्ण हो जाता है। उसे लगता है कि वह भी मर जाएगा। धीरे–धीरे इस अवसाद से मुक्ति उसे उसकी साहित्य–साधना से प्राप्त होती है तो वह समझता है कि जीवन है तो मनुष्य स्वयं को जीवन के कटु–मधु अनुभवों से भी मुक्त नहीं कर सकता। उसे यह सब सहन करने के लिए कोई जीवन–साथी बनाना चाहिए। लेखक ने अपनी रचना धर्मिता को ही अपनी जीवन–यात्रा की संगिनी बना लिया था। इस प्रकार वह आधी रात की तनावग्रस्त स्थिति से मुक्त हो सका था।

प्रश्न 3 आत्मकथा के तत्त्वों के आधार पर 'नीड़ का निर्माण फिर' की समीक्षा कीजिए ?

उत्तर आत्मकथा स्वयं लेखक द्वारा लिखी उसके जीवन की गाथा होती है। वह उसके अनुभवों तथा भोगे गये यथार्थ का प्रामाणिक आलेख होता है। इसलिए आत्मकथा में प्रामाणिकता, निजता, सहजता, तथ्यात्मकता आदि तत्त्वों का होना आवश्यक माना जाता है। 'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा में लेखक ने इन तत्त्वों का निम्नलिखित रूप से निर्वाह किया है––

1. **प्रामाणिकता** – 'नीड़ का निर्माण फिर' आत्मकथा में लेखक ने सोलह नवम्बर, 1936 की रात को देखे अपने विवाह के स्वप्न तथा अपनी पत्नी श्यामा की असाध्य बीमारी से मृत्यु का अंकन किया है। लेखक ने स्वप्न स्वयं देखा था अपनी रुग्ण पत्नी की सेवा वह स्वयं करता रहा है। इस कारण यह समस्त विवरण प्रामाणिकता की कसौटी पर खरा उतरता है।

2. **निजता** – लेखक ने इस आत्मकथा में अपने व्यक्ति जीवन, विचारों, गुण–अवगुणों, स्वभाव आदि का आधिकारिक रूप में वर्णन किया है। श्यामा की मृत्यु के क्षणों का वर्णन करते हुए लेखक का यह कथन ''श्यामा की उर्ध्व श्वास आधी रात तक चलती रही। उस अन्धकार में डूबे, सुप्त–मौन मोहल्ले के एक घर के एक कमरे की एक चारपाई से उठता हुआ वह सांसों का स्वर कितना तीव्र लगता था ! लगता था, जैसे कोई आरे से मुझे चीर रहा है।'' लेखक की निजी भावनाओं को व्यक्त करता है।

3. **तथ्यात्मकता** – लेखक ने इस आत्मकथा में अपने जीवन के विभिन्न प्रसंगों को यथातथ्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। कथा का प्रारम्भ वह आज से तीस वर्ष पूर्व सोलह नवम्बर, 1936 को देखे स्वप्न से करता है। 17 नवम्बर की संध्या से श्यामा की मरणासन्न अवस्था का चित्रण करता है तथा उसके पिता बाबू रामकिशोर तथा ताऊ बाबू रामचन्द्र के आने, आधीरात से पूर्व श्यामा का अस्फुट स्वर में कुछ कहना,श्यामा की मृत्यु से लेखक के टूटने–बिखरने और अन्त में साहित्य–साधना के माध्यम से अवसाद मुक्त होने का विवरण तथ्यों पर आध ाारित है।

4. **भाषा– शैली**– लेखक ने इस आत्मकथा को अत्यन्त सहज, तत्सम प्रधान, प्रवाहमयी तथा भावानुकूल भाषा में प्रस्तुत किया है। लेखक की शैली आत्मकथात्मक है जिसमें कहीं–कहीं वर्णनात्मक, विचारात्मक, चित्रात्मक और भावात्मक शैली के दर्शन भी होते हैं। जैसे––''आधी रात शायद प्रतीक मात्र है दो तनावों के बीच की स्थिति का । जिन तनावों को मनुष्य झेलता है, उन्हें नियति–प्रकृति भी झेलती हों तो क्या आश्चर्य !''

इस प्रकार कह सकते हैं कि आत्मकथा के तत्त्वों के आधार पर 'नीड़ का निर्माण फिर' एक सफल आत्मकथा है।

प्रश्न 4 हरिवंशराय बच्चन की भाषा– शैली पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। नीड़ का निर्माण फिर' हरिवंशराय बच्चन द्वारा रचित उनकी आत्मकथा है। आत्मकथा का लेखक सत्य का पक्षधर होता है। इसलिए बच्चन ने इसमें सहज तथा भावपूर्ण भाषा एवं सरस तथा प्रवाहमयी शैली की प्रयोग किया है, जिसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है––

1. **सहजता** – लेखक ने अत्यन्त सहज तथा बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है जिस कारण सर्वत्र रोचकता बनी रहती है। जैसे –''सोलह की रात को मैंने सपना देखा जो आज तीस वर्षों के बाद भी मेरी आँखों के आगे वैसा ही स्पष्ट है जैसे उसे मैंने कल रात ही देखा हो।''

2. **चित्रात्मकता** – लेखक की भाषा चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है। वह शब्दों के माध्यम से किसी भी स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने में सफल रहा है। जैसे विवाह के समय अग्नि–कुण्ड की परिक्रमा का यह दृश्य 'मेरी भांवर पड़ रही है, मंगल पण्डित मंत्र पढ़ रहे हैं और मैं ऐड़ी से चोटी तक लाल कपड़ों में लज्जा–लिपटी एक नव–वधू के पास अग्नि–कुण्ड के चारो ओर फेरे दे रहा हूँ। फिर देखता हूं अग्नि– कुण्ड की एक लपट ने नव–वधू के आंचल को पकड़ लिया है, वह सिर से पांव तक लपटों में घिर गयी है।

3. **शब्द सम्पदा** – लेखक ने अपने भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए तत्सम, देशज, विदेशी शब्दों के अतिरिक्त मुहावरों का भी यथास्थान सहज रूप से प्रयोग रूप से प्रयोग किया है। जैसे – निष्प्रभ, आंचल, अपरिपक्व, सुप्तावस्था, अवचेतन, झाँस, अगाहियाँ, मौर, बर्दाश्त, तीमारदार, लाचार, लड़कपन, टूट पड़ना आँख फाड़कर देखना, पर्दा गिरना।

4. **प्रवाहमयता** – लेखक को भाषा प्रवाहमयी है। इस कारण इस आत्मकथा में गति बनी रहती है। विचारों का प्रवाह कहीं भी अवरुद्ध नहीं होता है। वह प्रत्येक स्थिति का वर्णन सहजता से कर जाता है। जैसे– ''श्यामा का दम टूटते ही मेरी मां, मेरी छोटी बहन, जो अपनी भाभी की गम्भीर बीमारी का समाचार पाकर ससुराल से आ गई थी, शालिग्राम और उनकी पत्नी–सब साथ रो पड़े। केवल मैं पथराई–पथराई आंखों से श्यामा के शव को देखता बैठा रहा।''

5. **शैली** – 'नीड़ का निर्माण फिर' की रचना आत्मकथात्मक शैली में हुई है। इसमें कहीं–कहीं चित्रात्मक, भावात्मक, विचार प्रधान, वर्णनात्मक तथा सूत्रात्मक शैली के भी दर्शन होते हैं। जैसे – ''मृत्यु की प्रतीक्षा मृत्यु से भी अधिक डरावनी होती है।''.....''स्मृति बड़ी निष्ठुर है।'' .....''वस्तु–सत्य बड़ा क्रूर, कठोर और निर्मम होता है।'' .....''मन का प्रभाव तन पर पड़ता है।''

अतः कह सकते हैं कि 'नीड़ का निर्माण फिर' में लेखक ने आत्मकथा के अनुरूप भाषा–शैली का प्रयोग करके इस रचना को सशक्त बना दिया है।

अध्याय–8
कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण मेला

जयभगवान गोयल

खण्ड क : पाठ सार

'कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण मेला' डॉ॰ जयभगवान गोयल द्वारा रचित 16 फरवरी, 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा हाल रिपोर्ताज के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

लेखक दो माह पूर्व से ही इस सूर्य–ग्रहण मेले की तैयारी देख रहा है। पीपली रोड के नए बस स्टैण्ड से लेकर कुरुक्षेत्र रेलवे स्टेशन तथा वहाँ से विश्वविद्यालय परिसर तक के अड़तालीस किलोमीटर क्षेत्रफल में नगर का कायाकल्प हो रहा है। मेला क्षेत्र में नया नगर बस गया है। सरोवरों को साफ करके उनमें निर्मल जल भर दिया गया है। 14 फरवरी, 1980 ई॰ को शिव रात्रि के अवसर पर स्थानेश्वर की प्राचीन नगरी सज–धज कर पन्द्रह लाख श्रद्धालु तीर्थयात्रियों के स्वागतार्थ तैयार थी। 14 फरवरी, शिवरात्रि के पर्व के दिन रात्रि के आठ बजे लेखक ब्रह्म सरोवर के भीतर स्थित सर्वेश्वर महादेव के मन्दिर में खड़ा होकर इस विशाल तथा भव्य सरोवर के निर्मल जल में झिलमिलाती दीपमाला देखकर पूर्णिमा की दीपमाला से देदीप्यमान अमृतसर के स्वर्णमन्दिर की शोभा का स्मरण करने लगता है। लेखक को उसके स्मृति लोक से लौटा कर किसी गुजराती भाई का यह स्वर लाता है, ''देश के सभी तीर्थ–स्थान देखें, किन्तु इतना सुन्दर सजा हुआ स्थान नहीं देखा।''

15 फरवरी सूर्य संध्या के समय मेले का सम्पूर्ण वातावरण आकार ग्रहण करने लगा है। लाउडस्पीकरों से प्रसारित घोषणाओं , दुकानदारों, यात्रियों, भजनों, भिखारियों आदि का मिला–जुला शोर वातावरण में व्याप्त है। मेले–क्षेत्र में यातायात बन्द है। लेखक विश्वविद्यालय परिसर के पूर्वी सीमांचल से सटे ब्रह्मसरोवर के पश्चिमी तट पर आकर विशाल ब्रह्म सरोवर को देखता है। इसका आधा पक्का बना हुआ भाग बहुत भव्य एवं आकर्षक प्रतीत होता है। इस सरोवर के शेष आधे भाग का अभी उद्धार होना है। ब्रह्मसरोवर के पुराने भाग को देखकर लेखक उस समय की कल्पना करता है जब इस विस्तृत सरोवर में निर्मल जल भरा रहता था तथा उसके चारों ओर वेदपाठी ब्रह्मचारी वेदों का निरन्तर पाठ करते रहते थे। इसके चारों ओर अनेक विद्यापीठ होंगे जिससे इस क्षेत्र को 'ब्रह्मऋषि देश' की संज्ञा मिली होगी। हर्षवर्धन के समय में इस सरोवर के आस–पास विभिन्न मन्दिरों का निर्माण हुआ था जिसकी साक्षी प्राचीन रामजी एवं हनुमान मन्दिर आज भी दे रहे हैं।

लेखक ब्रह्मसरोवर के चारों ओर घूमकर देखता है तो उसे जगह–जगह साधु–संतों और महात्माओं की टोलियाँ दिखाई देती हैं। उनकी टोली के विभिन्न प्रकार के झण्डे भी लहराते हुए दिखाई देते हैं। विभिन्न धर्मों, मतों, जातियों, प्रदेशों, भाषाओं का एक विचित्र संगम मेले में दिखाई देता है, जिससे यह लगता है मानो भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की विविधता में एकता का प्रतीक एक छोटा–सा भारत ही यहाँ उभर आया है। स्थान–स्थान पर भजन, कीर्तन, यज्ञ, भण्डारे आदि हो रहे हैं दरिद्र–नारायणों को भोजन कराया जा रहा है। सन्निहित सरोवर से रेलवे स्टेशन और बिरला मन्दिर तक सड़क के दोनों और भीड़ ही भीड़ है। लोग निरन्तर सिर पर गठरियाँ उठाये पापों से मुक्ति तथा पुण्यों का अर्जन करने के लिए चले ही आ रहे थे।

16 फरवरी , सूर्य–ग्रहण का दिन है। समस्त वातावरण स्वच्छ है। धूप खिली हुई है और हवा में ताज़गी और गर्मी है। लेखक की दृष्टि जिधर भी जाती है उधर ही उसे मानवों के सिर ही सिर दिखाई देते हैं। इस अनास्था के युग में भी लेखक श्रद्धा, भक्ति, विश्वास और आस्थाओं के मध्य श्रद्धालुओं को सूर्य ग्रहण की प्रतीक्षा करते देख रहा है। अढ़ाई बजे के लगभग वातावरण में हलचल होती है और एक हजार नागा साधुओं का विशाल जुलूस ब्रह्मसरोवर की ओर जाता दिखाई देता है। उनके साथ अनेक भक्तजन भी थे।

दो बजकर सैतीस मिनट पर सूर्यग्रहण के प्रारम्भ होने की घोषणा सुनते ही लाखों लोग स्नान करने लगते हें। शंखों, घण्टों, घड़ियालों की ध्वनि से वातावरण भर जाता है। धूप धीरे–धीरे कम हो जाती है और सरोवर के जल में काली छाया दिखाई देने लगती है। आधे–से अधिक सूर्य को ग्रहण लग चुका है। जगह–जगह भजन–कीर्तन हो रहे हैं। घाट पर दान मांगने वालों की भीड़ लगी है। लोगों का विश्वास है कि सूर्य ग्रहण के अवसर पर सभी देवता और तीर्थ भी ब्रह्म सरोवर में स्नान करने आते हैं। इसलिए आज का दान, स्नान, पूजा–पाठ बहुत उत्तम माना जाता है। पुराने जमाने में राजा लोग अपनी रानियाँ तक दान में दे देते थे और फिर उनके वज़न का सोना–चांदी देकर वापस ले लेते थे। एक बार एक पण्डे की नीयत बिगड़ गयी थी तो यह प्रथा बन्द हो गयी थी।

भक्त लोग दान, स्नान, भजन–कीर्तन द्वारा सूर्य देवता की संकट मुक्ति और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए प्रार्थना करते हैं। वे अपने सद्कर्मों से सूर्य की राहु से मुक्ति के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। धीरे–धीरे ग्रहण के बादल छंटने लगते हैं और चार बजकर उनचास मिनट पर सूर्य के स्व्च्छ होने की उद्घोषणा सुनते ही लाखों लोग फिर से एक साथ जल में स्नान करने के लिए प्रवेश कर जाते हैं। इस प्रकार वे शुद्ध होकर, पापों से मुक्त होकर तथा पुण्यों का संचय करके अपने घर जाएंगे। संध्या घिरने लगी है, पक्षी भी अपने–अपने नीड़ों की ओर जा रहे हैं तथा यात्री भी समस्त मार्गों से अपने–अपने घरों की ओर प्रस्थान कर रहे हैं।

खण्ड ख : व्याख्या

मैं ब्रह्मसरोवर के भीतर स्थित सर्वेश्वर महादेव के मन्दिर में खड़ा इस विशाल एवं भव्य सरोवर के निर्मल जल में झिलमिलाती दीपमाला को देख रहा हूँ। सरोवर के चारों ओर बिजली के हजारों बल्बों की बन्दनवार टंगी है। लाल पत्थर के घाटों पर स्थित खम्भों पर लगी श्वेत मर्करी लाइट, सर्वेश्वर महादेव मन्दिर की जगमग दीप–अत्यन्त मोहक दृश्य। मेरी चेतना में पूर्णिमा की दीपमाला से देदीप्यमान अमृतसर का स्वर्ण–मन्दिर उभर आता है। उसके मस्तक पर चमकता पूर्ण चन्द्र। अमृत सरोवर में बिम्बित स्वर्ण–मन्दिर की मनोहर जगमग छवि, चन्द्रमा का वह टीका, 'महादेव' के मस्तक पर आज नहीं है। वह तो आज दूसरी ही यात्रा पर है–सूर्य–ग्रहण की यात्रा पर।

शब्दार्थ – भव्य = सुन्दर। निर्मल = स्वच्छ। देदीप्यमान = चमकदार। मनोहर = मोहक।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। इस रिपोर्ताज में लेखक ने 16 फारवरी, सन् 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक 14 फरवरी की रात्रि को आयोजित शिवरात्रि के पर्व के समय ब्रह्मसरोवर में स्थित सर्वेश्वर महादेव के मन्दिर की शोभा का वर्णन करते हुए लिखता है कि वह ब्रह्म सरोवर के भीतर सर्वेश्वर महादेव मन्दिर में खड़ा है। इस मन्दिर में खड़ा होकर वह इस विशाल और बहुत बड़े सरोवर के स्वच्छ जल में झिलमिलाती हुई दीपमाला को देख रहा है जो उसे बहुत आकर्षक प्रतीत हो रही है। सरोवर के चारों ओर बिजली के हजारों बल्बों की टंगी हुई बन्दनवार बहुत सुन्दर लग रही है। इसी प्रकार से बह्म सरोवर के लाल पत्थर के घाटों पर स्थित खम्भों पर लगी हुई सफेद मर्करी लाइट तथा सर्वेश्वर महादेव मन्दिर की जगमगाती हुई दीप–सज्जा भी अत्यन्त मनमोहक दृश्य उपस्थिति करती है। यह सब देखकर लेखक को पूर्णिमा की दीपमाला से चमकता हुआ अमृतसर का स्वर्ण मन्दिर याद आ जाता है। उसके ऊपर चमकता हुआ पूर्णिमा का पूर्ण चन्द्रमा होता था। अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर के सरोवर में स्वर्ण मन्दिर की आकर्षक छाया प्रतिबिम्बित होती थी तथा उस पर पूर्ण चन्द्र का टीका सुशोभित होता था जो आज सर्वेश्वर महादेव के मन्दिर की छाया पर नहीं है। क्योंकि वह आज दूसरी ही यात्रा अर्थात् सूर्य ग्रहण की यात्रा पर गया हुआ है।

विशेष –

1. लेखक ने शिवरात्रि के पर्व पर रात्रि के समय विद्युत के प्रकाश में नहाये हुए सर्वेश्वर महादेव और ब्रह्म सरोवर की शोभा का आकर्षक शब्द चित्र प्रस्तुत किया है।
2. भाषा तत्सम प्रधान, सहज, प्रवाहमयी तथा काव्यात्मक है।

3. शैली वर्णन प्रधान तथा चित्रातमक है।

4. आकर्षक बिम्ब योजना है।

मैं कल्पना करता हूं उस समय की, जब इस तालाब में सरस्वती का पावन जल भरा होता था। इसके चारों ओर ऋषि–मुनियों, तपस्वियों के असंख्य आश्रम होंगे ओर जहाँ वेदों की ऋचाओं की रचना हुई होगी। ब्रह्मचारी वेद–पाठ करते होंगे। कई विद्यापीठ होंगे, जहाँ विचार–गोष्ठियों में ज्ञान–गंगा प्रवाहित होती होगी, जिससे इसे 'ब्रह्मऋषि' देश की संज्ञा मिली थी। विद्यापीठ इस सरोवर के तट पर आज भी है। इसके दो तटों से सटा कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय । प्राच्य एवं पाश्चात्य विद्या का केन्द्र। किन्तु वे ऋषि–मुनि, तपस्वी आज कहां है ?

शब्दार्थ – पावन = पवित्र। सरोवर = तालाब । प्राच्य = पूर्व की , प्राचीन।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। इसमें लेखक ने 16 फारवरी, सन् 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – लेखक ब्रह्मसरोवर की कायाकल्प देखकर उसकी भव्यता पर मुग्ध हो जाता है। इस सरोवर का पूर्वी भाग नया नया पक्का बन गया है जबकि पश्चिमी भाग का अभी जीर्णोद्धार होना है। वह यह सब देखकर अतीत की कल्पना में खो जाता है और उस समय की कल्पना करता है जब इस सरोवर में सरस्वती नदी का पवित्र जल भरा रहता होगा। उसे लगता है कि उस समय इस सरोवर के चारों ओर ऋषियों, मुनियों और तपस्वियों के अनेक आश्रम रहे होंगे, जिनमें उन्होंने वेदों के मंत्रों की रचना की होगी। वहाँ शिक्षा ग्रहण करने आये हुए ब्रह्मचारी वेद–पाठ करते होंगे। यहाँ अनेक विद्यापीठ रहे होंगे, जिनमें आयोजि विचार–गोष्ठियों में नये–नये विचारों की ज्ञान–गंगा सदा प्रवाहित होती रहती होगी। इसी कारण इस क्षेत्र को ब्रह्म ऋषिदेश कहा गया है। वर्तमान युग में भी इस सरोवर के तट पर विद्यापीठ स्थित हैं। इस सरोवर के दो तटों से सटा हुआ कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय है, जहां पूर्व और पश्चिम पद्धति की शिक्षा दी जाती है, परन्तु आज वैसे ऋषि, मुनि और तपस्वी नहीं हैं जो प्राचीनकाल में यहां शिक्षक का कार्य करते थे।

विशेष –

1. प्राचीन शिक्षा पद्धति की विशेषताओं को रेखांकित करते हुए वर्तमान काल में शैक्षिक मूल्यों में आई गिरावट पर चिन्ता व्यक्त की गई है।
2. गौरवपूर्ण अतीत को स्मरण किया गया है।
3. भाषा तत्सम प्रधान, प्रवाहमयी एवं भावपूर्ण है।
4. वर्णनात्मक शैली में चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है।
5. आकर्षक बिम्ब–योजना है।

फिर मैं कल्पना करता हूं उस समय की, जब स्थानेश्वर वर्धन–वंश के प्रतापी राजा हर्षवर्धन की राजधानी थी। अनेक मतों, धर्मों का केन्द्र। अत्यन्त वैभवशाली। तभी ये विस्तृत सुन्दर घाट बने होंगे। इसके तटों पर अनेक मन्दिरों का निर्माण हुआ होगा। प्राचीन रामजी–मन्दिर एवं हनुमान–मन्दिर आज भी उसकी साक्षी दे रहे हैं। नित्य प्रातः पुरवासी बड़ी संख्या में स्नान–ध्यान के लिए यहां आते होंगे। घण्टों–घड़ियालों, शंखों की ध्वनि वातावरण में गूंजती होगी। प्रार्थनाओं, आरतियों, पूजा–पाठ, कला–कीर्तन , मंत्र–गायन से वायुमण्डल गुँजरित होता होगा। विशाल बड़ एवं पीपल के वृक्षों की छाया में भक्तजन ध्यान लगा कर बैठते होंगे।

शब्दार्थ – प्रतापी = गौरवपूर्ण। वैभवशाली = धन सम्पन्न। साक्षी = गवाही। पुरवासी = ग्रामवासी।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। इसमें लेखक

ने 16 फारवरी, सन् 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का रोचक तथा सजीव आँखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में लेखक ब्रह्मसरोवर की शोभा देखकर अतीत की कल्पनाओं में खो जाता है। वह उस समय की कल्पना करता है जब स्थानेश्वर वर्धन–वंश के तेजस्वी राजा हर्षवर्धन की राजधानी थी। उस समय यह क्षेत्र अनेक मतों तथा धर्मों का केन्द्र माना जाता था। यह अत्यन्त समृद्ध तथा वैभव सम्पन्न नगर था। उन्हीं दिनों यहाँ इतने विस्तृत और सुन्दर घाटों का निर्माण हुआ होगा। इन्हीं दिनों सरोवर के तटों पर अनेक मन्दिर भी बनवाये गये होंगे। जिनमें से प्राचीन रामजी मन्दिर और हनुमान मन्दिर आज भी यहाँ विद्यमान हैं। यहाँ प्रतिदिन नगरवासी बहुत बड़ी संख्या में स्नान और पूजा–पाठ, प्रार्थनाओं, आरतियों, कथा–कीर्तन, मंत्र–गायन आदि से मुखरित हो जाता होगा। यहाँ के बड़े–बड़े पीपल और बड़ के वृक्षों की छाया में भक्त लोग ध्यान लगाकर बैठते होंगे।

विशेष –

1. **हर्षवर्धन के समय के स्थानेश्वर की कल्पना की गई है तथा उस युग को इस क्षेत्र का वैभवशाली युग माना गया है।**
2. हषवर्धन काल में यह अत्यन्त प्रसिद्ध धर्मक्षेत्र था।
3. भाषा तत्सम प्रधान, प्रवाहमयी तथा भावपूर्ण है।
4. शैली वर्णनात्मक है।
5. **आकर्षक बिम्ब विधान है।**

सरोवरों को जाने वाले मार्गों पर यात्रियों का समूह उमड़ता हुआ आगे बढ़ रहा है। एक अन्तहीन प्रवाह, जैसे कोई बाढ़ आ रही हो। कंधे से कंधा मलती भीड़। सरोवरों पर, सड़कों, पर घाटों पर, मैदानों में, जहां भी दृष्टि जाती है, यात्रियों की अपार भीड़ दिखायी पड़ती है। विशाल जन समूह। लहराता जन–सागर। गाड़ियों, बसों, ट्रैक्टर–ट्रालियों, कारों, ठेलों से तथापैदल बड़ी संख्या में यात्री सरोवर की ओर एक दिशा में, एक विश्वास लिए। श्रद्धा, भक्ति, विश्वास और आस्थाओं का मेला। अनास्था और अस्वीकृति के 'आधुनिक' युग में।

शब्दार्थ – सरोवर = तालाब। अपार = असीम।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। इस रिपोर्ताज में लेखक ने 16 फारवरी, सन् 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में लगे सूर्यग्रहण के मेले का आंखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या –लेखक ने 16 फरवरी को सूर्य ग्रहण के अवसर पर ब्रह्मसरोवर पर आने वाले श्रद्धालुओं का वर्णन करते हुए बताता है कि सरोवर की ओर ले जाने वाले समस्त मार्गों पर तीर्थ–यात्रियों का समूह उमड़ता हुआ आगे बढ़ रहा था। भीड़ इतनी अधिक थी मानो कभी समाप्त न होने वाला लोगों का ऐसा प्रवाह हो जैसे किसी नदी में बाढ़ आ गयी हो। आदमी से आदमी टकराते हुए आगे बढ़ रहे थे। जिधर देखो उधर ही मनुष्यों की भीड़ दिखाई देती थी। सरोवरों, सड़कों, घाटों, मैदानों आदि की तरफ जिधर भी देखते थे यात्रियों की भीड़ ही भीड़ दिखाई दे रही थी। इतना विशाल जन–समूह था जैसे कोई लहराता हुआ लोगों का सागर हो। लोग गाड़ियों, बसों, ट्रैक्टर–ट्रालियों, कारों, ठेलों में तथा पैदल बहुत बड़ी संख्या में सरोवर की दिशा में किसी एक विश्वास के सहारे बढ़ते जा रहे थे। लेखक को यह मेला केवल सूर्य–ग्रहण का मेला न लग कर इन समस्त यात्रियों की श्रद्धा, भक्ति, विश्वास और आस्था का मेला भी लग रहा था। आधुनिक भौतिकतावादी, अनास्था और परम्पराओं को नकारने वाले युग में लेखक को यह सब ऐसा लगता है जैसे आज भी भारतीय संस्कृति अपनी आस्था के कारण ही जीवित है।

विशेष –

1. सूर्य–ग्रहण के अवसर पर इतने अधिक लोगों का एकत्र होना इस भौतिकतावादी युग में हमारी आस्तिकता तथा अपनी परम्पराओं के प्रति आस्था का प्रतीक माना गया है।

2. भाषा तत्सम प्रधान, काव्यमयी, प्रवाहपूर्ण तथा सरस है।

3. शैली वर्णन प्रधान चित्रात्मक है।

4. चित्रण में भीड़ का दृश्य सजीव हो उठता है।

लेकिन कब, कहां रानियां और कहां सोना चांदी। लोग दो–तीन पैसे का सिक्का देकर महान् पुण्य कमा लेना चाहते हैं। मैं सोचता हूँ कि दूर–दूर से आने वाले ये भिक्षु , ये दान लेने वाले, दो–दो, तीन–तीन पैसों के सिक्के इकट्ठे करके कितना धन जमा कर सकेंगे और उससे कितने दिन उनका निर्वाह हो सकेगा। कब से इस महान् दान–पर्व की प्रतीक्षा में आँखें बिछाये बैठे थे।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। जिसमें लेखक ने कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा हाल प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने दान की महत्ता को बताया है।

व्याख्या – सूर्य ग्रहण के अवसर पर या किसी और शुभ अवसर पर दान देना महान् माना जाता है। यह हमारी भारतीय संस्कृति का अंग है। सूर्य ग्रहण के अवसर पर दान की बहुत ही महत्ता बताई गई है। पुराने समय में राजा लोग सूर्यग्रहण के अवसर पर अपनी रानियों तक को दान कर देते थे लेकिन आज के युग में यह सब कहाँ उपलब्ध हो सकता है। आज के युग में केवल एक–दो पैसा देने में ही महान् दान समझ लेते हैं। लम्बे समय से भिखारियों की आशा लगी रहती है कि सूर्यग्रहण के अवसर पर एक–एक, दो–दो सिक्के लेकर धन जमा करेंगे। लेकिन वे एक–एक जमा किया हुआ पैसा कितने समय तक चलायेंगे। भिखारियों की इस दयनीय स्थिति को देखकर ऐसा लगता है कि ये कितने समय से सूर्यग्रहण के महान् दान के लिए अपनी जीविका की आशा लगाए बैठे हैं।

विशेष –

1. **भारतीय मान्यताओं के अनुसार सूर्य ग्रहण के अवसर पर दान का महत्त्व दर्शाया गया है।**

2. भाषा सहज, सरल तथा प्रवाहमयी है।

3. शैली वर्णनात्मक है।

4. **सुन्दर बिम्ब–विधान है।**

भक्तजन दान–स्नान, जप–पूजा, भजन–कीर्तन करके सूर्य–देवता की संकट, मुक्ति और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति की कामना कर रहे हैं। उनका विश्वास है कि जो सूर्य भगवान् उनका जीवन–दाता है, वही आज संकट में है। राहु ने उसे ग्रस लिया हैं वे अपने सुकृत्यों, पुण्य–कर्मों एवं जप–दान से उसका संकटमोचन करने में तत्पर हैं राहु ने उसे ग्रस लिया है। वे अपने सुकृत्यों, पुण्य–कर्मों एवं जप–दान से उसका संकटमोचन करने में ततपर हैं। और लीजिए, सूर्य का संकटमोचन हो रहा है। थीरे–धीरे ग्रहण के बादल छंटने लगे हैं।

शब्दार्थ – संकट = मुसीबत। ग्रस लेना = निगल जाना।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। जिसमें लेखक ने कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा विवरण प्रस्तुत किया है। इन पंक्तियों में लेखक सूर्यग्रहण के अवसर पर दान–स्नान की महत्ता का वर्णन करता है।

व्याख्या – सायंकाल में सूर्यग्रहण के अवसर पर सारा वातावरण उस सर्मथ श्रद्धालुओं के भजन–कीर्तन से गूंज पड़ता है और सूर्य के आगे से बादल छंटने लगते हैं। लोगों का ऐसा विश्वास बना हुआ है कि जब सूर्यग्रहण लगा होता है तो उस समय किया गया जप, तप, दान, ध्यान, पूजा अर्चना से मनोवांछित कार्यों की पूर्ति होती है। लोगों का विश्वास है कि दान–पुण्य करके भगवान् आदित्य को राहु द्वारा ग्रसने से छुड़ा लेंगे। थोड़े देर के पश्चात् श्रद्धालु देखते हैं कि सूर्य अपने संकटों से मुक्त हो रहा है। सूर्य के आगे से बादल

छंट रहे हैं और ग्रहण समाप्त हो रहा है। उससे श्रद्धालुओं की आस्था, दृढ़–निश्चय, विश्वास और भी सुदृढ़ हो जाता है।

विशेष –

1. सूर्यग्रहण के अवसर पर और लोगों की दान–स्नान, जप–पूजा, भजन आदि की मनोवृत्ति का यथार्थ चित्रण किया गया है।
2. भाषा सरल, सहज एवं प्रवाहमयी है।
3. शैली वर्णनात्मक है।

सूर्य के स्वच्छ होने की सूचना मिलते ही पुनः लाखों श्रद्धालु एक साथ जल स्नान के लिए सरोवरों में प्रवेश कर रहे हैं। वे शुद्ध होकर अपने घरों को जाएंगे। पापों से मुक्त होकर, पुण्यों का संचय कर। लो, सुकृत्यों से समन्वित अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति से आश्वस्त, उल्लास और आनन्द से भरे वे अपने–अपने घरों को लौट भी चले हैं।

शब्दार्थ – श्रद्धालु = भक्त। मुक्त = छूट कर। संचय = इक्ट्ठा। मनोकामना = इच्छा।

प्रसंग– प्रस्तुत गद्यांश डॉ॰ जय भगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' से लिया गया है। जिसमें लेखक ने कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के अवसर पर लगे मेले का आँखों देखा हाल प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में सूर्य के ग्रहण मुक्त हो जाने की स्थिति का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – समय आगमन पर सूर्य ग्रहण की समाप्ति की घोषणा की जाती है। ग्रहण–समाप्ति की सूचना सुनते ही लाखों श्रद्धालु एक साथ जल में स्नान करने के लिए सरोवरों में दाखिल हो रहे हैं वे शुद्ध होकर अपने घरों को लौटेंगें । वे पापों से मुक्त होकर तथा पुण्यों को एकत्र कर अपने–अपने घरों को जाएंगे। वे पुण्य से युक्त होकर अपनी इच्छाओं की पूर्ति की तसल्ली लेकर तथा उल्लास एवं आनन्द से भरकर अपने–अपने घरों को जा रहे हैं।

विशेष –

1. लोगों के विश्वासों का वर्णन किया है कि उनकी अपनी परम्पराओं में पूर्ण आस्था है।
2. भाषा सहज, सरल व्यावहारिक है।
3. शैली वर्णन प्रधान है।

खण्ड ग : जयभगवान गोयल

साहित्यिक परिचय

डॉ जयभगवान गोयल का जन्म 30 सितम्बर, 1931 को यमुनानगर ज़िले छछरौली नामक ग्राम में लाला मंसाराम के घर हुआ था। आपने एम॰ ए॰ हिन्दी की परीक्षा पंजाब विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी उतीर्ण की और वहीं से 'गुरु प्रतापसूरज के काव्य–पक्ष का अध्ययन' विषय पर शोध–कार्य पी एच॰ डी॰ की उपाधि प्राप्त की। आप कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष, कला संकाय के अधिष्ठाता, प्रोफैसर एमरेटस रहने के पश्चात् हरियाणा शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष भी रहे हैं।

रचनाएं :

डॉ॰ गोयल ने हिन्दी जगत की बहुमूल्य सेवा की हैं उन्होंने गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध हिन्दी साहित्य के अनुसंधान द्वारा हिन्दी जगत् को एक नई दिशा दी है। मध्ययुगीन साहित्य का पुनर्मूल्यांकन करके हिन्दी साहित्य को एक नया आयाम दिया है। अब तक आपके मौलिक एवं सम्पादित सोलह ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं––'गुरुमुखी लिपि में हिन्दी साहित्य', 'वीर कवि दशमेश', गुरुगोबिन्द सिंह : विचार और दर्शन', 'मध्ययुगीन काव्य : नया मूल्याकंन', 'रीतिकाल का पुनर्मूल्यांकन', 'प्रसाद और उनका काव्य', 'गुरुशोभा', 'जगनामा गुरु गोबिन्द सिंह', संक्षिप्त गुरु प्रतापसूरज', गुरु विलास', 'गुरु नानक प्रकाश', 'वीर अमकर सिंह', 'गुरु गोबिन्द सिंह का वीर काव्य', 'संक्षिप्त गुरु प्रताप सूरज', 'खट्ठा, मिट्ठा, कड़वा', 'गुरु प्रताप सूरज के काव्य पक्ष का अध

ययन' आदि। इन रचनाओं के अतिरिक्त आपके अब तक लगभग अस्सी निबंध प्रकाशित हो चुके हैं। आप अपनी साहित्यिक रचनाओं के कारण शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्ध कमेटी, अमृतसर तथा हरियाणा प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा दो बार पुरस्कृत एवं सम्मानित हो चुके हैं। इन्हें भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी ज़ैल सिंह ने भी इनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए सम्मानित किया था।

साहित्यिक विशिष्टताएं :

निबंधकार एवं रिपोर्ताज लेखक के रूप में डॉ॰ गोयल का हिन्दी जगत् में महत्त्वपूर्ण स्थान है। आपके निबंध चिन्तन प्रधान, विचारोत्तेजक तथा नवीन भाव–बोध से सम्पन्न हैं। कबीर, गुरुनानक , गुरु गोबिन्द सिंह, शेख फरीद, गुरु तेग बहादुर आदिपर लिखे गए निबंधों में पर्याप्त मौलिकता है। भाव–गाम्भीर्य एवं विषय–प्रतिपादन की मौलिकता आपके निबंधों की महत्त्वपूर्ण विशेषताएं है। विषय–अनुरूपण में ज्ञान–गरिमा, अनुभव तथा नया दृष्टिकोण पद–पद पर झलकता है।

डॉ॰ गोयल के निबंधों में वैयक्तिकता भी झलकती है। लेखक के निजी'दृष्टिकोण, उसकी अभिरुचि तथा प्रवृतियों का लेखा–जोखा उनके निबंधों मे मिल जाता है। रोचकता, सरसता एवं हृदय–स्पर्शिता भी उनके निबंधों में मिलती है। कहीं–कहीं उनके निबंधों में व्यंग्यात्मकता का पुट भी रहता है। रिपोर्ताज – लेखक के रूप में डॉ॰ गोयल का नाम अग्रगण्य है। उन्होंने अपनी रिपोर्ताजों में समसामयिक घटनाओं को वास्तवकि रूप में प्रस्तुत किया है।

डॉ॰ जयभगवान गोयल प्रबुद्ध–चिन्तक हैं। उनकी रचनाएं चिन्तन–प्रधान, विचारोत्त्जक तथा नवीन भाव–बोध से सम्पृक्त होती हैं। उनकी भाषा, सहज, सरल एवं भावुकूल है। उनकी भाषा 'टक्साली' है जिसमें प्रत्येक शब्द नगीने की भान्ति जड़ा गया है।

डॉ॰ गोयल की भाषा सशक्त एवं प्रांजल है। भाषा भावों के अनुसार चलती है तथा भाव भाषा के साथ कदमों से कदम मिलाकर चलते हैं। भाषा में प्रवाह भी पद–पद पर झलकता है।

लेखक शब्दों के पारखी हैं। उन्होंने चुन–चुन कर शब्दों का चयन किया है। उनकी भाषा में संस्कृत, अंग्रेज़ी, अरबी–फ़ारसी व देशज शब्दों का सहज प्रयोग मिल जाता है। उनकी शब्द योजना द्रष्टव्य है–– सूर्य ग्रहण, कायाकल्प, गौरवशाली, दीपमाला, देदीप्यमान, जीर्णोद्वार, भव्यमूर्ति, शीर्षासन, सुकृत्य, उल्लास आदि संस्कृतनिष्ठ हैं तथा किलोमीटर, टैण्ट, लाइट, लाउडस्पीकर आदि अंग्रेज़ी के , महक बरामदा, जूलूस आदि उर्दू के हैं।

डॉ॰ गोयल का वाक्य–विन्यास सुगठित एवं व्याकरण सम्मत है। उनके वाक्य छोटे–छोटे होते हैं किन्तु अर्थ–गांभीर्य से पूर्ण होते हैं। यथा–''और लीजिए सूर्य का संकटमोचन हो रहा है। धीरे–धीरे ग्रहण के बाद छंटने लगे हैं। जल पर से काली छाया सिमटने लगी है और धूप गरमाने लगी है।''

डॉ॰ गोयल की भाषा में मुहावरों का भी सटीक प्रयोग हुआ है। 'कुरुक्षेत्र में सूर्य ग्रहण मेला' शीर्षक रिपोर्ताज में मुहावरों का सटीक प्रयोग द्रष्टव्य है ––आंखें बिछाना, गहमा–गहमी होना, संकट–मोचन होना, नीड़ों की ओर लौटाना आदि।

'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' शीर्षक रचना एक रिपोर्ताज है। रिपोर्ताज में समसामयिक समस्याओं का यथातथ्य चित्रण किया जाता है प्रस्तुत रिपोर्ताज के आधार पर डॉ॰ गोयल की शैली वर्णनात्मक है । लेखक न रोचक शैली में कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण का वर्णन किया है। यथा ––**''सूर्य–ग्रहण प्रारम्भ होने वाला है। ब्रह्मसरोवर एवं सन्निहित सरोवर पर स्नान करने के लिए लाखों की भीड़ जमा है।''** डॉ॰ गोयल ने प्रस्तुत रिपोर्ताज में सूर्यग्रहण के अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं––**''सरोवर के चारों ओर बिजली के हज़ारों बल्बों की बन्दनवारी टंगी है। लाल पत्थर के घाटों पर स्थिति खम्भें पर लगी श्वेत मर्करी लाइट सर्वेश्वर महादेव मन्दिर की जगमग दीप–सज्जा अत्यन्त मोहक दृश्य।''** डॉ॰ गोयल की शैली प्रवाहमयी है । इस शैली को सपाट–बयानी शैली भी कहा जा सकता है। प्रस्तुत रिपोर्ताज की निम्नलिखित पंक्तियों में प्रवाह द्रष्टव्य है–**''विशाल जन–समूह। जन सागर। गाड़ियों, बसों, ट्रैक्टर, ट्रालियों, कारों, ठेलों से तथा पैदल बड़ी संख्या में यात्री सरोवर की ओर एक दिशा में, एक विश्वास लिए।''**

संक्षेप में कहा जा सकता है कि डॉ॰ गोयल **प्रबुद्ध** समीक्षक होने के साथ–साथ उत्कृष्ट निबंधकार एवं रिपोर्ताज लेखक हैं।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' शीर्षक रिपोर्ताज को भारतीय संस्कृति की विविधता में एकता काप्रतीक क्यों कहा गया है ?

उत्तर डॉ॰ जयभगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' भारतीय संस्कृति की विविधता में एकता का प्रतीक है क्योंकि यह एक सामान्य मेला न होकर सम्पूर्ण भारतवर्ष से आए हुए तीर्थ यात्रियों का अद्‌भुत संगम है। उदाहरण के लिए सूर्यग्रहण से पूर्व शिवरात्रि पर सजे हुए सर्वेश्वर महादेव तथा ब्रह्मसरोवर की शोभा को देखकर एक गुजराती भाई का यह कथन ''देश के सभी तीर्थ –स्थान देखे, किन्तु इतना सुन्दर, सजा हुआ स्थान नहीं देखा।'' गौड़ीय मन्दिर में बंगालियों का आकर ठहरना। हरियाणा की महिलाओं की टोली के लोकगीत। तमिलनाडु के साधु गोपालगिरि का एक गहरे गड्‌ढ़े में गर्दन तक दबे रहना। ग्वालियर के बाबा लक्खगिरि का कीलों की शय्या पर लेटना। कबीरपंथी, निरंजनी, उदासी, सिक्ख, निर्मल, रविदास, बाल्मीकि पंथों के साधुओं का समूह तथा उनके अनुयायिओं तथा जयोतिपीठ एवं द्वारिका के शंकराचार्य का इस मेले में आना यही सिद्ध करता है कि कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण के मेले में विविध धर्मों, मतो, सम्प्रदायों, जातियों, प्रदेशों, भाषा–भाषियों का विचित्र संगम हो रहा है। इन सब के विभिन्न रूप, वेश–भूषा, खान–पान आदि हैं परन्तु जिस श्रद्धा, विश्वास, आस्था और भक्ति भावना के वशीभूत होकर वे यहाँ आए हैं वह एक हैं।

सन्निहित सरोवर से रेलवे स्टेशन और बिरला मन्दिर तक यात्रियों के दल के दल चले आ रहे हैं। नागा साधुओं के विशाल जुलूस के साथ उनके असंख्य भक्त जन भी हैं। स्थान–स्थान पर पूजा–पाठ, भजन–कीर्तन, दान–पुण्य हो रहे हैं। सभी मिल कर सूर्य देव की संकट मुक्ति और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए प्रार्थनाएं कर रहे हैं। इस प्रकार देश के विभिन्न भागों से आए हुए अपनी–अपनी वेश–भूषा में तथा अपनी–अपनी भाषा बोलते हुए लोग भारतीय सभ्यता ओर संस्कृति की विविधता में एकता का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए इस मेले को एक छोटे–से भारत का रूप दे देते हैं। ये सभी मत–मतान्त्रों में विभिन्नता रखते हुए भी भावनात्मक रूप से जिस सांस्कृतिक तंतु से बंध कर यहां एकत्र होकर सूर्य देव की मुक्ति के लिए सामूहिक रूप से प्रार्थना कर रहे हैं वह भारतीय संस्कृति की विविधता में एकता के कारण ही सम्भव हो सका है।

प्रश्न 2 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' में भारतीय आस्था एवं विश्वास की सुन्दर प्रस्तुति हुई है––इस कथन के आलोक में कुरुक्षेत्र के सूर्य ग्रहण मेले का वर्णन कीजिए ?

उत्तर डॉ॰ जयभगवान गोयल द्वारा रचित रिपोर्ताज 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' भारतीय आस्था एवं विश्वास को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली एक सशक्त रचना है। 16 फरवरी, 1980 ई॰ को सूर्य ग्रहण लगना था। इस अवसर के लिए कुरुक्षेत्र में दो महीने पहले से ही तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं क्योंकि यह माना जाता है कि सूर्यग्रहण के अवसर पर सभी देवता और तीर्थ यात्री कुरुक्षेत्र के ब्रह्मसरोवर में स्नान करने आते हैं। इसलिए जो लोग इस अवसर पर यहाँ आकर स्नान करके दान करते हैं, उन्हें विशेष पुण्य लाभ मिलता है। इस प्रकार पुण्य लाभ प्राप्त करने के लिए सूर्यग्रहण के अवसर पर लाखों श्रद्धालु यहां आते हैं। इस बार यहां पन्द्रह लाख तीर्थ–यात्रियों के आने की सम्भावना के अनुसार प्रबन्ध किए जा रहे हैं।

इस अवसर पर कुरुक्षेत्र में गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश , बगांल, हरियाणा, पंजाब आदि देश के विभिन्न प्रदेशों से अपनी–अपनी वेशभूषा पहने तथा विभिन्न भाषाएँ बोलते हुए लोग एकत्र हो जाते हैं। अनेक सम्प्रदायों, मतों तथा धर्मों के अनुयायी भी यहां अपने–अपने ध्वज फहराये दिखायी दे जाते हैं जिनमें जटाधारी बाबा, भस्माभूत अवधूत, नागा, तिलकध ाारी पण्डित, पंडे, निहंग, नाथ आदि के साथ–साथ सद् गृहस्थ, भिखारी आदि भी होते हैं। कहीं कबीर पंथी, निरंजनी, उदासी, निर्मले, रविदासी, बाल्मीकि, शंकराचार्य आदि अपने–अपने पंथ के आधार पर प्रवचन कर रहे हैं तो कहीं भजन–कीर्तन, पूजा–पाठ, लोकगीतों के स्वर आदि गूंज रहे हैं। स्थान–स्थान पर भण्डारे, लंगर, अन्नक्षेत्र चल रहे हैं। सन्निहित सरोवर से रेलवे स्टेशन और बिरला मन्दिर तक पापों से मुक्ति तथा पुण्यों का अर्जन करने वाले लोगों की भीड़ ही भीड़ दिखाई देती है।

आज के इस भौतिकतावादी युग में जब लोग इन धार्मिक आयोजनों को आडम्बर तथा ढकोसला मानने लगे हैं ब्रह्म सरोवर की ओर बढ़ता हुआ श्रद्धालुओं का विशाल जन समूह, कंधे से कंधा मलती भीड़ एक अन्तहीन प्रवाह, जैसे कोई बाढ़ आ रही हो यही सिद्ध करता है कि लोगों के मन में एक विश्वास है कि सूर्य–ग्रहण के अवसर पर ब्रह्मसरोवर में स्नान करने से विश्व के सभी तीर्थों में स्नान करने का फलदाता है। इसलिए लोग अपने सभी काम–काज भूलकर तथा अनेक कष्ट उठाकर भी इसी एक विश्वास के सहारे ब्रह्मसरोवर की दिशा में बढ़ते जा रहे हैं। सूर्यग्रहण लगने और सूर्य का संकट मोचन होने के बाद स्नान–दान करके पापों से मुक्त होकर तथा पुण्यों का संचय करके अपने घरों को लोटते हुए लोगों को देखकर यही कह सकते हैं कि कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण का मेला श्रद्धा, भक्ति, विश्वास और आस्थाओं का मेला है।

प्रश्न 3 रिपोर्ताज के तत्त्वों के आधार पर 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' की समीक्षा कीजिए ?

उत्तर डॉ॰ जयभगवान गोयल द्वारा रचित 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' रिपोर्ताज 16 फरवरी, सन् 1980 ई॰ को कुरुक्षेत्र में हुए सूर्यग्रहण का आंखों देखा विवरण प्रस्तुत करता है। इस रिपोर्ताज में इस गद्य विधा के सभी तत्त्व समाहित हो गए हैं, जिनका संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित प्रकार से हैं––

1. **सहजता** – रिपोर्ताज लेखक को समस्त घटनाक्रम सहज भाव से प्रस्तुत करना होता है। 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' की प्रस्तुति लेखक ने अत्यन्त सहज भाव से की है। उसने मेले की तैयारी से लेकर मेले में आने वाले श्रद्धालुओं, शिवरात्रि के अवसर पर सुसज्जित सर्वेश्वर महादेव के मन्दिर की शोभा, सूर्यग्रहण लगने तथा सूर्य की संकट–मुक्ति आदि का विवरण सहजता से दिया है।

2. **प्रत्यक्ष अनुभव** – रिपोर्ताज लेखक को घटनाक्रमों का प्रत्यक्ष तथा प्रामाणिक अनुभव प्रस्तुत करना होता है। इस रिपोर्ताज में डॉ॰ जयभगवान गोयल ने मेले की तैयारी की मेल से दो महीने पहले से ही देखना प्रारम्भ कर दिया था। इसलिए उन्होंने अड़तालीस किलोमीटर क्षेत्र में लग रहे मेले की प्रत्येक घटना का सजीव वर्णन किया है जैसे सर्वेश्वर महादेव का दीपमाला से सुशोभित वैभव, विभिन्न साधुओं द्वारा एक पैर पर खड़े होकर तपस्या करना, कीलों की शय्या पर लेटना, गर्दन तक गहरे गड्ढे में दबे रहना, भजन–कीर्तन, पूजा–पाठ, सूर्य ग्रहण लगना, सूर्य की मुक्ति, भिखारियों की भीड़ आदि।

3. **काल्पनिकता** – लेखक ने अपने रिपोर्ताज को सरसता प्रदान करने के लिए काल्पनिकता का भी आश्रय लिया है। सर्वेश्वर महादेव मन्दिर की जगमगाती छवि की अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर की पूर्णिमा के दिन की शोभा से तुलना करना। सम्राट् हर्षवर्धन के समय से स्थानेश्वर के वैभव की कल्पना, वैदिककाल में ब्रह्मसरोवर के आस–पास अनेक ऋषियों, मुनियों, वेदपाठियों तथा विद्यापीठों की कल्पना के द्वारा लेखक ने भारत के गौरवशाली अतीत को उजागर किया है।

4. **भाषा–शैली** – लेखक ने रिपोर्ताज की सरसता बनाए रखने के लिए सामन्य बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है जिसमें यथास्थान तत्सम, विदेशी तथा देशज शब्दों और मुहावरों का सुन्दर प्रयोग किया गया है। जैसे–कायाकल्प, देदीप्यमान, टैण्ट, लाइट, महक, बरामदा, आँखें बिछाना, नीड़ों की ओर लौटना। लेखक की शैली वर्णन प्रधान चित्रात्मक है। इनकी शैली में सरसता, रोचकता और गतिमयता विद्यमान है। जैसे–'विशाल जन–समूह। लहराता जन–सागर। गाड़ियों, बसों, ट्रैक्टर–ट्रालियों, कारों, ठेलों से तथा पैदल बड़ी संख्या में यात्री सरोवर की ओर एक दिशा में, एक विश्वास लिए।'

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रिपोर्ताज के तत्त्वों की दृष्टि से 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' एक सफल रचना है।

प्रश्न 4 जयभगवान गोयल की भाषा–शैली पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर – **1. भाषा** – डॉ॰ जयभगवान गोयल प्रबुद्ध चिन्तक हैं। उनकी रचनाएं चिन्तन–प्रधान , विचारोत्त्जक तथा नवीन भाव–बोध से सम्पृक्त होती हैं। उनकी भाषा सहज, सरल एवं भावानुकूल हैं उनकी भाषा 'टक्साली' है जिसमें प्रत्येक शब्द नगीने की भांति जड़ा गया है। उनकी भाषा में निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं––

(क) **सशक्त एवं प्रांजल भाषा** – डॉ॰ गोयल की भाषा सशक्त एवं प्रांजल है। भाषा भावों के अनुसार चलती है तथा भाव भाषा के साथ कदमों से कदम मिलाकर चलते हैं। भाषा में प्रवाह भी पद–पद पर झलकता है।

(ख) **शब्द चयन** – लेखक शब्दों के पारखी हैं। उन्होंने चुन–चुनकर शब्दों का चयन किया है। उनकी भाषा में संस्कृत, अंग्रेज़ी, अरबी–फारसी व देशज शब्दों का सहज प्रयोग मिल जाता है। उनकी शब्द योजना द्रष्टव्य है–

संस्कृत – सूर्यग्रहण, कायाकल्प, गौरवशाली, दीपमाला, देदीप्यमान, भव्य–मूर्ति, शीर्षासन, सुकृत्य, उल्लास आदि।

अंग्रेज़ी – किलोमीटर , टैण्ट, लाइट, लाउडस्पीकर आदि।

उर्दू – महक, बरामदा, जलूस आदि।

(ग) **वाक्य–विन्यास** – डॉ॰ गोयल का वाक्य–विन्यास सुसंगठित एवं व्याकरण सम्मत है। उनके वाक्य छोटे–छोटे होते हैं, किन्तु अर्थ–गांभीर्य से पूर्ण होते हैं। यथा– ''और लीजिए सूर्य का संकटमोचन हो रहा है। धीरे–धीरे ग्रहण के बादल छंटने लगे हैं। जल पर से काली छाया सिमटने लगी है और धूप गरमाने लगी है।''

(घ) **मुहावरों का प्रयोग** – डॉ॰ गोयल की भाषा में मुहावरों का भी सटीक प्रयोग हुआ है। 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' शीर्षक रिपोर्ताज में मुहावरों का सटीक प्रयोग द्रष्टव्य है––आँखें बिछाना, गहमा–गहमी होना , नीड़ों की ओर लौटाना आदि।

2. **शैली** – 'कुरुक्षेत्र में सूर्य–ग्रहण मेला' शीर्षक रचना एक रिपोर्ताज है। रिपोर्ताज में समसामयिक समस्याओं का यथातथ्य चित्रण किया गया है। रिपोर्ताज की शैली आकर्षक एवं मन को झरझोरने वाली होती है। रिपोर्ताज में शैली लालित्यपूर्ण होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रस्तुत रिपोर्ताज के आधार डॉ॰ गोयल की शैली की निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं–

(क) **वर्णन की रोचकता** – रिपोर्ताज की शैली वर्णनात्मक होती है। लेखक ने रोचक शैली में कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण का वर्णन किया है। यथा–**''सूर्य ग्रहण प्रारम्भ होने वाला है। ब्रह्मसरोवर एवं सन्निहित सरोवर पर स्नान करने के लिए लाखों की भीड़ जमा है।''**

(ख) **चित्रात्मकता** – चित्रात्मकता भी डॉ॰ गोयल की शैली की एक प्रमुख विशेषता है। उन्होंने प्रस्तुत रिपोर्ताज में सूर्यग्रहण के अनेक चित्र प्रस्तुत किये हैं–**''सरोवर के चारो ओर बिजली के हज़ारों बल्बों की वन्दनवारी टंगी है। लाल पत्थर के घाटों पर स्थित खम्भों पर लगी श्वेत मर्करी लाइट, सर्वेश्वर महादेव मन्दिर की जगमग दीप सज्जा,अत्यन्त मोहक दृश्य।''**

(ग) **व्यक्तित्व की छाप**– डॉ॰ गोयल सूक्ष्म पर्यवेक्षक हैं। उन्होंने प्रत्येक वस्तु का सूक्ष्मता से चित्रण किया है। सूर्यग्रहण का मेला देखते हुए लेखक कल्पना करता है––**''फिर मैं कल्पना करता हूँ उस समय की, जब स्थानेश्वर वद्धन वंश के प्रताती राजा हर्षवर्धन की राजधानी थी। अनेक मतों, धर्मों का केन्द्र। अत्यन्त वैभवशाली।''**

(घ) **प्रवाहमयी शैली** – डॉ॰ गोयल की शैली प्रवाहमयी है। इस शैली को सपाट–बयानी शैली भी कहा जा सकता है। प्रस्तुत रिपोर्ताज की निम्नलिखित पंक्तियों में प्रवाह द्रष्टव्य है– **''विशाल जन–समूह। लहराता जन–सागर। गाड़ियों, बसों, ट्रैक्टर–ट्रालियों, कारों, ठेलों से तथा पैदल बड़ी संख्या में यात्री सरोवर की ओर एक दिशा में, एक विश्वास लिए।''**

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ॰ गोयल की भाषा–शैली रोचक, भावपूर्ण एवं प्रवाहमयी है।

अध्याय–9
मलयज की डायरी

मलयज

खण्ड क : पाठ सार

श्री मलयज के 3 मई, 1979 से 17 सितम्बर, 1980 तक डायरी में लिखे व्यक्तिगत बयौरे समय के परिवर्तनशील रंगों में आने वाले बदलाव को पाठक के समक्ष प्रकट करने में पूर्ण रूप से समर्थ हैं। इन में लेखक के मन पर पड़ने वाले भिन्न प्रभाव साफ़–साफ़ दिखाई देते हैं। लेखक की डायरी में लेखक का पूरा व्यक्तित्व छिपा हुआ है। तिथि के अनुसार मलयज की डायरी के पृष्ठों का सार निम्नलिखित पंक्तियों में प्रस्तुत है–

3 मई, 1979

लेखक ने दफ़्तर के कमरे में तीसरे पहर की तेज़ गर्मी मे स्वयं को असहज अनुभव किया है। उसे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा। वह सोचता है कि उसके पास यदि स॰ के खिलाफ़ सोचने की आज़ादी उस के पास भी होनी चाहिए।

18 मई, 1979

लेखक के विवाह को दस वर्ष बीत गए हैं पर लेखक इस बीते हुए समय के बारे में सोचने मात्र से भयभीत है। उसने इस समय में जीवन से दो बच्चों के अतिरिक्त कुछ नहीं पाया। उसकी पत्नी की इच्छाएं तो पूरी नहीं हो पाई। धन का अभाव उसके रास्ते में रोड़े अटकाता रहा। जीवन के लिए आवश्यक न्यूनतम कार्यक्रम पर टिक कर वह जीवन की नौका ठीक प्रकार से नहीं चला पा रहा। आने वाला समय इस बीतते समय के अभाव का ब्योरा मांगेगा और वह उस का कोई उत्तर नहीं दे पाएगा। संवेदनशील व्यक्ति अपनी त्रासदी का स्वयं कारण बन जाताहै।

19 मई, 1979

रामशेर जी फ़रीदाबाद अपनी बेटी रजनीबाला के घर आए हुए थे। उन्हें लेखक के घर आना था, पर वे अपनी ममेरी बहन मुन्नी से मिलने चले गए थे। मुन्नी को शायद फालिज मार गया था। लेखक को इस विषय में रजनी बाला के पति के ड्राइवर से पता लगा था। मुन्नी को अपने ताऊ जी शमशेर से बहुत लगाव था वह उनसे मिलना चाहती थी। शमशेर को मुन्नी की बीमारी के विषय में 'पहाड़ी' से पता लगा था। शमशेर ने इलाहाबाद में तीन भाषण दिए थे जिन्हें काफ़ी सराहा गया था।

12 जून, 1979

निर्मल के साथ एक–दो चक्कर शास्त्री भवन में श्रीमती कान्ति देव के कमरे के लगाए। कान्ति देव इलाहाबाद की थी और निर्मल की परिचित थी। वह सूचना मंत्रालय में अंडर सैक्रेटरी थी। निर्मल के साथ आए अज्ञेय से भी लेखक मिला था। निर्मल दूधनाथ के उन्मुक्त आचरण से तंग और पीड़ित थी। दूधनाथ उसे जलील करते थे। पर वह मुंह पर सदापति की प्रशंसा ही करती थी। पति की प्रसिद्धि के प्रकाश में गर्व महसूस करने की चेष्टा अजीब लगती थी। निर्मल में बहन–बेटी के अधिकार पाने की इच्छा तो थी पर सुख–दुःख का भाव सांझा करने की कोई इच्छा प्रतीत नहीं होती थी।

12 जून, 1979

शमशेर जी मुन्नी को साथ लेकर निर्मल से मिलने आए थे। मुन्नी अभी भी बीमार थी। उसके चेहरे के हिस्से पर फालिज़ का असर दिखाई देता था। जुबान ठीक से नहीं चलती थी। लेखक ने उसे पहचान लिया था। शमशेर की दाढ़ी बढ़ी हुई थी जो उनके व्यक्तित्व पर अजनबी लगती थी। उनकी दाढ़ी उन पर अनमेल विवाह की तरह लगती थी।

9 जुलाई, 1979

लेखक का हृदय परेशान था। उसके भीतर कुछ टूट रहा था। अपने भीतर को बचाकर रखना, मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा मान और अभिमान है। समय के साथ न बदलने का प्रयत्न एक धोखा है। अपने को खोकर कुछ पाया जा सकता है।—जीवित रहा जा सकता है। जो ऐसा नहीं करता वह आदर्शवादी है, भावुक है, अन्धा है। हर अच्छा इन्सान आत्केन्द्रित होता है। बीता हुआ समय व्यक्ति के चरित्र को बनाता है। वही उसे नार्मल या एबनार्मल बनाता है। परिवार का वातावरण उसे गहरा प्रभावित करता है। परिवार में केवल यातना, तनाव दुःख और करुणा थी। दमित, कुण्ठित, सेंटिमेंटल कुशाग्र बुद्धि और तीव्र संवेदनशीलता थी। इनमें बाहर से आकर कोई भी पनप नहीं सकता, नार्मल नहीं रह सकता। लेखक का मानना है कि अपने दस वर्ष के वैवाहिक जीवन में फ़ितरत की अवज्ञा कर केवल रूह पर जोर दिया। वह इस दुविधा में फंसा हुआ महसूस करता है कि वह किसे बचाएं—अपने आप को या अपने परिवार को।

22 सितम्बर, 1979

लेखक परेशान था । उसका अपनी पत्नी से तालमेल ठीक से नहीं बैठ पा रहा था। उसकी पत्नी की दृष्टि में मां, बाबूजी, मुन्ना, बहनें सब व्यर्थ सिद्ध हो चुके थे। लेखक पर से उसका एक चौथाई विश्वास समाप्त हो चुका था। परिवार के अन्य सदस्यों की कमियों को देखकर लेखक के मन में करुणा का भाव उत्पन्न होता था। लेकिन उस के अन्दर नफ़रत और गुस्सा जगता था। लेखक और उसकी पत्नी दोनों ही आदर्शवादी थे जो सदा दूसरों को उत्कृष्ट कार्य करते देखने की कामना करते थे। वे उन से सदाचरण की उम्मीद ही करते थे। लेखक को ऐसा प्रतीत होने लगा था कि उसके मुँह पर स्थाई रूप से ताला जड़ दिया गया है। वह अब बोल कर भावों की अभिव्यक्ति नहीं कर सकता था। उस सदा पत्नी की आलोचकीय निगाह जमी हुई प्रतीत होती थी।

8 अक्तूबर, 1979

लेखक की पत्नी का स्वभाव निरन्तर बदलता जा रहा था। वह 'दूसरी' होती जा रही थी। उस के व्यवहार और बर्ताव में एक ख़ामोशी थी, ठहराव था। उसकी अपने पर पकड़ मज़बूत होती जा रही थी। उसकी चिड़चिड़ाहट और बेबाकपन बढ़ गया था। वह लेखक से पूरी तरह हताश हो चुकी थी। उसने साफ़—साफ़ कह दिया था कि अब उसे अपनी पत्नी का प्यार नहीं मिलेगा। इन शब्दों में लेखक की पत्नी के प्रति पूरी हताशा थी। उसे लगता है कि शायद वह अपनी पत्नी को पूरा समय नहीं दे पाया था। वह उसे मकान, गहने, बैंक—बैलेंस, सुरक्षा नहीं दे पाया था। सब सम्बन्ध इस कसौटी पर नकली सिद्ध हो गए थे। पति—पत्नी में इमोशन का स्थान ऐंक्जायटी ने ले लिया था। ऐंक्जायटी छिपकर भीतर से तोड़ती है। इमोशन बाहर प्रकट होता है इसलिए वह पवित्र है, मासूम है। लेखक मानता है कि वह अपने को पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं दे सका था। ऐसी स्थिति में वह अभागा था।

25 जुलाई, 1980

लेखक का व्यक्तित्व बदल रहा था। वह स्वयं को डरा—डरा सा महसूस करता था। उसके मन में तरह—तरह के डर समाए हुए थे — बुरी बीमारियों से पीड़ित होने का डर, बाहर गए आदमी के घर लौटने में हुई देरी का डर, दफ़्तर जाने का डर, घर लौटने का डर। उसकी नसों में धड़धड़ की आवाज गूंजती थी, वह पत्ते की तरह काँपता था। जब वह दफ़्तर से घर लौटता था तो मां के कमरे के पास पहुँचते—पहुँचते उस के दिल की धकधकी बढ़ जाती थी। वह अर्द्ध बेहोशी में डूबी माँ के कमरे में प्रवेश नहीं कर पाता था। मां को लकवा मार गया था। वह कुछ बोलती नहीं थी। नींद की दवाई के प्रभाव में शान्त पड़ी रहती थी। होश आने पर कराहती—चिल्लाती थी। वह बोल नहीं पाती थी, पहचानती नहीं थी।

11 सितम्बर, 1980

माँ को अर्द्ध बेहोशी की अवस्था में बिस्तर पर पड़े—पड़े बेड सोर हो गया था —— पीठ और नितम्बों पर कई जगह चमड़ी छिल गई थी। मुन्ना उस पर दवाई लगाया करता था। लेखक का मानना था कि मुन्ना में भीतरी दृढ़ता थी : वह डरती नहीं था। उसे लगता था कि मुन्ना ही हर काम को व्यवस्थित कर सकने का साहस रखता था। माँ कष्ट उठा रही थी——शायद उसके कष्ट आत्मा के स्तर पर थे। देह के स्तरों का कष्ट तो वह कब का पार कर चुकी थी। वह सुनती नहीं थी, उत्तर नहीं देती थी। उसकी आँखें खुलती बन्द होती थीं। मुँह खुलता और बन्द होता था। वह हड्डियों का ढांचा—मात्र रह गई थी। उसके मुँह के नीचे का हिस्सा सिकुड़ गया

था पर सत्तर वर्ष की आयु हो जाने पर भी उसके बाल के बाल स्याह काले थे––किसी पैंतीस–चालिस की स्त्री के समान। अब उसकी कलाइयाँ बिल्कुल सूख गई थी। चमड़ी झूरियों से भर गई थीं।

17 सितम्बर, 1980

लेखक की माँ की बस साँसे ही शेष बच गई थीं। रात को लेखक उसकी चारपाई की पटड़ी पर बैठ उसे देखता रहा था। उसे तेज़ बुखार था और वह कठिनाई से सांस ले पा रही थी। जब वह कमरे से गया तो उसके चार घण्टे बाद उसे सरोज ने जगाया। मां मर चुकी थी। मुन्ना और बाबू जी ने उसके मृतक शरीर को फर्श पर लिटा दिया था। आस–पड़ोस में मौत की सूचना दी गई थी। लेखक ने शमशेर को इस बारे में बताया तो उन्होंने केवल यही कहा कि मां को अपने कष्टों से मुक्ति मिल गई। मां की मौत के बाद बाबू जी कुछ मुक्त महसूस करने लगे थे। मां का कमरा अब उनका कमरा था। उन्होंने उस कमरे को सजाने–संवारने की योजनाएं बना ली थीं। मां के शव को कंधों की बजाय शव वाहन में शमशान घाट पहुँचा दिया गया।

खण्ड ख : व्याख्या

तब कहाँ वह 'न्यूनतम कार्यक्रम' जहाँ पैर टेककर मैं अपनी गृहस्थी की नांव पर सवार हो सकूँ और ज़िंदगी के सागर में खो सकूं ? ––वे सांसें कहां हैं जो उस नाव के पालों में हवा भर सकें ?

यह दर्द क्यों है ? क्या इसलिए कि जो मेरे साथ हुआ उसकी नियति को मैं अभी भी पूरी तरह स्वीकार नहीं कर सका हूँ ? क्या इसलिए कि जो कुछ हुआ उसे न होने देने में मैं अपना ज़रूरी कर्म नहीं कर पाया ? मैं अपने जीवन के एक अत्यन्त नाजुक क्षण में उसका निर्णायक न रहकर महज द्रष्टा बना रह गया ––अपने को नष्ट होने देने की प्रक्रिया का द्रष्टा ?

क्या यही मेरी नियति, मेरी डेस्टिनी थी ? और क्या मैं इसे बदल नहीं सकता था ?

मेरे साथ बहुत बुनियादी रूप से ––अस्तित्व के गहनतम धरातल पर– कुछ गलत घटित हो गया है और मैं उस ग़लत का सही नहीं बना सकता, न उसे दरगुजर कर सकता हूँ, हाँ गाहे–ब–गाहे अपनी आंखों में धूल जरूर झोंक सकता हूँ।

शब्दार्थ – पाल = नाव के ऊपर लगे हवा का सहारा लेने वाले पर्दे। नाजुक = कमजोर। निर्णायक = निर्णय करने वाले। डिस्टिनी = लक्ष्य। गाहे–ब–गाहे = यदाकदा।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश 'मलयज की डायरी' से अवतरित किया है जिसे हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' में संकलित किया गया है। मलयज अपने पारिवारिक जीवन से हताश है। उसे अपने दस वर्ष के वैवाहिक जीवन में दो बच्चों के अतिरिक्त ओर कोई सुख प्राप्त नहीं हुआ। वह स्वयं को विवाह रूपी वेदी पर ठीक प्रकार से स्थापित नहीं कर पाया था।

व्याख्या – लेखक हताशा– निराशा में डूबा हुआ है। वह आर्थिक अभावों से घिरा हुआ है। उसकी पत्नी की दृष्टि में भौतिकतावाद महत्त्वपूर्ण है। वह यथार्थवादिनी है। लेखक नहीं समझ पा रहा कि उसे प्रसन्नता प्रदान करने के लिए भौतिक सुखों की व्यवस्था किस प्रकार करे। उसे पता नहीं कि वह न्यूनतम कार्यक्रम कौन–सा है। जिस पर टिक कर वह अपनी गृहस्थी की नाव को लेकर ज़िन्दगी के सागर में खो सके। वह अपनी उन सांसों को नहीं पहचानता जो जीवन रूपी नौका की पालों में हवा की तरह भर सके। पति–पत्नी आपसी लय भंग होने से उत्पन्न दुःख का कारण क्या है ? लेखक के साथ जो दर्दपूर्ण भाव जुड़ा है वह उसकी नियति को अब तक स्वीकार नहीं कर पाया। शायद लेखक उसके लिए ज़रूरी कर्म नहीं कर पाया था। जीवन के उस अति कोमल क्षण में वह दर्शक बन कर रह गया था। उसमें सक्रिय–भूमिका नहीं निबाह पाया था। वह क्षण तो उसके अपने नष्ट होने की प्रक्रिया का आरम्भ था––अत्यन्त दुःखदायी और विनाशकारी था। लेखक जानना चाहता है कि क्या वह अपने भाग्य को बदल नहीं सकता था। उसे लगता है कि बुनियादी आधार पर उसके साथ कुछ गलत घटित हो चुका है जिसने उसके अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। वह न तो उसे गलत सिद्ध कर सकता है और न स्वीकार कर सकता है। बस, वह स्वयं को धोखा दे कर उस सम्य से आँखें चुरा सकता है।

विशेष –

1. लेखक का कोमल हृदय भावना के सागर में डूब–उतरा रहा है। कथन में मार्मिकता और पीड़ा भरी है। वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ की स्थिति में है।
2. भावात्मक शैली की प्रधानता है।
3. प्रश्न शैली ने नाटकीयता की सृष्टि की है।
4. तत्सम शब्दावली के साथ अंग्रेज़ी और उर्दू शब्दों का सहज प्रयोग किया गया है।
5. मुहावरों का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

इस क्षण के गुजर जाने के बाद आने वाला कल–कई कलों का कल–मुझसे इस क्षण का 'तथ्य' मांगेगा, तथ्य के ब्योरे की डिटेल मांगेगा, इस क्षण का दृश्यपट.....पर मैं उस 'तथ्य' को अंकित करने की स्फुर्ति नहीं महसूस करता। वह हमड्रम है। वह चाकू जैसा तेज़ है और उस पर ताज़े खून के निशान हैं।

तथ्य में खून के निशान जब सूखकर जर्द पड़ जाएंगे तब, तब मैं खून के बारे में लिखूंगा।

कभी कभी सोचता हूँ, क्या मेरे अन्दर की कोई ज्तंहपब थ्सूं है ?

संवेदनशीलता खुद एक ज्तंहपब थ्सूं है जो इससे बचे हुए हैं वे सुखी हैं और यह सुख उस विदूषक का सुख है जो आईने में अपना चेहरा देखता है। सर्कस में उतरने से पहले।

शब्दार्थ –**गुजर जाना** = बीत जाना, चला जाना। स्फुर्ति = चैतन्यता। जर्द पड़ना = पीला होना। विदूषक = जोकर।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा (भाग–दो)' में संकलित 'मलयज की डायरी' से लिया गया है। लेखक बहुत निराश है। उसका परिवार टूट रहा है। उसकी पत्नी भौतिकवादी यथार्थ से जुड़ी हुई है पर लेखक के पास धन का बहुत अभाव हैं। वह उसकी सभी इच्छाएं पूरी नहीं कर सकता।

व्याख्या – पति–पत्नी के बीच क्लेश और टूटन के क्षण बहुत दुःखदायी हैं। लेखक को लगता है कि आने वाला समय उससे इन कष्ट भरे क्षणों का उत्तर मांगेगा। वह सभी सच्चाइयों को विस्तार से जानना चहेगा। उसे एक–एक बात प्रकट करनी होगीपर लेखक कमज़ोर है, भावुक है, हताश है। वह नहीं जानता कि वह इसे किस प्रकार सह पायेगा। उसमें इतनी शक्ति और साहस नहीं कि वह जीवन के तथ्यों को अंकित कर सके। वह हमड्रम है। वह वह उस चाकू जैसा है। जिस पर ताज़े खून के निशान लगे हुए हैं। उसी के व्यवहार और स्वभाव के कारण उसके बसाये परिवार में टूटन दिखाई देने लगी है। लेखक सोचता है कि जब चाकू पर जमे खून के निशान सूख कर ज़र्द पड़ जाएंगे तब वह उस खून के बारे में लिखेगा। उसे लगता है कि उसमें कोई त्रासद कभी ज्तंहपब थ्सूं है क्योंकि वह संवेदशील है संवेदनशीलता अपने आप में ही ज्तंहपब थ्सूं है। जिन लोगों में संवेदनशीलता नहीं होती वही सुखी रहते हैं। यह सुख उस विदूषक का सुख है जो दर्पण में अपना चेहरा तब देखता है जब वह सर्कस में उतरने वाला हो। संवेदनशील व्यक्ति स्वयं को दुःख दे कर दूसरों के लिए सुख बटोरने की चेष्ट करता है । वह अपने दुःख को प्रकट नहीं करता पर दूसरों को ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपार प्रसन्न है।

विशेष –

1. संवेदनशील स्वभाव की ओर संकेत करते हुए प्रकट किया है कि ऐसा व्यक्ति दूसरों को सुखी करने की चेष्टा में स्वयं को भूल जाता है और जीवन के हर डगर पर दुःख उठाता है।
2. भावात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है।
3. तत्सम शब्दावली के साथ 'ज़र्द', 'खून', 'महसूस', 'आइने', 'सर्कस', ष्ज्तंहपब थ्सूंष, 'डिटेल', 'हमड्रम' जैसे विदेशी शब्दावली का सहज अनुकरणीय प्रयोग है।
4. संवेदनशील व्यक्ति की सर्कस के विदूषक से तुलना प्रभावशाली है।

अपने को बचाए रखना मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा मान और अभिमान है।
समय के साथ न छीजना, न दूषित होना, न अपवित्र होना जुर्म है, अपनी ज़िंदगी के साथ छल है।
अपने को खोकर, नष्ट कर ही कुछ पाया जा सकता है––पाया नहीं तो कम से कम जीवित रहा जा सकता है।
नष्ट होना पकना है। समय का आदेश है कि तुम पको। जो इस आदेश का उल्लंघन करता है वह बाहर से चाहे बच जाए भीतर से नष्ट हो जाता है।
मैंने अपने को बचाने की गफ़लत की। बहुत बड़ा अपराध ।
पकना, टूटना, टुकडे टुकड़े होना है। मैं अपने टुकड़े–टुकड़े होने से बचाता रहा। मैं कच्चा रहा आदर्शवादी, भावुक, अन्धा।
मैंने सिर्फ़ अपने को देखा। मैं आत्मकेन्द्रित रहा। हर कच्चा इन्सान आत्मकेन्द्रित है।

शब्दार्थ – दूषित = गंदा। छल = धोखा। उल्लंघन = नकार देना। गफ़लत = चूक। आत्मकेन्द्रित = स्वयं में खोया।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' में संकलित 'मलयज की डायरी' से लिया गया है। जिनमें लेखक ने अपने जीवन से जुड़ी पीड़ा को वाणी प्रदान की है। जीवन में आदर्शवादी बनकर भावुकता का शिकार होना अपने आप में ही एक पाप है, अपराध हैं मानव–जीवन में पीड़ाओं का कारण यही है।

व्याख्या – मलयज अपनी डायरी में लिखता है कि हर व्यक्ति अपने जीवन की रक्षा करना चाहता है। वह मृत्यु के चंगुल से बचना चाहता है। अपने आप को बचाए रखना मनुष्य के जीवन का सबसे बड़ा मान और अभिमान है। समय के व्यतीत होने के साथ न मिटना और न दूषित होना अपराध है । हर व्यक्ति समय के साथ अपवित्र होता है। जो ऐसा नहीं करता वह अपने साथ धोखा करता है। अपने आप को खो कर ही सुखों की प्राप्ति हो सकती है। जिसमें अपने आप को नष्ट करने की क्षमता नहीं है वह जीवन से कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। अपने आप को खोकर, नष्ट करके जीवन तो जिया जा सकता । समय के बीतने के साथ हर वस्तु पकती है और पक कर नष्ट होती है। जो पकता नहीं, नष्ट नहीं होता वह भीतर से अवश्य नष्ट हो जाता है––नहर से चाहे वह बचा रहे। स्वयं को बचा कर रखने का प्रयत्न एक धोखा है। यह अपने आप में अपराध है। पकने का अर्थ टूट जाना है––टुकड़े–टुकड़े हो जाना है। जो अपने आप को टुकड़े–टुकड़े होने से बचाने की चेष्टा करता है, वह आदर्शवादी है, भावुक है, अन्धा हैं और स्वयं को धोखा देने वाला है। लेखक स्पष्ट रूप से स्वीकार करता है कि उसने केवल अपने आप को महत्त्व दिया। वह आत्म केन्द्रित रहा। हर कच्चा और कमज़ोर इन्सान आत्म केन्द्रित ही होता है।

विशेष –

1. लेखक ने भावात्मक शैली का प्रयोग करते हुए स्वयं को कमज़ोर व्यक्तित्व का स्वामी माना है। उसने अपने आप को आत्म केन्द्रित घोषित किया है जो समय से भयभीत रहता है।
2. तत्सम और तद्भव शब्दावली का आकर्षक प्रयोग है।
3. असमापिकाओं के प्रयोग के द्वारा लेखन में नाटकीयता की सृष्टि की गई है। जिसमें विशेष आकर्षण छिपा हुआ है।
4. लेखक का जीवन–दर्शन स्पष्ट हुआ है।
5. आकर्षक भाव–चित्रांकन है।

क्या शब्द मेरे ज़्यादा निकट हैं, ज़्यादा सजीव हैं मेरे हाथ में , मैं उनके निरन्तर सम्पर्क में हूँ ? और वह नहीं, और वह यह जानती है ? और उसे मेरे शब्दों से––जो चीज़ मेरे ज़्यादा करीब है––उससे डर लगता है ? क्या मेरे शब्द उसे चोट पहुँचाते हैं ? क्या उसमें शब्दों से चोट लग सकने की आवश्यकता संवेदनीयता है ? क्या उसने मुझे, मेरे अस्तित्व को शब्दों के साथ तदाकार कर दिया है ?

आखिर तुम्हारे मूल्य किसी और के लिए वरेण्य क्यों हो ? तुम अगर भावुक संवेदनशील हो तो दूसरा भी वैसा क्यों हो ?

तुमने उसे हमेशा हाशिए पर रखा। शुरू से, क्योंकि वह तुम्हारी मुख्य जीवन–संवेदन धारा के साथ जुड़ने

की पात्रता न रखती थी, क्या इसीलिए वह क्रमशः बीमार होती गई ? क्या वह बीमार है या स्वयं तुम ? हो सकता है वह 'नार्मल' हो और तुम स्वयं 'एबनार्मल' ?

शब्दार्थ – निरंतर = लगातार। वरेण्य = वरण करने योग्य। पात्रता = योग्यता। हाशिए पर रखना = किनारे रखना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' में संकलित 'मलयज की डायरी' से लिया गया है। लेखक की अपनी पत्नी के साथ ठीक प्रकार निभ नहीं पाई थी। पत्नी यथार्थवादी थी और पति आर्दशवादी। दोनों की विचारधारा में सीधा टकराव था। संवेदनशील लेखक के लिए शब्दों का महत्त्व था तो उसकी पत्नी के लिए आर्थिक सुखों का।

व्याख्या – लेखक स्वयं अपने से प्रश्न करता है कि क्या शब्द उसके अधिक निकट है या उसके कर्म करने वाले हाथ अधिक सजीव हैं ? लेखक की पत्नी उसके कोरे शब्दों से , झूठी–कोरी आदर्शवादिता से डरती है। वह उसे पसन्द नहीं करती। वह उन्हें स्वीकार नहीं करना चाहती। वह जानती है कि उस के पति के लिए शब्दों का अधिक महत्त्व है क्योंकि कोरे आदर्शों के महल खड़ा करना चाहता हैं उसके शब्द उसे चोट पहुंचाते हैं। उसके लिए लेखक और उसके आदर्शवादी शब्द एक ही रूप हैं, एक ही आकार हैं। लेखक का अपना अस्तित्व कोई नहीं है क्योंकि वह यथार्थवादी नहीं है लेखक स्वयं से कहता है कि उसके जीवन मूल्य केवल उसी के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। यदि वह संवेदनशील है तो भला कोई और उसके लिए संवेदनशील क्यों बने। उसने अपनी पत्नी को महत्त्व नहीं दिया। उसने अपनी संवेदनशीलता को महत्त्व दिया इसीलिए उसका मन इससे दूर होता गया––वह बीमार होती गई। लेखक स्वयं से प्रश्न पूछता है कि पति–पत्नी दोनों में से बीमार कौन है ? शायद उसकी पत्नी नार्मल है और लेखक स्वयं एबनार्मल हो। वह निर्णय नहीं कर पाता कि वास्तविकता क्या है ? सहज कौन है ?

विशेष –

1. लेखक अपने और अपनी पत्नी के बीच संघर्ष का मूल कारण नहीं समझ पा रहा। उसे नहीं पता कि दोनों के बीच झगड़े का कारण कौन है ?
2. भावात्मक शैली की प्रधानता है।
3. लेखक का चिन्तन भावात्मक स्तर पर अत्यन्त मार्मिक है।
4. भावानुकूल तत्सम–तद्भव शब्दावली का समन्वित प्रयोग है।
5. आत्म कथन का सजीव–स्वरूप है।

तुम्हारा इतिहास तुम्हें एबनार्मल बनाता है। तुम्हारी फेमिली एबनार्मेलिटी से भरी पड़ी है। तुम एक अभिशप्त परिवार के हो। तुम्हारे परिवार में सिर्फ यातना, तनाव, दुख, करूणा है। कुंठा, अवरूद्ध विकास, रुग्ण भावुकता। तुम्हारे परिवार की जाति यहूदी है––'सफर' करने वाली, दमित, कुंठित, सेंटिमेंटल यद्यपि कुशाग्र बुद्धि औत तीव्र संवेदनशील।

इसमें बाहर से आकर कोई फिट नहीं हो सकता। कोई पनप नहीं सकता। कोई स्वस्थ नहीं रह सकता। कोई भी 'नार्मल' नहीं रह सकता।

मैंने ही उसे मिटाया है, उसे कमज़ोर बनाया है, एबनार्मल बनाया है––

शब्दार्थ – एबनार्मल = असंगत। अभिशप्त = शापग्रस्त। यातना = शारीरिक कष्ट। कुशाग्र = तेज। पनपना = विकास करना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' में संकलित 'मलयज की डायरी' से लिया गया है। लेखक और उसकी पत्नी में परस्पर निभ नहीं पाई थी। दोनों की विचारधारा भिन्न थी। लेखक आदर्शवादी था जबकि उसकी पत्नी यथार्थवादी। इसलिए उसे लगता था कि शायद दोष उसकी पत्नी का नहीं है बल्कि उसका अपना ही है।

व्याख्या – लेखक सोचता है कि उसका अपना इतिहास ही उसे असामान्य बनाता है। उस का अपना सारा परिवार ही असामान्य है–कोई भी तो ठीक नहीं है। वह एक अभिशप्त परिवार से सम्बन्धित है जहां सारे लोग ही सारे लोग ही यातना, तनाव, दुःख और करुणा से भरे पड़े हैं। किसी में भी जीवन के लिए उपयोगी गुण विद्यमान नहीं हैं। सबके सब कुण्ठित हैं, अवरुद्ध विकास से पीड़ित

हैं और उनमें बीमार भावुकता भरी पड़ी है। उसके परिवार की जाति यहूदी है। वह 'सफ़र' करने वाली, हीन भावनाओं से भरी हुई कुंठित और सेंटिमेंटल है पर तीव्र बुद्धि वाली हैं उन सबमें तीव्र संवेदनशीलता है। इस परिवार में बाहर से आकर कोई भी पनप नहीं सकता, कोई भी फिट नहीं हो सकता। इसमें आकर सभी मानसिक रूप से बीमार पड़ जाएंगे। इसमें कोई नार्मल नहीं रह सकता। लेखक स्वयं को दोषी मानते हुए कहता है कि उसी ने अपनी पत्नी को मिटाया है, उसे तन–मन से कमज़ोर किया है। इसके कारण ही वह एबनार्मल बनी है। वह अपना सहज विवेक खो बैठी है। वह कुण्ठा का शिकार हो गई है।

विशेष –

1. भावुक लेखक मानता है कि उसके और उसके परिवार के व्यवहार के कारण ही उसकी पत्नी सहज व्यवहार नहीं कर पाती है।
2. भावात्मक शैली के कारण कथन में मार्मिकता का आकर्षक रूप है।
3. अंग्रेज़ी शब्दों का सहज रूप से प्रयोग है।
4. भाषा में सहज गत्यात्मकता है।
5. कथन में आकर्षक–लयात्मकता विद्यमान है।

मैंने फ़ितरत की आज्ञा की , रूह पर ज़रूरत से ज्यादा ज़ोर दिया।

मेरी रुह में उसकी रूह में कोई रोशनी नहीं फैली,उसकी रूह जितनी, सिकुड़ी, सिमटी थी वैसी ही रही। उसमें शायद जख़्म ही लगे। मैंने उस छोटी सी रूह में सिर्फ़ घाव ही पैदा किए, उसे अपने बराबर न ला सका, उसमें अपने आदर्शों की हवा न भर सका, उसे विस्तृत न कर सका।

वह रूह अब डरी हुई है। नींद में है यायद। जिस्म उस पर हावी है। रूह अब लाचार है। जिस्म भी लाचार है। वह किस दिशा में ड्रिफ्ट कर रही है––उसे इसका पता नहीं। वह जानना चाहती भी नहीं। उसमें अपने को जानने, अपने को थामने का कोई सेंटर ही नहीं।

क्या होगा ?

आगे क्या होगा ?

क्या मैं अपने को नष्ट कर देने की प्रक्रिया शुरू कर दूँ ? मैं किसको बचाऊं ––अपने को या अपनी गृहस्थी को ? मेरे नष्ट से ही मेरी गृहस्थी बचेगी ? मैं अपने को नष्ट कर दूं ?

शब्दार्थ – रूह = आत्मा । जिस्म = शरीर । हावी = आधिपत्य जमावा, प्रभाव दिखाना।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' में संकलित 'मलयज की डायरी' से लिया गया है। लेखक और उसकी पत्नी में अत्यधिक तनाव था। दोनों की विचारधारा में मूलभूत अन्तर था। पत्नी यथार्थवादी थी पर पति आदर्शवादी। लेखक भीतर ही भीतर टूट रहा था।

व्याख्या – परिवार को टूटने के किनारे देख लेखक मानता है कि उसके सम्बन्धों में बिखराव का कारण वह स्वयं है। उसने सम्बन्धों के लिए आवश्यक आधारों की अनदेखी की थी और अपने मन की बातों को ओर अधिक ध्यान दिया था। लेखक को लगता है कि उसकी आत्मा की आवाज़ ने पत्नी की आत्मा को तनिक भी प्रभावित नहीं किया था। वह पहले के समान ही सिकुड़ी–सिमटी रही थी। शायद वह जख्मी ही हुई हो––उसे कुछ अधिक कष्ट ही मिला हो। दुःख भरे स्वर में वह मानता है कि वह उसे आदर्शों की जीवनोपयोगी हवा नहीं दे सका। वह उसकी रूह का विस्तार नहीं कर सका। वह रूह अब भयभीत हैं वह नहीं जातना कि इसका कारण क्या है। शायद वह नींद में है या मानवीय शरीर उस पर हावी हो रहा है। अब रूह और शरीर दोनों ही लाचार है, परेशान हैं, पूरी तरह से विवश है। वह तो अब इस विषय में कुछ जानना भी नहीं चाहती। लेखक इस अवस्था से पूरी तरह हताश हो चुका है। वह स्वयं को अपराधी–सा मानता है और सोचता है कि क्या वह स्वयं को नष्ट कर दे, नष्ट करने की प्रक्रिया आरम्भ

कर दे। वह किसे बचाने का यत्न करे––अपने आपकों या अपनी गृहस्थी को? वह नहीं समझ पाता कि उसके या उसके परिवार के बचाव का ढंग क्या हो सकता है ?

विशेष –

1. लेखक का पत्नी से टकराहट पराकाष्ठा पर पहुंच चुकी है। उसका मानसिक द्वन्द्व भावात्मक स्तर पर प्रकट किया गया है।
2. भावानात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।
3. उर्दू शब्दावली का तत्सम और तद्भव शबदावली के साथ समन्वित प्रयोग किया गया है।
4. आत्म–संबंध का मोहक रूप है।

मैं देख रहा हूँ वह 'दूसरी' होती जा रही है––मुझसे अलग। इस अलगाव में एक घनीभूत निराशा से उपजी हुई गहराई है, एक ख़ामोशी। उसके बर्ताव में एक ठहरापन है, एक काट––जब वह नपी तुली अपने में सिमटी होती है, वह बेहद चिड़चिड़ाई हुई होती है, वह 'परिभाषित' होती हुई जा रही है, उसकी अपने ऊपर पकड़ गहरी होती जा रही है, वह अपने को पहचानने लगी है, वह मुझे पहचानने लगी है, वह मुझे दूर से मुझसे अलग रहकर देखने लगी है। उसकी दृष्टि में मुझे कसने का, मुझे परखने का तेवर है, अंदाज़ है। उसकी दृष्टि में एक बेबाकपन है।.....वह मुझसे हताश हो चली है, पूरी तरह नहीं, बस हताश होना शुरू हो चुका है, शुरू होकर काफ़ी आगे बढ़ चला है।.....

शब्दार्थ –घनीभूत = गहरी। खमोशी = चुप्पी। अंदाज = ढंग। बेबाकपन = सीधे सामने आना। हताश = निराश।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश 'मलयज की डायरी' से अवतरित किया गया है जो हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा ' में संकलित है। लेखक की पत्नी अपने यथार्थवादी स्वभाव के कारण अपने पति से और दूर–दूर होती जा रही थी। उसका स्वभाव बदल गया था। वह टूटने के कगार पर खड़ी थी।

व्याख्या – लेखक अपनी पत्नी के बदलते स्वभाव को देखकर मानता है कि अब उसमें अपनत्व का भाव नहीं रहा। वह 'दूसरी' होती जा रही है, वह परायों के समान व्यवहार करने लगी है। वह लेखक से अलग हो गई है। इस अलग होने में बहुत गहरी निराशा भरी पीड़ा है –पूर्ण रूप से खामोशी है। उसका बर्ताव ठहर–सा गया है। उसका चिड़चिड़ापन स्पष्ट रूप से देखा–पहचाना जा सकता है। अब उसको अपने ऊपर अधिक विश्वास है, ...मजबूत पकड़ है। वह अपने आपको अच्छी तरह पहचानने लगी। वह लेखक से अपने सम्बन्ध तोड़ती जा रही है,उसे दूर से ही देखने लगी हैं उसकी दृष्टि में लेखक को कसने–परखने का अलग ही अन्दाज है। उस के तेवर बदल चुके हैं। उसकी दृष्टि में अब प्रेम–शोखी–लगाव के भाव नहीं है। उसमें बेबाकपन है। वह लेखक से हताश सी हो गयी है। वह अब पूरी तरह से हताशा तो नहीं हुई पर उसकी हताशा शुरू हो चुकी है। हताशा का यह भाव समय के साथ धीरे–धीरे बढ़ता ही जा रहा है।

विशेष –

1. लेखक ने अपने टूटते रिश्तों का सजीव चित्रण किया है। उसकी पत्नी के बदलते स्वभाव की अभिव्यक्ति बड़ी मार्मिक है।
2. भावात्मक शैली का सुन्दर प्रयोग है।
3. गतिशील प्रभावशाली बिम्ब योजना है।
4. तत्सम–तद्भव शब्दावली के साथ उर्दू शब्दों का सहज प्रयोग है।
5. लेखक के कथन में मनोवैज्ञानिकता की स्पष्ट झलक हैं

प्यार का कौन सा रूप ? आदिम, उद्दाम, छलक छलक पड़ने वाला रूप। वह उसे मैं न दे सका। उसके लिए मैं स्वतः प्रस्तुत न था, पर प्रस्तुत हो सकता था, पर बीच में कोई चीज़ थी जो मुझसे उससे, प्यार के उस रूप

से विमुख करती थी। यह चीज़ कहां थी। उस पर शायद मेरे अतीत की छाया थी। शायद उस चीज़ पर कई तरह की अभिशप्त छायाएं पड़ रही थीं। इनमें एक छाया पर जब उसने कहा कि तुम्हें अब मेरा प्यार न मिल सकेगा, तब मैं भीतर से कांप गया था। नहीं नहीं, ऐसा नहीं होना चाहिए,ऐसा नहीं होगा, ऐसा नहीं हो सकता––मेरे मन में यही आया था।

प्रसंग – प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' से लिया गया है। यह अंश मलयज के द्वारा लिखित डायरी से लिया गया है। लेखक की पत्नी का उसके प्रति प्रेम नष्ट होने को था। लेखक चाह कर भी उसे रोक नहीं पा रहा था।

व्याख्या – लेखक मानता है कि वह अपनी पत्नी का मनचाहा प्रेम उसे नहीं दे पाया था। वह प्रेम का कौन–सा रूप था––आदिम, उद्दाम या छलक छलक पड़ने वाला। लेखक उसे प्रेम दे सकता था––वैसा ही प्रेम जो वह चाहती थी–पर इन दोनों के बीच कुछ था जो ऐसा करने से इसे रोकता रहा। वह क्या चीज़ थी––लेखक स्वयं नहीं जानता पर कुछ तो अवश्य ऐसा था जिस कारण वह अपनी पत्नी को वह प्यार नहीं दे सका जो वह चाहती थी। वह चीज़ क्या थी, कहां थी ? शायद उस पर लेखक के अतीत की छाया थी। जब पत्नी ने लेखक से यह कहा था कि अब उसे उसका प्यार कभी नहीं मिल सकेगा तो वह भीतर तक कांप उठा था। वह सोचने लगा था कि ऐसा नहीं हो सकता। ऐसा नहीं होगा ऐसा नहीं हो सकता। लेखक किसी भी अवस्था में अपनी पत्नी के प्रेम को अपने से दूर होने देना चाहता था। वह विवश था––उसका प्यार उससे दूर हो गया था। वह चाह कर भी कुछ नहीं कर पाया था।

विशेष –

1. लेखक ने अपने पारिवारिक जीवन के टूटने का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है।
2. मन में उत्पन्न पीड़ा के भाव का सजीव चित्रण है।
3. भावात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।
4. तत्सम शब्दावली का प्रभावशाली प्रयोग किया है।
5. भाषा में गत्यात्मकता का गुण विद्यमान है।

कष्टमूर्ति मां। पर उन्हें कष्टों की कोई संवेदना नहीं, होगी भी तो वह आत्मा के स्तर पर ही होगी, देह के स्तरों को कब का पार कर चुकी होगी। चेतना के स्तरों को भी पारकर चुकी होगी। क्या आत्मा में कोई चेतना नहीं होती। आत्मा अपने कष्टों को किस रूप में व्यक्त करती है ?

शब्दार्थ – कष्टमूर्ति = लगातार कष्ट सहने वाली। स्तर पर = स्थिति में।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी पाठ्य पुस्तक 'अभिनव गद्य गरिमा' में संकलित पाठ 'मलयज की डायरी' से ली गयी है। लेखक की माँ बीमार थी। उसे अधरंग हो गया था। उस के चेहरे पर फालिज़ के स्पष्ट चिन्ह थे। वह न तो बोल पाती थी और न ही अपनी पीड़ा को व्यक्त कर सकती थी।

व्याख्या – लेखक की सत्तर वर्षीय माँ फ़ालिज़ के कारण बहुत दुःख पा रही थी। वह अपने दुःखों को प्रकट करने का कोई तरीका भी नहीं अपना सकती थी। केवल आंखों के कभी–कभी खुलने–मुंदने या हल्की कराहट के द्वारा ही उसका कष्ट प्रकट होता था। लेखक को अपनी मां का कष्ट–मूर्ति रूप बहुत दुःख देता था। उसे लगता है कि उसकी मां को अपने शारीरिक कष्टों की कोई संवेदना नहीं होगी। उसकी वेदना आत्मा के स्तर पर होगी पर शरीर की पीड़ा से वह कब की बाहर निकल चुकी थी। फालिज़ के कारण वह शरीर की पीड़ा को अनुभव ही नहीं करती होगी। वह तो चेतना के स्तरों को भी पारकर चुकी होगी। लेखक प्रश्न करता है कि क्या आत्मा में कोई चेतना नहीं होती ? आत्मा अपने कष्टों को किस प्रकार व्यक्त करनी होगी ? लेखक के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं है।

विशेष –

1. लेखक ने अपनी मां की पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। जिससे उसकी मां के प्रति स्नेह–भाव प्रकट होता है।

2. सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

3. तत्सम शब्दावली का भावानुरूप प्रयोग है।

4. भाषा का सरल और बोधगम्य रूप है।

खण्ड ग : मलयज

साहित्यिक परिचय

मलयज आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित हस्ताक्षर हैं। जिन्होंने अपने साहित्य के द्वारा मध्यवर्गीय परिवारों में रहने वाले लोगों की मानसिकता को बड़ी सहजता से वाणी प्रदान की थी। इनका जन्म 15 अगस्त, 1935 ई॰ में महुई नामक गांव में हुआ था। इन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा इलाहाबाद में प्राप्त की थी। इनका जीवन आर्थिक अभावों से घिरा हुआ था। इन्होंने सन् 1963 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम॰ ए॰ की उपाधि प्राप्त की थी। जीवनयापन के लिए इन्होंने अनेक प्रकार के कार्य किए थे। इन्होंने केन्द्रीय कृषि और सिंचाई मंत्रालय के विस्तार निदेशालय में छपने वाली अंग्रेजी पत्रिकाओं के सहसम्पादक के रूप में कार्य किया। कुछ समय के लिए इन्होंने स्वतंत्र रूप से विद्यार्थियों को पढ़ाने का कार्य भी किया। पत्र–पत्रिकाओं के स्तम्भ–लेखक के रूप में कार्य करने के साथ–साथ ये अनुवाद कार्य भी किया करते थे। ये आकाशवाणी केन्द्रों के लिए बालोपयोगी नाटकों को रचने में सहायता करते रहे। इन्होंने 'पूर्वग्रह' नामक पत्रिका के सम्पादन कार्य में भी कुछ समय के लिए सहयोग दिया। नई कविता के प्रति इनके मन में विशेष आकर्षण था। कुछ समय तक इन्होंने इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'परिमल' के लिए भी कार्य किया। इन्होंने पोलिश भाषा का ज्ञान प्राप्त किया था। चित्रकला और फोटोग्राफी में इन्होंने शोकिया सिद्धहस्तता प्राप्त की थी। मलयज का तपेदिक से देहावसान 26 अप्रैल, 1982 को हो गया था।

रचनाएँ :

(क) काव्य–संग्रह – जख्म के फूल, अपने होने को प्रकाशित करता हुआ।

(ख) आलोचनात्मक–कविता से साक्षात्कार, संवाद और एकालाप

(ग) सम्पादित – शमशेर (सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के साथ)

(घ) डायरी–डॉ॰ नामवर सिंह द्वारा तीन खण्डों में सम्पादित

(ड) सृजनात्मक गद्य – हंसते हुए मेरा अकेलापन

साहित्यिक विशेषताएँ :

1. **वैयक्तिकता** – मलयज का साहित्य वैयक्तिक भावना से भरा पड़ा है। प्रायः हर व्यक्ति में वैयक्तिकता विद्यमान होती है। पर मलयज में इसकी प्रतिशत मात्रा कुछ अधिक है। वह स्वयं को कमज़ोर अनुभव करता है। अपने आप को असहाय मानने के कारण वह दूसरों को सहारे के रूप में प्राप्त करना चाहता है पर सदा ऐसा कर न पाने के कारण भीतर ही भीतर टूटता है और व हीन भावना से भरता चलता गया। वह स्पष्ट रूप से इसे स्वीकार करता है, ''जलने की धू–धू आवाज़ आ रही है। मेरे अस्तित्व से जैसे कुछ छिटक कर खुरच कर गिर पड़ा है और यथार्थ का एक नया खौफनाक चेहरा मेरे सामने उभर आया है । जो जल रहा है वह भीतर। बाहर से मकान पर वही मुर्दगी और समय की ऊब लिपटी पड़ी है। भीतर की सब चीज़ें चटख–चटख टूट रही हैं।''

2. **संवेदनशीलता** – मलयज अति संवेदनशील हैं। वह अन्तर्मुखी है। यही उनके साहित्य में प्रकट हुआ है। इसे वह अपनी नियति मानता है जिसे बदलने की क्षमता उसमें नहीं है। लेखक स्वयं मानता है है कि संवेदनशीलता एक Tragic Flaw है पर फिर भी वह इससे छूट नहीं पाता– ''मेरे साथ बहुत बुनियादी रूप से––अस्तित्व के गहनतम धरातल पर–कुछ ग़लत घटित हो गया है और मैं उस ग़लत का सही नहीं बना सकता, न उसे दरगुजर कर सकता हूँ, हाँ गाहे–व –गाहे अपनी आंखों में धूल ज़रूर झोंक सकता हूँ। इस क्षण के गुजर जाने के बाद आने वाला कल–कई कलों का कल–मुझ से

इस क्षमा का 'तथ्य' मांगेगा, तथ्य के ब्योरे की डिटेल मांगेगा, इस क्षण का दृश्य पर.....पर मैं उस 'तथ्य' को अंकित करने की स्फूर्ति नहीं महसूस करता। वह चाकू जैसा तेज़ है और उस पर खून के निशान हैं।''

3. **मध्यवर्गीय परिवारों के प्रति संवेदना** – लेखक स्वयं मध्यवर्गीय था इसलिए इस वर्ग के सुख–दुःखों से भली–भांति परिचित था। उसके साहित्य में मध्यवर्ग के लोगों से जुड़ी विभिन्न समस्याओं का सटीक चित्रण किया गया है। पैसे का अभाव रिश्ते–नातों को निगल जाता है, प्यार का भाव मिट जाता है––''कल उसने दस बरसों के सब सम्बन्ध नंगे कर डाले। एक पतली झिल्ली जो मढ़ी हुई थी इन संबंधों के ऊपर उसे उतार कर फेंक दिया।

मकान, गहने, बैंक बैलेंस.....सुरक्षा।

इनमें से कुछ भी मुहैया न कर सका उसके लिए। सब संबंध इस कसौटी पर आकर झूठे नकली सिद्ध हो गए।''

4. **निराशा और वेदना की महत्ता** – लेखक की स्थितियों ने उसे घोर निराशा और वेदना प्रदान कर दी है। जिस कारण वह शब्दों में भी डरा–डरा सा दिखाई देता है। इस स्थिति ने उसे पलायनवादी बना दिया है। उसे सदा यही लगता रहता है कि शेष कुछ नहीं बचा, बाकी कुछ नहीं रहेगा––''मन तमाम प्रकार की अप्रिय कल्पनाएं करने लगता है। फिर अनायास ही प्रार्थनाएं, समय बीतते जाने का अहसास नसों में घड़धड़ की आवाज़ की तरह गूंजने लगता है। प्रतीक्षा का डर। फिर जब लगता है कि प्रतीक्षा की कड़ी बीत गई, समय गुजर गया, तब बाहर वाला आदमी लौट आता है, सही–सलामत और नसों का तनाव दिल की कई धड़कनों के साथ छूट जाता है।''

5. **जीवन के विघटित मूल्यों का चित्रण** –– जीवन–मूल्य बड़ी तेजी से बदल रहे हैं। मानव–मानव दूर हट रहा है, रिश्ते बिखर रहे हैं। भौतिकतावाद का बोलबाला विघटन और दूरियों का मूल कारण बन गया है। पति–पत्नी का प्रेम आर्थिक धागों में पिरोया जाने लगा है। इन्सान अपने सुखों को महत्वपूर्ण मानने लगा है। लेखक की मां तिल–तिल कर मर रही थी, पर उसके पिता उसी के कमरे को ड्राईग रूप में बदलने और उसे अपने ढंग से सजाने–संवारने की तैयारी कर रहे थे। उन्हें एक नई आजादी अनुभव हो रही थी, वे स्वयं को तनाव मुक्त महसूस कर रहे थें माँ की बीमारी की वजह से वे स्वयं को बंधा–बंधा सा महसूस करने लगे थे। लेखक की पत्नी बदलते जीवन–मूल्यों के कारण ही उसे त्याग गई थी–''इस संबंध में मैंने एक तेज़ाबी तल्खी पाई, विश्लेषण का चाकू, फुलावट नहीं जिसमें मैं अपने अच्छे–बुरे रंग घोल दूं। इस संबंध में रहते हुए मैंने अपने को घटाया है, अपने में जोड़ा नहीं, मैं छोटा बना हूँ, बड़ा नहीं।''

6. **भाषा–शैली** –– मलयज श्रेष्ठ भाषा–शिल्पी हैं। उसके पास भावना है। उसने इन दोनों का संयोग कर आकर्षण से परिपूर्ण साहित्य की रचना की है। सामान्य तत्सम–तद्भव शब्दावली के साथ अंग्रेज़ी और उर्दू शब्दावली का प्रयोग उसके शिल्प में सहज रूप से आए हैं। मुहावरे–लोकोक्तियों का प्रयोग नाममात्र का ही किया गया है। भावनाओं की अधिकता के कारण वाक्य–संरचना में नाटकीयता मिल गई है।

निश्चित रूप से मलयज का साहित्य हिन्दी साहित्य में मील का पत्थर प्रमाणित होगा।

खण्ड घ : आलोचनात्मक प्रश्न

प्रश्न 1 'मलयज की डायरी' के आधार पर साहित्य के समकालीन परिदृश्य पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर 'मलयज की डायरी' हिन्दी साहित्य की नई विधाओं में एक सुन्दर नमूना है। यह समकालीन परिदृश्य को प्रकट करने का एक माध्यम है। गांधी युग में विभिन्न लेखकों ने डायरी शब्द के कुछ अन्य पर्यायवाची शब्दों के द्वारा अपने भावों को प्रकट किया था। इसके लिए दैनिकी, दैनंदिनी, रोजनामचा, रोजनिशी आदि नाम भी प्रयुक्त किए गए थे। काला कालेलकर ने इसके लिए 'वासरी' या 'वासरिया' नाम भी दिए थे। डायरी के रूढ़ अर्थ के अतिरिक्त हिन्दी साहित्य में अन्य विधाओं का साहित्य भी ग्रहण किया गया है। हिन्दी के अनेक समर्थ और सशक्त लेखकों ने डायरी के आधार पर आत्मकथा, संस्मरण, कहानी, उपन्यास, ललित निबंध, रिपोर्ताज आदि की रचना की है जिसमें समसामयिक इतिहास, साहित्य और जीवन का सफल विश्लेषण हुआ है। ऐसी रचनाओं में तिथिवार आदि का निर्देश, जो डायरी का महत्त्वपूर्ण लक्षण है, उन कृतियों को यथार्थता , नवीनता और सजीवता प्रदान करता है। डायरी में जो आत्मकथा, तथ्यात्मकता, सत्य, वैयक्तिकता आदि के गुण विद्यमान होते हैं वे सब उन घटनाओं में भी प्रकट होते हैं जो लेखक निजी जीवन से जुड़कर प्रस्तुत करते

हैं। मन के भावों को लिपिबद्ध कर डालने की जो आकुलता लेखकों में होती है वह डायरी ही नहीं बल्कि साहित्य की अन्य विधाओं को प्रस्तुत करने में भी प्रकट होती है। हिन्दी में इस डायरी शैली की अनेक रचनाएं प्रकाश में आई हैं। इस शैली में उपन्यास, कहानियां, संस्मरण, रिपोर्ताज और आत्मकथात्मक रचनाएं आधुनिक काल में दिखाई देती है। राहुल सांकृत्यायन के संस्मरणात्मक यात्रा वर्णन' यात्रा के पन्ने', इलाचंद्र जोशी के संस्मरण 'मेरी डायरी के नीरस पृष्ठ', डॉ॰ देवराज का उपन्यास, 'अजय की डायरी' विश्वंभर मानव का उपन्यास 'पीले गुलाब की आत्मा', सज्जन सिंह का 'प्रवास वर्णन' लद्दाख यात्रा की डायरी,रावी की चरितकृति, 'एक बुकसेलर की डायरी', अमृतलाल नागर का रियर्योताज 'गदर के फूल', जगदीशचन्द्र जैन का रिपोर्ताज, 'पैकिंग की डायरी' आदि विभिन्न सहित्यिक विधाएं डायरी शैली में ही रचित है। काशी के प्रसिद्ध 'आज' में 'मन बोध मास्टर की डायरी' नाम से निबंध छापे जाते रहे हैं। इन का संकलन 'राज्यपाल की डायरी से' नाम से छपा है। इन सभी रचनाओं में तिथि मास, वर्ष आदि का उल्लेख कल्पित अथवा वास्तविक है। मलयज ने अपनी डायरी में वास्तविक दिन, तिथि, वर्ष आदि का उल्लेख किया है। उसमें कल्पना नहीं, भावुकता अवश्य है। उसने सच्चाई के चेहरे को पहचानने की चेष्टा की है। 'मलयज की डायरी' से पहले ही हिन्दी में ऐसी साहित्यिक कृतियां आ गई थीं जो इस जैसी थी पर उनका रूप, विषय आदि भिन्न था। शमशेर और अज्ञेय के माध्यम से मलयज ने अपने युग के साहित्य को अपनी डायरी में स्थान देने की चेष्टा की है।

प्रश्न 2. 'मलयज की डायरी' की सोद्देश्यता को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर 'मलयज की डायरी' एक सोद्देश्यपूर्ण रचना है जिसमे लेखक ने एक नहीं अपितु अनेक उद्देश्यों को प्रतिपादित किया हैं उसने इसके माध्यम से अपने अंतरंग भावों और संदर्भों को वाणी प्रदान की है जिन्हें निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. **पति–पत्नी के संबंधों का अंकन** ––मलयज ने अपनी डायरी के माध्यम से अपने वैवाहिक संबंधों को प्रकट किया है। लेखक संवेदनशील व्यक्ति था उसकी पत्नी यथार्थवादी थी इसलिए दोनों के बीच ऐसा तनाव हुआ जो संबंध विच्छेद का कारण बना। लेखक इसके लिए चाहे स्वयं को जिम्मेदार मानता है पर उसकी पत्नी का स्वार्थ भरा स्वभाव अवश्य इसके लिए जिम्मेदार प्रतीत होता है। लेखक को ही इस संबंध विच्छेद का कारण नहीं माना जा सकता। वह भावुक अवश्य है पर संबंधों में धोखा देने वाला नहीं है। वह लिखता है––

   ''कोई रासायनिक परिवर्तन उसमें घटित हो रहा है, यह मैं महसूस करता रहा था।

   मैं उसे उतना समय न दे पाया जितना मुझे देना चाहिए था। मेरे पास समय कम था और मैं सबका सब उसे नहीं दे सकता था। मैं उसके समय में प्रवेश नहीं कर सकता था, वह मेरे समय में प्रवेश करने को तत्पर न थी।

   छायाओं की परतें, कई परतें.....।

   मैं उसकी मुखर चेतावनियों को सुन सकता था, पर मेरी मौन चेतावनी उसे सुनाई न पड़ती थी।

   क्या वह सही है–कि उसे साथी चाहिए था और मुझे सहारा ?

   चोट से खून जम गया है। एक जगह थक्का सा। जब तक वह न पिघले क्या कुछ लिखा जा सकता है ? और

   लिखने की ज़रूरत भी क्या ? लिखने से होगा क्या ? क्यों मैं ऐसे क्षणों में इस नोटबुक को उठाता हूं ?''

2. **मित्र के प्रति स्नेह भाव** – लेखक का अपने मित्र शमशेर के प्रति स्नेह भावपूर्ण रूप से स्पष्ट दिखाई देता है। उसकी ममेरी बहन मुन्नी के बीमार हो जाने पर लेखक भी उतना ही दुःखी और असहाय प्रतीत होता है जितना शमशेर। शमशेर के द्वारा दिए गए भाषणों से प्राप्त सफलता लेखक को भी अपार प्रसन्नता देती है। उनमें आने वाला हर परिवर्तन लेखक को प्रभावित करता है। शमशेर ने दाढ़ी बढ़ाई पर उसका प्रभाव लेखक पर भी पड़ा––

   ''शमशेर जी की दाढ़ी जैसे जैसे बढ़ती जा रही है उनकी आकृति में जैसे उनकी शमशेरीयत कम होती जा रही

है। जिस क्लीनशेव्ड चेहरे से इतने सालों तक परिचय रहा उसमें यह मुस्तकिल किसम की बनती जा रही दाड़ी अजनबी लगती है ओर अजनबियत को ही शह देती हैं लगता है शमशेर जी के अब सब हाव–भाव , हरकतें, व्यवहार, बोलचाल उनकी दाढ़ी के इशारे पर हो रहे हैं। दाढ़ी उन पर छाती जा रही है। उनके बुढ़ापे की पैदावार यह दाढ़ी उम्र में इतनी छोटी है कि उनके अब तक के देखे जीवन की इमेज़ के साथ बेतुका मज़ाक सा करती लगती है। कुछ भी कहिए, आप शमशेर जी को उनकी दाढ़ी के खाने में फिट नहीं कर सकते। न उनकी दाढ़ी ही उन्हें आने खाने में फिट कर सकती है। शमशेर जी की दाढ़ी अनमेल विवाह की तरह ही है।''

3. **मातृ–प्रेम का उद्‌घाटन** –– लेखक को अपनी मां से लगाव था पर वह उसे प्रकट नहीं कर पाता था। वह स्वयं को खुलकर प्रकट करने की क्षमता नहीं रखता था। वह उसकी बीमारी की अवस्था में सेवा करता था, करना चाहता था पर उसे प्रकट नहीं कर सकता था। मां के चेहरे का एक–एक भाव उसे प्रभावित करता था। वह सहमा हुआ–सा लिखता है––

''कल मैंने फिर मां ! मां ! की आवाज लगाकर मां को सुनाने और बुलाने / बोलवाने की कोशिश की । बाबू जी ने कहा बेकार है ! मां अब आवाज़ों के पार जा चुकी हैं। कराह की कभी –कभी एक दुबली सी आवाज, एक घरघराहट, गले में कुछ फंसने की फंसफंसाहट––बस। पर चेहरे पर हरकत है। आंखें खुलती और बंद होती हैं। मुंह खुलता और बंद होता है। और जल्दी–जल्दी वर्ना छाती सांस चलने का आभास देती रहती हैं। मां हड्डियों का पुंज रह गई हैं। चेहरे की हड्डियां भी उभड़ आई हैं। कपाल, गाल और ठोढ़ी की हड्डियां। माथे की नसें भी उभर आई हैं। मुंह के नीचे का हिस्सा सिकुड़ गया है।

पर मां के बाल अब भी कितने काले हैं। सत्तर बरस की होने को आई, पर बाल इस कदर स्याह जैसे पैंतीस–चालीस की स्त्री के। मुन्ना ने कल पीछे के बालों की कई लटियाई हुई फुनगियां कैंची से काटीं..... .....कपड़े बदले .....अब मां को नहलाना असम्भव है। कलाइयां पतनी–पतली..... बेहद पतली कि कहीं इंजेक्शन न लगाया जा सके.....इतनी पतली कि कहीं खून या ग्लूकोस डालने के लिए सुई भी न चुभोई जा सके..... । पेट की चमड़ी की मोटी परत मां से अलग। धारीदार, पत्थर पर खुदी हुई फॉसिल की तरह लगती है, प्राचीन भित्तिचित्र की तरह, रेगिस्तानी बालू पर पड़ गए धरीदार निशानों की तरह.....ये सब मां के शरीर पर खुदे हुए गोदे हुए तथ्य हैं, तथ्य, कष्ट के और पीड़ा के तथ्य..... .....एक खामोश ज़िन्दगी में सब कुछ चुप बर्दाश्त करने के तथ्य.....''

4. **संवेदनशीलता और भावुकता का प्रदर्शन** –– लेखक प्रायः भावुक होते हैं। उनकी संवेदनशीलता ही उन्हें समान्य स्वभाव वालों से अलग करती है। लेखक को अपने परिवार से विशेष लगाव है पर वह उन्हें प्रकट नहीं कर पाता। बस इस विषय में सोचता है , कुछ कर नहीं पाता, उसे ऐसा लगता है कि पति–पत्नी के वैवाहिक जीवन में विफलता का कारण वही है जबकि कभी भी एक हाथ से ताली नहीं बजती। भावुकता के कारण ही उसकी पीड़ा बढ़ती जाती है। वह तो अपनी पत्नी के द्वारा कहे गए एक–एक शब्द का पालन करना चाहता है––

''जलने को मैं अनुभव में सिर्फ़ सुन सकता हूं, शब्दों में देख नहीं सकता। देखने के प्रयत्न में ताप से मेरी आंखें मुंद जाती हैं।

एक नींद। मुझे जलते हुए घर में नींद आ रही है।

'डायरी में कुछ न लिखना', उसने चलते समय कहा था। एक याचना––यह याचना किसलिए ?

क्या उसे अब भी उस तस्वीर के बनने से खौफ़ होता है जो मैं शब्दों से बनाता हूं ?

या इस याचना में एक हल्का, अपराध बोध और क्षमा की मुहिम है।

मेरे पास शब्दों के अलावा और क्या कुछ भी नहीं ?''

संवेदनशीलता के कारण ही लेखक को अपने पिता का व्यवहार भी तब अच्छा नहीं लगता जब वे मां की मौत के शीघ्र बाद उसी कमरे को सजाने संवारने की सोचने लगते हैं।

प्रश्न 3 डायरी के मानक तत्त्वों के आधार पर मलयज की डायरी की समीक्षा कीजिए।

उत्तर 'डायरी' नव्यतर विधा है जिस के विभिन्न तत्त्वों को निर्धारित किया गया है। वें हैं––वैयक्तिकता, स्वानुभूति, सहजता, स्पष्टता, सरलता और समसामयिकता। इन आधारों पर मलयज की डायरी की विवेचना की जा सकती है––

1. **वैयक्तिकता** – डायरी का प्रमुख तत्त्व ही वैयक्तिकता है। व्यक्ति अपने जीवन के सभी सुख–दुःखों को अपनी डायरी में लिखकर स्वयं को कुछ हल्का महसूस करता है 'जो व्यक्ति अर्न्तमुखी स्वभाव के होते हैं वे अपने मन के भावों को किसी से कह नहीं पाते। वे उन्हें लिख लेते हैं। मलयज अति संवेदनशील, भावुक और अन्तर्मुखी व्यक्तित्व का स्वामी था। वह सबके सामने खुल नहीं पाता था, उसने स्वयं लिखा है–''मेरे स्वभाव में कंजूसी थी––न अपना मन बांटने की इच्छा न अपनी गांठ––बच्चों के लिए जाते समय हथेली पर रखे कुछ औपचारिक रूपये भर थे।' लेखक अपी पीड़ा को प्रकट नहीं कर पाता था लेकिन उसे लिख कर वैयक्तिक भावों को व्यक्त कर सकता है। अपनी पत्नी से भी जिन भावों को वह कह न सका, वह उन्हें लिखकर प्रकट कर सका था––''मैं अपने को क्षण क्षण बब्रद हुआ देखने के और क्या कर सकता हूं। मेरे पास जो भाषा है उसे समझने के लिए उसके पास जक्षर–ज्ञान नहीं। कोई सार्थक मानवीय सम्बन्ध सम्भव नहीं ? देह के आकस्मिक रिश्ते के अलावा कुछ भी सम्भव नहीं ? .....

   इमोशन का स्थान ऐक्जायटी ने ले लिया है। ऐक्जायटी छुपकर–भीतर से – तोड़ती है। इमोशन बाहर अभिव्यक्त होता है, अतः पवित्र, मासूम है।

   हमारे संबंध इकहरी बाट के बने हैं अतः झांझर।

   इस संबंध में मैं अपने को पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं दे सका। जब कोई अपने को पूर्ण अभिव्यक्ति न दे सके तो वह अभागा होता है। इस संबंध में मैने एक तेज़ाबी तल्खी पाई, विश्लेषण का चाकू, घुलावट नहीं जिसमें मैं अपने अच्छे–बुरे रंग घोल दूं। इस संबंध में रहते हुए मैंने अपने को घटाया है, अपने में जोड़ा नहीं, मैं छोटा बना हूं, बड़ा नहीं। इस संबंध में जीते हुए मैं बंधा हूं, मुक्त नहीं हुआ हूं––मुक्त नहीं हुआ हूं––इसमें मैं दायित्व से भी बंधा हूं और आत्मा से भी। मैं इस संबंध में सांस लेते हुए न अपने दायित्वों को अलग फेंक सकता हूं न अपनी आत्मा को मुक्त कर सकता हूं।''

2. **स्वानुभूति**––डायरी में लेखक ने द्वारा जीवन का भोगा गया हर पल प्रकट होता है। वह अपने दुःखों को वाणी देता है, मुस्कान को प्रकट करता है, हृदय का रोदन व्यक्त करता है। शमसेर के आने पर उसे अच्छा लगता है :मुन्नी के बीमार पड़ने पर बुरा लगता है और पत्नी से अलग होना उसे तोड़ डालता है। वह संवेदनशील होने के कारण हर बात को अधिक गहराई से सोचता है। पत्नी का अपने आप में डूब जाना उसे सहन नहीं होता––

   ''लिखने की हर चेष्टा के पीछे क्या हमेशा अपने को परिभाषित करने का ही मोटिव होता है ? क्या हर लिखावट अंततः अपने लिए नहीं है–बतौर एक आईने के ?.....

   कल उसने बरसों के सब संबंध नंगे कर डाले। एक पतली झिल्ली जो मढ़ी हुई थी इन संबंधों के ऊपर उसे उतार कर फेंक दिया।

   मकान, गहने, बैंक बैलेंस.....सुरक्षा।

   इनमें से मैं कुछ भी मुहैया न कर सका उसके लिए। सब संबंध इस कसौटी पर आकर झूठे नकली सिद्ध हो गए।

   उससे कोई संवाद नहीं हो सकता। वह कुछ भी नहीं समझ सकती। इस तनाव–प्रसंग के बाद वह मजे से टी॰ वी॰ देख रही थी।''

3. **सहजता और स्पष्टता**––डायरी में हर अच्छी बुरी बात सहज रूप से प्रकट कर दी जाती है। अपने आपको अकेले पन में प्रकट करना किसी प्रकार से लेखक को डराता नहीं है, उकसाता नहीं है इसलिए उस लेखन में सहजता और स्पष्टता अपने आप आ जाती है, कलयज का चाहे अपनी पत्नी से अच्छा सम्बंध नहीं था पर फिर भी उसने उसे बड़ी सहजता से लिख कर प्रकट किया––कभी उसे बुरा–भला नहीं कहा। अपने दस वर्ष के वैवाहिक जीवन का अन्त सहजता से स्वीकार किया। अपनी मां की बीमारी को झेला , उसकी मौत को देखा और सहज रूप से लिखकर प्रकट कर दिया। उसका दुःख भी सहज भाव से व्यक्त हुआ है––

शव–वाहन में जिस पटरे पर मां की अर्थी रखी थी वह गाड़ी के धचकने से हिल हिल जाती थी, एक खड़–खड़ होती थी, और अर्थी पर से फूलों में से एक–दो नीचे गिर पड़ते थे। सड़कों पर दौड़ती हुई यह गाडडी लोगों में सहज की एक कौतुक जगाती थी, यह मैं देख रहा था गाड़ी के भीतर बैठा बाहर शीशे में दिखते जाते दृश्यों से। हम सात जने गाड़ी के भीतर बाहर वालों की नजरों के भीतर बैठा बाहर शीशे में दिखते जाते दृश्यों से। हम सात जने गाड़ी के भीतर बाहर वालों की नजरों में एक क्षणिक जिज्ञासा पैदा करते होंगे।

मां ने क्या कभी सोचा होगा कि उनकी अंतिम यात्रा मानव–कंधों पर न होकर मोटरगाड़ी के टायरों पर होगी।

4. **सरलता**––डायरी में लिखी गई हर बात अति सरल ढंग से प्रकट कर दी जाती है। उसमें न तो शब्दों का आडम्बर होता है और भावों का बोझ। मन में उत्पन्न भाव अति सरल ढंग से व्यक्त होकर मन को हल्का कर देते हैं और डायरी पढ़ने वाले को लेखक के मन से जोड़ देते हैं। मलयज की डायरी पूरी तरह से सरल है।

5. **समसामयिकता**–– डायरी में लेखक का वर्तमान छिपा रहता है। वह अपने युग से पूरी तरह जुड़कर हर बात को बड़े आराम से प्रकट कर देता है। अतीत को भी वह वर्तमान में लाकर प्रकट करता है। मलयज ने शमशेर, अज्ञेय, अपनी पत्नी, मां, पिता का व्यवहार ––सब प्रकट किया है। उसने उनके साथ जिया हुआ समय प्रकट किया है। अफने समय को समझा है और उसे व्यक्त किया है।

वास्तव में मलयज की डायरी अपने में निहित गुणों के कारण सभी ऐसे तत्त्वों को भीतर समाहित किए है जो इसके लिए आवश्यक थे।

प्रश्न 4 मलयज की भाषा–शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर मलयज की भाषा–शैली अत्यन्त सरल, सरस और भावपूर्ण है। अपनी विशिष्टता के कारण हिन्दी–साहित्य में इसे विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ है। इसकी भाषा–शैली से सम्बन्धित प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है––

1. **सहज भाषा**–– कलयज की भाषा पूर्ण रूपब से आडम्बर विहीन है। उसमें खड़ी बोली का प्रयोग है लेकिन किसी विशेष प्रकार के शब्द–प्रयोग के प्रति कहीं भी आग्रह नहीं है। तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों का सही और भावानुकूल प्रयोग किया गया है। उसकी भाषा में कहीं भी अलंकरण और सजावट के प्रति मोह नहीं है।

2. **मुहावरों का प्रयोग**–– मलयज ने डायरी लिखते समय मुहावरे–लोकोक्तियों का प्रयोग नहीं किया जिस कारण वह लाक्षणिकता के बोझ से बच गये हैं। डायरी से स्पष्ट बयानी महत्त्वपूर्ण होती है, हर भाव को ज्यों का त्यों प्रकट करना जरूरी होता है और लेखक ने ऐसा ही किया है। उसने भावों को मुहावरों के बोझ से भारी नहीं होने दिया। अंग्रेज़ी की लाक्षणिकता कहीं–कहीं अवश्य दिखाई देती हैं–– I have sinned More by act of omission than by act of commission.

3. **भावात्मक शैली**––मलयज की डायरी में सर्वत्र भावात्मकता विद्यमान है। लेखक ने अपने डायरी में सगे–सम्बन्धियों और मित्रों का ही वर्णन किया है। वह कहीं भी भावों के सागर से बाहर नहीं निकला। उसका भाव भरा हृदय सदा उसे कोमलता और मार्मिकता की तरफ खींचता रहा––''लगता है मां को एक और दौरा पड़ा है। इस बार दाएं अंग पर असर हुआ है। इसी से मुख भी विकृत है। बाएं हाथ–पैर की हरकत ही बंद हो गई है। मुंह से कोई आवाज़ नहीं निकलती। केवल आंखें अधखुली और कभी–कभी पूरी खुल जाती हैं। उनमें कोई दृष्टि नहीं, कोई पहचान नहीं। बुलाने पर आंखों की पलकें थोड़ा कंपकंपाती हैं, बस आवाज़ कोई नहीं। कल बाबूजी ने कहा हमें मानसिक रूप से तैयार रहना चाहिए।''

4. **संरचनात्मक रूप** –– लेखक ने प्रवाहमयी वाक्य संरचना की है। इससे उसके भावों को सर्वत्र सहजता से प्रकट होने में छूट मिली है। वाक्य सरल भी है और जटिल भी। कहीं–कहीं उनमें नाटकीयता की सृष्टि करने की भी चेष्टा की गई है पर यह चेष्टा प्रयत्न पूर्वक नहीं है बल्कि सहज रूप में अपने आप ही हो गई है।

वास्तव में मलयज की डायरी भाषा और शिल्प की दृष्टि से पूर्ण रूप से सफल है।